

॥ ३५ नमः शिबेभ्यः ॥

प्रतिष्ठासार संग्रह

(पंचकल्याणकदीपिका हिन्दी छन्द सहित)

सम्पादक व सम्प्रहर्ता - स्व० ब्र० सीतलप्रसादजी ।

(समग्रसार, प्रवचनसार, प्रवृत्तिस्तकात्र, निग्रमसार, इष्टोपदेश आदि

अनेक आध्यात्म ग्रन्थोंके टीकाकार)

प्रकाशक.—मूलचन्द्र किसनदास कापडिया, मालिक दिगम्बरानन्दविभूतिशुक्ल, गांधीचौक-सूरत

द्वितीयावृत्ति]

वीर स० २४८८, विक्रम सं० १९१०

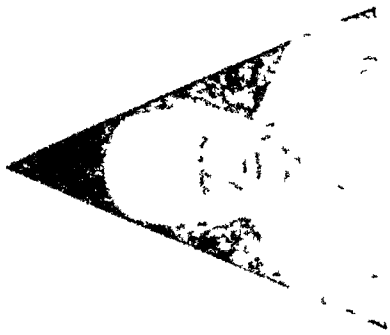
मूल्य रु० ५०-००, * १२-०० *
मुद्रित.

[प्रति ५००

“ जैन विजय ” प्रिन्टिंग प्रेस-सूरतमें मूलचन्द्र किसनदास कापडियाने मुद्रित किया ।

निवेदन ।

स्व० जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारीजी श्री सीतलप्रसादजीने वीर सं० २४५३ में खण्डवामे चातुर्मास किया था तब आपने वहाँ ठहरकर इस "प्रतिष्ठासार सग्रह" की रचना की थी। फिर इसके प्रकाशनके लिये खण्डवाकी धर्मपरायण पंचायतने चन्दा करके यह ग्रन्थ अपने खर्चसे प्रकाशित करवाकर इसे "जैनमित्र" साप्ताहिक पत्रके २९ वे वर्षके ग्राहकोंको वीर सं० २४५५ मे भेंटस्वरूप बटवाया था। उस समय हमने २०० प्रतिष्ठां विक्रयार्थ अधिक निकाली थीं जो अल्प समयमे ही बिक जानेसे आज २५ वर्षसे यह प्रतिष्ठा पाठ नहीं मिलना था और इसकी सांग तो आती हो रहता थी, क्योंकि इसमे पंचकल्याणक प्रतिष्ठा निधि हिन्दी अर्थ व हिन्दी कवितामे भी तैयार की गई है। इससे यह स्वाध्याय योग्य भी है व घर बैठे इसे स्वान्याय कर एक प्रतिष्ठा देखनेका परोक्ष लाभ मिल सकता है।



इसकी बहुत सांग आने पर भी दुःख है कि हम दूरमे प्रकाशनके कारण इसे पुनः प्रकट नहीं कर सके थे। लेकिन अब सुल्भ प्रतिष्ठापाठकी आज हम दूसरी आवृत्ति प्रकट कर रहे है जो शाखाकार ही रखी गई है।

यह शास्त्र स्वाध्याय करनेयोग्य भी होनेसे यह प्रत्येक मन्दिरमे रखनेयोग्य है तथा प्रतिष्ठाकारक प्रतिष्ठाचार्यके लिये तो यह अतीव उपयोगी है। स्व० पूज्य ब्रह्मचारीजीने इसकी रचना खण्डवामें ४-५ मासमें रातदिन परिश्रम करके ही तैयार की थी जो अतीव उपयोगी बन गया है।

अतः जहाँ २ यह प्रतिष्ठा शास्त्र न हो अवश्य २ मगा लेना चाहिये और प्रतिष्ठाके लिये व स्वाध्यायके लिये इसका उपयोग करना चाहिये।

स्व० व सीतलप्रसादजी लिखित इस शास्त्रकी भूमिका जैसीकी तैसी दी गई है।

निवेदक—

वीर सं० २४८८ सं० २०१९

खरत,
ता० २७-४-६२.

मूठबन्द किसनदास काशीप्रिया,

प्रकाशक।



परमात्म अहम् प्रभु, सिद्ध शुद्ध सुखदाय ।
आचारज उपध्याय सुनि, वन्दूं मस्तक नाय ॥

साधारण जैन जनता विना दूसरोके आलम्बनके श्री बिम्ब, मन्दिर व वेदी प्रतिष्ठा कर सके इसलिये यह सुगम प्रतिष्ठाविधि संग्रह करके लिखी गई है। इसमें ध्यान यह रक्खा गया है कि देखनेवालोंको ऐसा विदित हो कि मानो हम साक्षात् तीर्थंकरके जीवनचरित्रको ही देख रहे हैं। तथा जितना पूजन पाठ आवश्यक है वह रक्खा गया है। इसके संग्रहमें श्री जयसेन, आशाधर तथा नेमिचन्द्र इन तीन सुद्वित प्रतिष्ठापाठोकी सहायता ली गई है। इस पाठके सद्गुरेसे वह कठिनाई मिट जायगी जो प्रतिष्ठा करानेवाले पढितोकी खोजमें होती है। तथा कोई २ पढित लोभवश यजमानोको बहुत तग करते हैं तथा कोई २ यजमानोके कहे अनुसार समयकी तगीसे बहुतसी विधि छोड़ देते है व पूजापाठमें कमी कर देते है, वह सब त्रुटियें निकल जायगी।

इस पुस्तकमें पंचकल्याणकके दृश्य श्री जिनसेनाचार्यकृत महापुराणके अनुसार दिखाये गये है। श्री जयसेन आचार्यकृत प्रतिष्ठापाठ सबसे पुराना है तथा उसकी रचना देखनेसे विदित होता है कि यह आचार्य आभ्यात्मरसिक व ध्यान तपमें लीन तपस्वी थे। इनका दूसरा नाम वसुविंद था। प्रशस्तिमें उन्होने अपनेको श्री कुन्दकुन्दाचार्यका शिष्य लिखा है; जैसा इस श्लोकसे प्रगट है—
कुन्दकुन्दाग्रशिष्येण जयसेनेन निर्मित । पाठोऽय सुधियां सम्यक् कर्तव्यावास्तु योगेत् ॥ २२३ ॥

इसलिये यह पाठ १९०० वर्षका पुराना है क्योंकि श्री कुन्दकुन्दस्वामी विक्रम सत्र ४९ में विद्यमान थे इसको अप्रतीति करनेका कोई कारण नहीं दिखता है। दूसरा पाठ पढित आशाधरकृत १३ वीं शताब्दीका है उसे पंडितजीने विक्रम सं० १२८५ में नलकण्ठपुरमें पूर्ण किया था जैसा इस श्लोकसे प्रगट है—

विक्रमवर्ष संपंचाशीतिद्वादशशतस्वतीतिष्ठु । आश्विनसितांसादिवसं साहसमष्टापराशस्य ॥ १९ ॥

तीसरा पाठ यह आशाधरजीके पीछेका मालूम होता है जैसा मराठी टीकाकारने दूमरे श्लोकके अर्थमें लिखा है। यह नेमिचन्द्र ब्राह्मणकुली ब्रह्मचारी तथा विद्वान् थे। जैसा कि प्रशस्तिके श्लोक न० १ से प्रगट है वहां सद्गुणी शब्द आया है। यह तीसरा पाठ विधिके वर्णनमें सबसे बड़ा है। हमने जयसेनकृत प्रतिष्ठापाठको प्राचीन व निर्ग्रन्थ मुनिकृत मानकर मुख्यतासे उसीका आधार लिया है। इस पाठमें पांच परमेशोका ही पूजन यंत्र तत्र है। तथा दूमरे दो पाठोसे कहीं २ विशेष पूजन, विधि व मंत्र संग्रह किये हैं।

भाषा स्तवन, पूजनादि इसलिये रच दी गई हैं कि प्रतिष्ठा देखनेवाली आधुनिक जनताको तीर्थकर भगवानके कल्याणकका साक्षात् आनन्द आजावे और वे समझते हुए महान पुण्यवन्ध करें। कवितामें मनरगलालकृत चौवासी पूजाकी सहायता ली गई है। उसीके छन्दोंके अनुसार अक्षर मात्रा जोड़कर इस पाठके छन्द रचे गए हैं। जिस विधिसे मुझ अल्पबुद्धिने यह संग्रह किया है उसके अनुसार यदि प्रतिष्ठा की जायगी तो साक्षात् लाभ होगा तथा जैन अजैन सब देखकर जैनधर्मका प्रभाव अपने मनमें जमायेंगे। जहांतक बना है कोई विधि नहीं छोड़ी गई है। इस पाठमें जहां जहां गान व कविता है उसको बाजसे पढ़ा जावे। जिसके बोलनेके लिये जो पाठ है वह यदि न कह सके तो दूसरा उसके बदलेमें उस कविताको गावे, इसमें कोई हर्ज नहीं है।

मैं इस योग्य तो था नहीं कि इस अति दुर्लभ कार्यका करूं परन्तु धर्ममित्र पंडित अजितप्रसादजी एम. ए. एल.एल. बी. वकील छवन्तकी वर्षोंकी प्रेरणा तथा श्री जिनेन्द्र चरणकमलकी भक्ति ही ने इस कार्यको सम्पादन कराया है। विद्वान जन अवश्य मेरे इस माहस पर हंसेंगे। मैं उनमें क्षमा चाहता हूँ कि इनमें जो त्रुटियाँ हों उनके सम्बन्धमें हमें सूचित करें जिससे हम उनके सुधारका उपाय करें।

जहां पर प्रतिमके अभिषेकका वर्णन आया है वहां पर हमने श्री आदिपुराणकी रीतिके अनुसार क्षीरजल तथा गधोदकसे न्दवन होना दिखाया है। जिनको दधि आदिसे भी न्दवन करना इष्ट हो वे अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं।

आश्विन कृष्णा ९,
वीर सं० २४५३, विक्रम सं० १९८४
खण्डवा, ता० १९-९-२७.

जैनधर्मका सेवक—
ब्र० सीतलप्रसाद ।

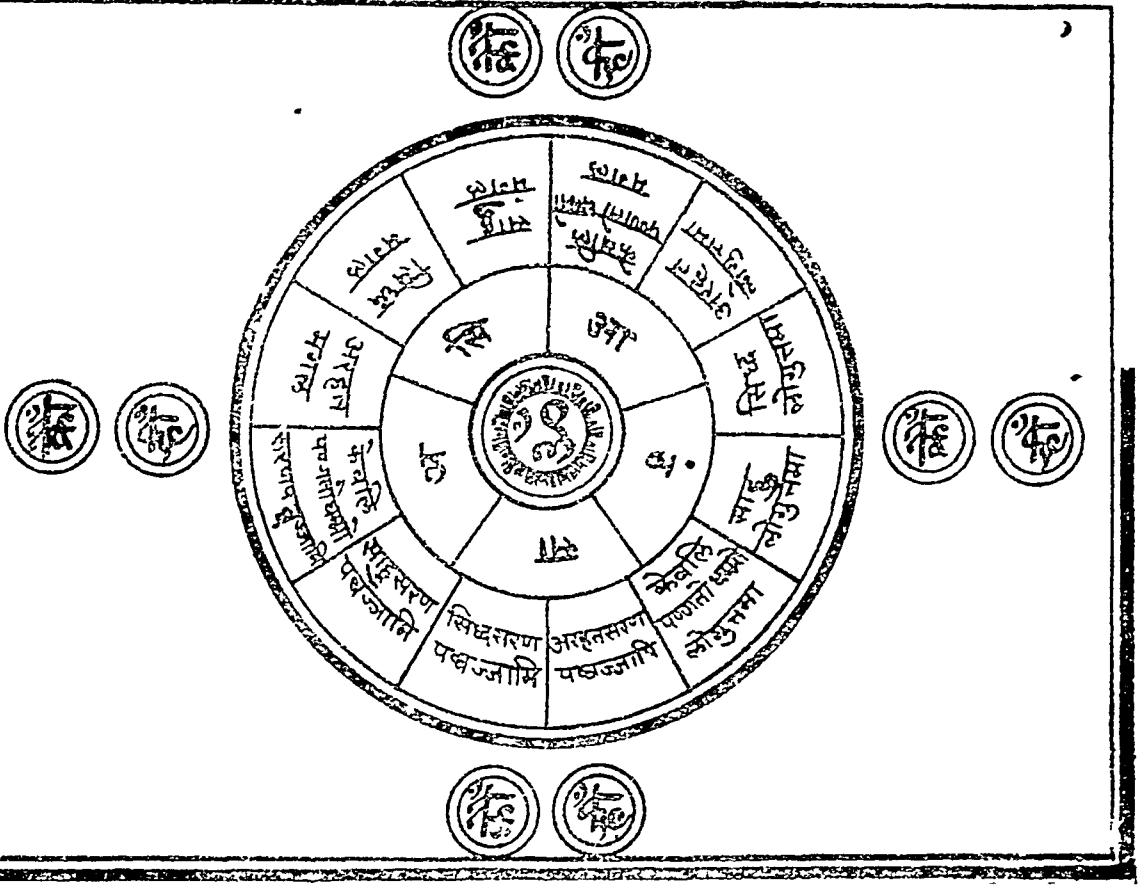


विषयसूची

अध्याय पहला—आवश्यक विधि ।	पृष्ठ.	अध्याय तीसरा—गर्भकल्याणकविधान ।	पृष्ठ.
(१) प्रतिष्ठा लक्षण	१	(१) इन्द्रकी स्वर्गपुरीकी सभा व कुबेरको आदेश	७६
(३) मन्दिरजीकी नींव रखना	३	(२) नगर राजमहलकी रचना, मातापिताकी भक्ति, वृत्रवृष्टि	७८
(४) प्रतिष्ठा बनानेकी विधि	४	(३) माताका गर्भ देवियों द्वारा शोधन व माताकी भक्ति	८०
(५) प्रतिष्ठा करनेके लिये मुहूर्त	६	(४) माताका स्वप्न देखना	८१
(६) प्रतिष्ठा करनेका मंडप बनानेकी विधि...	६	(५) नित्य पूजा होम	८२
(७) प्रतिष्ठा करनेके लिये आवश्यक पात्र इन्द्रादि	७	(६) राजाकी सभामे स्वर्गोका फल	८३
(८) नांदी विधान	९	(७) इन्द्रोका आकर गर्भकल्याणक करना	८४
(९) मंडप रक्षा विधि व ध्वजादंड स्थापन...	१०	(८) गर्भकल्याणकमें २४ तीर्थकर माताकी पूजा	८७
(१०) जप करनेकी विधि (११) याग मंडल बनानेकी विधि	१२	(९) देवियों द्वारा माताकी सेवा करना व प्रश्नोत्तर	९१
(१२) मंडलमे श्री जिन विम्ब स्थापन	१५	(१०) ५० उपयोगी प्रश्नोके उत्तर	९२
(१३) याग मंडलकी पूजाकी तयारी	१६	अध्याय चौथा—जन्मकल्याणक ।	
(१४) अग शुद्धि, न्याम व सकलीकरण क्रिया...	१६	(१) प्रसुका जन्म व इन्द्रोका आना व सुमेरुपर ले जाना	९५
द्वितीय अध्याय—याग मंडल पूजा विधान ।		(२) सुमेरु पर्वत, क्षीर समुद्र तथा मंडपकी रचना	९६
(१) याग मंडलकी पूजा—२५० अर्घोकी	१९	(३) तीर्थकर भगवानका अभिषेक	९८
(२) अभिषेक विधि (३) होमकी विधि	२०	(४) जन्मकल्याणकमें २४ तीर्थकरोंकी पूजा	१०४
(४) मंडलकी पूजा	२५	(५) राज्यांगणमे भगवानका पधारना, माता पिताको अर्पण, तांडवनृत्य व पूर्वभवोंका वर्णन	१०९
(५) प्रथम वलयके १७ अर्घ	२८	अध्याय पांचवां—गृही जीवन ।	
(६) दूसरे वलयमें भूत २४ तीर्थकर अर्घ	३२	(१) शैलना रूप क्रीडाका उत्सव	१११
(७) तीसरे वलयमे वर्तमान २४ तीर्थकर अर्घ	३७	(२) तीर्थकरका राज्याभिषेक	११२
(८) चौथे वलयमे भावी २४ तीर्थकर अर्घ	४१	अध्याय छठा—तपकल्याणक ।	
(५) पांचवे वलयमे २० विदेह वर्तमान तीर्थकर अर्घ...	४५	(१) भगवानको वैराग्य-बारह भावना चितवन	११६
(१०) छठे वलयमे आचार्यके ३६ गुणोंके अर्घ.	४८	(२) लौकिक देवोंका आना	११८
(११) सातवे वलयमे उपाध्यायके २५ गुणोंके अर्घ	५४	(३) इन्द्रका पालकी सहित आना	११९
(१२) आठवें वलयमे साधुके २८ मूलगुणोंके अर्घ	५८	(४) भगवानका राज्य त्याग व पालकीपर चढ़ बन जाना	१२०
(१३) नौमे वलयमे ४८ ऋद्धियोंके अर्घ	६६		

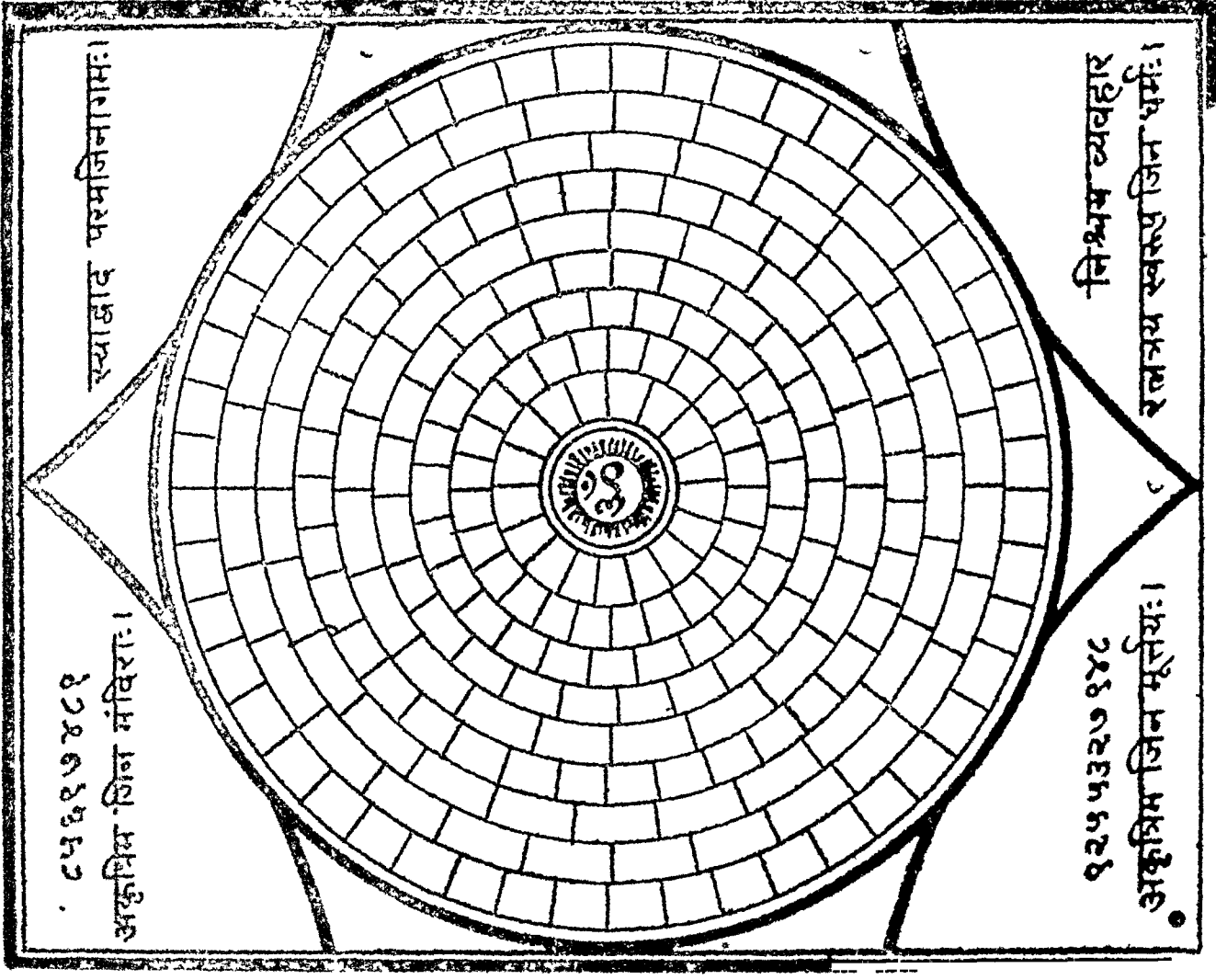
(५) तपोवनमें तप लेनेकी क्रिया ...	पृष्ठ- १२२	(५) अभिषेक विधि ...	पृष्ठ- १७१
गावृका यंत्र व प्रतिमा पर अक्षर न्याम प्रतिमा पर संस्कार...	१२३	(६) शांति धारा विधान ...	१७२
(६) तपकल्याणककी पूजा... २४ तीर्थंकरोंकी पूजा अध्याय सातवां-ज्ञानकल्याणक ।	१२४ १२६ १२७	(१) सिद्ध प्रतिविम्ब प्रतिष्ठा ...	१७८
(१) भगवानका प्रथम आहार	१३०	(२) आचार्य प्रतिविम्ब प्रतिष्ठा विधि ...	१८०
(२) भगवानका क्षपकश्रेणी पर आलूह होना...	१३३	(३) उपाध्याय विम्बप्रतिष्ठा विधि ...	१८२
मावृका यंत्र ...	१३४	(४) माधु विम्बप्रतिष्ठा विधि ...	१८४
(३) तिलक दान विधि ...	१३६	(५) श्रुतस्कन्ध प्रतिष्ठाविधि ...	१८६
(४) अधिवासना विधि ...	१३७	(६) चरणचिह्न प्रतिष्ठा विधि ...	१८९
(५) सुबोद्धाटन क्रिया ...	१३८	अध्याय ग्यारहवां-मंदिर व वेदोप्रतिष्ठा विधि ।	१९०
(६) नयनोन्मीलन क्रिया ...	१३९	(१) मंदिर व वेदोप्रतिष्ठा विधि ...	१९३
(७) केवलज्ञान प्राप्ति ...	१४०	(२) सिद्ध यंत्र या विनायक पूजा ...	१९७
(८) समवशरण रचना व पूजा	१४१	(३) मंदिरके ऊपर कलश व ध्वजा चढ़ाना... अध्याय चारहवां-भक्तियां ।	१९८
(९) चौबीस तीर्थंकरके ज्ञानकल्याणककी पूजा	१४४	(१) सिद्ध भक्ति पाठ ...	१९९
(१०) भगवानका धर्मोपदेश ...	१४८	(२) श्रुत भक्ति पाठ ...	२००
(११) भगवानका विहार ...	१५३	(३) चारित्र्य भक्ति पाठ ...	२०१
(१२) धर्मोपदेशकी सभा ...	१५४	(४) आचार्य भक्ति पाठ ...	२०१
अध्याय आठवां-मोक्षकल्याणक ।		(५) योग भक्ति पाठ ...	२०२
(१) मोक्षकल्याणक विधि ...	१५५	(६) निर्वाण भक्ति पाठ ...	२०२
२४ तीर्थंकरोंकी मोक्षकल्याणक पूजा ...	१६०	(७) तीर्थंकर या अर्हत भक्ति पाठ... ..	२०४
अध्याय नौवां-आंतिम होम, अभिषेक व शांति ।		(८) शांति भक्ति पाठ ...	२०६
(१) जिन यज्ञ विधान ...	१६६	(९) समाधि भक्ति पाठ ...	२०८
(२) सिद्ध पूजा ...	१६८	(१०) प्रशस्ति ...	२०८
(३) महर्षि पूजा... ..	१६९	(११) नित्य नियम पूजा, सिद्ध पूजा	२०९
(४) स्वस्ति पाठ... ..	१७०	(१२) शांतिपाठ व विसर्जन ...	२२०
		(१३) भाषास्तुति पाठ ...	२२१

विनायक चंन



ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

यागमडलका नकरा॥



विधिः—९ वलय बनावें। सुन्दर कोठे इस तरह बनावें—
 (१) में १७, (२) में २४, (३) में २४, (४) में २४, (५) में २०, (६) में ३६, (७) में २५, (८) में ४८ व कोनेमें ४
 इस प्रकार कुल २५० कोठे सुन्दराकार बनावें।

॥ ॐ ॥

स्व० ब्र० सीतलप्रसादजी द्वारा सम्प्रदित—

प्रतिष्ठासारसंग्रह

(पञ्चकल्याणकदीपिका)

आद्यशुक्ल ऋषिणा ।

१-प्रतिष्ठा—या स्थापना—यह नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव चार निक्षेपोंसे स्थापना निक्षेपमें गर्भित है । किसी भी अनुपस्थित व्यक्तिकी तदाकार मूर्ति उसके स्वरूपको बतानेमें समर्थ होती है । इसी हेतु तीर्थकरोंकी अर्हत्तोंकी ध्यानाकार मूर्ति उनके ध्यानके स्वरूपको दर्शकके मनमें अंकित कर देती है । प्रतिष्ठाका लक्षण श्री जयसेन आचार्यने इस भांति लिखा है—
प्रतिष्ठानं प्रतिष्ठा च, स्थापनं तत्प्रतिक्रिया । तत्समानात्मबुद्धिरवात्तदभेदः स्तथादिषु ॥

आचार्य—प्रविष्ठान, प्रतिष्ठा, स्थापन, प्रतिक्रियाका भाव यह है कि उसीक समान अपनी बुद्धि हो भाव—अर्थात् वह भाव मरके यह वही स्तपन है—स्तपन प्रथादिमें इशकी लक्षण है ।

यत्रारोपात् पञ्चकल्याणसंज्ञैः, सर्वशस्यस्थापनं तद्विधानैः । तत्कर्मलुष्ठापने स्थापनोक्त, निक्षेपेण प्राप्यते तत्सथैव ॥
आचार्य—अर्थात् पञ्चकल्याणक सम्बन्धी अर्घ्योंक द्वारा जिसमें अथ गुण नहीं है वपमें अथ गुणके स्थापन करनेसे तथा उक्त सम्बन्धी विधानके द्वारा सर्वक्षणना स्थापित किया जावे वह प्रतिष्ठा है । पूजनपाठादि क्रियाके कालमें स्थापना निक्षेपके द्वारा उक्त वस्तुको जैसे ही समझ लिया जाया है—अर्थात् सर्वशकी मूर्तिके दर्शनसे सर्वक्षण भाव हृदयमें अंकित हो जाता है ।

जैसे राजाकी स्थापनामें प्रजापतिमूर्तकी च क्रियाकी आप्तप्रकृता है वैसे मूर्तिकी प्रतिष्ठामें जैन संघकी च पूजापाठादि क्रियाकी आप्तप्रकृता है जिससे यह मूर्ति पूजनीय च माननीय होजाये ।

श्री जिनसन्धिर निर्माण—श्री जिनमन्दिर ऐसा बनाया चाहिये जहां धर्मस्थापन मछे प्रकार होसके—गृहस्थ भावक व श्राविकार्ये पूजा, सामायिक, शास्त्रसभा, दान आदि कर सकें ।

प्रथम तो वह स्थान ऐसी जगह हो जहां आसपास विनाकारक व निध मांसहारी, मद्यपानी आदि मनुष्योंकी बस्ती न हो । मन्दिरमें जो पूजापाठादि हो उसमें किसी तरहका विघ्न न आना चाहिये । मन्दिरके लिये इसनी बड़ी जगह छेनी

चाहिये जिसकी चौहद्दीके भीतर बगीचा हो, बीचमें मन्दिर बनवाया जाये। इसका हेतु यह है कि बाहर सरकका कोलाहल धर्मकार्यमें विघ्न न कर सके। मन्दिरजीमें मुख्य वेदीके चारों तरफ प्रदक्षिणा रहनी चाहिये। सामने इतना बड़ा चौक छाया हुआ रहना चाहिये कि नगरी विना वाधाके पूजा पाठ सुगम सके। वेदीका चतुर्था भागसे कुछ ऊँचा होना चाहिये। उसके आगे पूजा करनेके लिये नाभिके बराबर मेज हो। इस चौकमें हवा व रोशनी भले प्रकार आ सके। इसलिये बाहरसे खिड़कियें दोनो तरफ वेदीके अगल बगल होनी चाहिये। छास्रसभा करनेका स्थान ऐसी जगह होना चाहिये कि पूजा करते हुये भी छास्रसभा होसके इसलिये वेदीके चौकको बाहर कोटसे बन्दकर द्वार रहना चाहिए। द्वारके बाहर कुछ दूर जहाँ आवाज न आ सके, एक बड़ा दालान छास्रसभाका हो। उसके एक ओर क्रियोके बैठनेका स्थान हो, दूसरी ओर एक ऐसा दालान हो जहाँ सरस्वती मण्डार कोठा हो व आगे छास्रस्वाध्याय करनेकी जगह हो।

इन दोनों दालानोंमें भी बाहरसे खिड़कियां रहनी चाहिए जिससे रोशनी व वायु भले प्रकार आ सके। यहीं एक ऐसा कमरा बनाना चाहिये जिसके भीतरसे खिड़कियां बगीचेकी तरफ हों व जो बन्द कर लिया जाये व भीतर भव्य जीव शान्तिपूर्वक सामायिक कर सके। प्रयोजन अथ व्यासमें रखवा जाये कि पूजा, छास्रसभा, छास्र-स्वाध्याय व सामायिक चारों काम एकसाथ हो सके तो भी कोई बाधा किसी काममें नहीं आनी चाहिए। बगीचेमें फल फूलके सुगन्धित वृक्ष हों व इधर उधर बैठनेके स्थान बने हों जिसमें धर्मात्मा भाई ध्यान कर सके या परस्पर धर्मचर्चा कर सके।

इसी बगीचेके कोटमें लगते हुये कुछ कमरे ऐसे हों जहाँ औषधालय व विद्यालय हो सके, कुछ कमरे ऐसे हों जहाँ परदेशी, त्यागी व यात्री ठहर सकें। कुछ दूकानें भी कोटके बाहर निकाल दी जायं तो कुछ हर्ज नहीं है।

बागीचेमें एक बिरा हुआ बाड़ा ऐसा छोड़ दिया जाये जहाँ पर त्यागीगण मल निस्तार कर सकें। ऐसे मन्दिरमें वेदी एक हो वा तीन हो परन्तु हरेकमें मूलनायक बड़े पुरुषाकार विराजमान काने चाहिये जिनका दर्शन दूरसे भी होसके। एक वेदीमें एक ही प्रतिमा पाषाण या धातुकी बड़ी अलगगहनाकी रखनी चाहिये। मात्र एक प्रतिमा धातुकी छोटी रहे जो अभिषेकादि व रथोत्सवादिके समय काममें लाई जा सके। एक वेदीमें बहुत प्रतिमाओंकी पद्धति ठीक नहीं है। अरिस्त भगवान् एक गन्धकुटीमें एक ही विराजमान होते हैं।

पण्डित आम्बाधरजीकृत प्रतिष्ठासाधनमें कथन है कि ऐसी जमीनको मन्दिरके लिये पसन्द करे जो चिकनी हो व सुगन्धित हो व जिसमें वृष आदि उगती हो। नीचे उसके मुग्दा बगीच गढ़ा हुआ न हो। उत्तम भूमिकी पहिचान यह है कि उस भूमिको एक हाथ गहरी व एक हाथ चौड़ी लगवी खोदे। निक्की हुई मिट्टीसे फिर उस गढ़ेको भर दे, यदि कुछ

मिट्टी बचे तो समझना चाहिये भूमि उत्तम है। यदि समान भर जावे तो उसे मध्यम जाने। यदि गढ़ा न भर सके तो उस भूमिको अशुभ समझे। दूसरी परिधान यह बताई है कि सूर्य छिपनेके पीछे उस जमीनके चारों तरफ षट्पाईका परकोटा बनाकर हवा रोक ले फिर “हैंक हं फट” इस मन्त्रको १०८ बार पढ़कर पुष्प डाले। उस भूमिकी चारों दिशाओंमें कबो मिट्टीके चार बड़े खखे। उनपर बंधे सरावे घीसे भरे हुये खखे उनमें पूर्वादि दिशाओंमें क्रमसे सफेद, लाल, पीली, काली बत्ती डाले—दीपक जलावे।

जब तक घी गूहे तबतक चार आदमी दीपकके पास बैठे बराबर गमोकार मन्त्र पढ़ते हुए मन्त्र अपते रहें। यदि घीकी समाप्ति तक बत्तियां छाफ जलती रें तो भूमिको शुभ कहना, यदि बुझती हुई मालूम पड़े तो अशुभ समझना चाहिये। मन्दिर निर्माणके सम्बंधमें श्री जयसेनाचार्यजी लिखते हैं कि शुद्ध स्थानमें या वनमें या नदीके पास व तीर्थकी भूमिमें विस्तारयुक्त शिखर और ध्वजा सहित जिन भवन बनवावे। कूप, बागड़ी, तालाब, नदी, बगीचा इनकरि योमित और कीटाकादि जन्तुओंसे रहित व मसान तथा शूली आदिके स्थानसे रहित व जले हुये पाषाणोंसे रहित भूमि मन्दिरकी होनी उचित है।

नोट—मन्दिरजीको शिखरबन्द बनाना उचित है। गृह चैत्यालय अपने बरके पास या छतके ऊपर हो सकता है जहां इच्छानुसार काल तक प्रतिमा रह सकती है। यदि गृहस्थी पूजाके लिये समर्थ नहो तो वह प्रतिमाजीको जिनमन्दिरमें विराजमान कर सकता है।

श्री जयसेनाचार्यजी लिखते हैं कि मन्दिरका मुख पूर्व, उत्तर व कदाचित् पश्चिम भी रहस्ये—

“मुखं तु शक्रोत्तर पश्चिमास्तु, कुर्याज्जिनेशालयकस्य मुख्यं ॥ ३३ ॥

३—मन्दिरकी नीच रखना—शुभ दिनोंमें नीच खुदावे और उसे पूजासे शुद्ध करे। फिर पत्थर आदिसे भरकर भूमिके बराबर करे। नीच खोदने पर शिला रखनेके लिये इस प्रकार पूजा करे—नीचके पास ही एक चबूतरेपर या चौकी पर सिंहासन विराजमान करके जिन प्रतिमाको पधरावे। मुख्य पूजक अनेक नरनारियोंके साथ पूजा करे। पहले तो प्रतिमाका अभिषेक करे। फिर अष्टदशसे नित्य देव ऋषि गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करे फिर पांच शिला अथवा पकी हुई ईंटें जो पासमें रखी हों उनको धोकर चन्दनसे साथिया करे फिर नीचेके मन्त्रको १०८ बार पढ़कर पांचों शिलाओंपर पुष्प छोड़े।

मंत्र—**ॐ ह्रीं नमो अर्हद्भ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सिद्धेभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सुरिभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः पाठकेभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सर्वसाधुभ्यः स्वाहा।** अथवा प्राकृत गमोकार मंत्रमें पहले ॐ ह्रीं अन्तमें

स्वाहा जोड़कर रूपै तथा पांच लंबेके कलश भी रखें जिनको भी धोकर साधिया बनाकर भीतर पांच तरहके रत्न क्रमसे डाल दें तथा लंबेका सिद्ध यंत्र या विनायक यंत्र बनाकर उल्लंभी नीच रखनेकी मिति, मूल सङ्ग, कुन्दकुन्दान्वय आदि व मन्दिर बनाबेवालोंके नामादि लिखें । यंत्र अपनेके पीछे पहले चार कोनोंमें व एक सङ्घमें पांच थिला रखे फिर उन थिलाओंके ऊपर पांचों कलशोंको रखे । लंबेके कलशके भीतर धीका जलता हुआ दीपक रखते तथा कलशके नीचे पहले यन्त्र स्थापन करके फिर कलशको रखें । इस कलशको ढूँक देवे । थिला व कलश रखते समय बाजे बजवाये फिर नीवको मरबाये । पश्चात् कारीगरोंको दाव देवे फिर पूजा विसर्जन करे । विनायक यन्त्रका धर्जन अध्याय १० में है ।

४-प्रतिष्ठा बनानेकी विधि-प्रतिष्ठा बनवानेके लिये पहाड़से उत्तम मोटी थिला लानी चाहिये । वह थिला प्रासिद्ध स्थानकी चिकनी, ठण्डी, सेंटी, सुन्दर, मजबूत, छुगठित, ठोस व अच्छे बङ्गाली हो । विदुरेखा आदि दोष न हों व उसकी धनि भी अच्छी हो । उस थिलाका निकालकर धोवे तथा वसावे वहाँ नित्य देव साख गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करके फिर १०८ बाण णमोकार मंत्र ॐ ह्रीं पहले व स्वाहा पीछे लगाकर पढ़ें और उसपर पुष्प डालें । फिर पूजा विमर्जन करके उसको लावे । जिन मंदिरकी तील प्रदक्षिणा देकर शुभ दिनमें उस थिलाको सुगन्धित औषधियोंसे धोकर मन्दिरमें रखे तथा सिद्ध स्तुति व शान्ति पाठ पढ़े । फिर शुभ दिनमें कारीगरोंको मूर्ति बनानेके लिये सौंपे । कारीगर अच्छी निगाहवाला, शिष्टशास्त्रका जाननेवाला, मदिरा मांसादिका त्यागी, पूर्ण ब्रह्मचारी, चतुर, क्षमावान् व मन, वचन कायसे शुद्ध हो । वह कारीगर जबतक प्रतिष्ठा न बन जाये नियमसे मोजन करे-संयम रूप रहे, ब्रह्मचर्य पाले तथा सुभीचे-से काम करे-उससे जल्दी व कराई जावे ।

प्रतिष्ठाका लक्षण पंडित आचारजीने कहा है—

शान्तप्रसन्नस्यस्थनासाप्रस्थाधिकारहक् । सम्पूर्णभाषरुरुनुचिदांगं लक्षणां न्वितं ॥ ६३ ॥

रौद्रादिवोषनिमुक्तं प्रातिहारार्थीकथक्षयुक् । निर्माप्य विधिना पीठे जिनविम्बं निधेशयेत् ॥ ६४ ॥

भावार्थ—जो शान्त, प्रसन्न, मध्यस्थ, नासाप्रस्थित अविकारी दृष्टिवाली हो, जिसका बद्ध वीतरागतासे पूर्ण हो, अनुपम वर्ण हो व शुभ लक्षणों सहित हो, रौद्रादि बाह्य दोषोंसे रहित हो, अशोक वृक्षादि प्रातिहारार्थीसे युक्त हो और दोनों तरफ यक्ष यक्षीसे वेष्टित हो ऐसी जिन प्रतिष्ठाको बनवाकर विधि सहित सिंहासन पर विराजमान करे ।

१-दोष ये हैं—रौद्र, कृष्णांग, सखिसांग, चिपिटनासिका, विरूपक नेत्र, हीममुख, महा उदर, महा हृदय, महान्यस, महा कटी, महा बाह, हीन जंवा, शुष्क जंवा ।

दृष्टि ऐसी होनी चाहिये—

नास्यन्तोन्मीलितास्तद्वा न विस्फारितमीलिता । तिर्यगूर्ध्वमद्योदृष्टिर्जयित्वा प्रयत्नतः ॥

नासाग्रनिहिता शान्ता प्रसन्ना निर्धिकारया । योतरागस्य मध्यस्था कर्णव्या दृष्टिहस्तया ॥

अर्थात्—न तो निलकुल मुंदी हो न फैली हुई हो न तिरछी हो न ऊपरको हो न नीचेको हो । इन दोषोंको बचा कर नासाके अग्रभागमें धरी हुई दृष्टि, शॉठ, प्रमत्त, निर्धिकारी माध्यस्थ ऐसी दृष्टि योतराग प्रतिमाकी होनी चाहिये ।

प्राचीनकालमें अर्द्धतकी प्रतिमामें पाषाणके ही छत्र चमरादि प्रातिहार्य बने होते थे । दक्षिणमें जो प्राचीन जैन मूर्तियां मिलती हैं वे सब छत्र चमरादि प्रातिहार्य सहित ही मिलती हैं । इधर उत्तर भारतमें अलगमें छत्र चमरा भिदासनादि लगानेका रिवाज है सो पुराना नहीं है । पाषाण या चातुमें ही छत्र चमरादि बना देनेसे कोई खंफा छत्र चमरादिको चोरी जानेकी भी नहीं होती है । जिस प्रतिमामें प्रातिहार्य नहीं बने होते हैं वह प्रतिमा सिद्ध भगवानकी होती है । कहीं कहीं प्राचीन प्रतिमाओंमें यक्ष शक्तिीके स्थानमें दोनों और दो चमरेन्द्र बने हुये मिलते हैं ।

श्री जयसेनाचार्यजीने मूर्तिका स्वरूप ऐसा लिखा है—

स्वर्णरत्नमणिरोद्यनिर्मितं, स्फटिकासलशिलात्थकं । उत्थिनांबुजमहासनांगितं, जैनबिम्बमिह शस्यते बुधैः ॥६४॥

कार अंकित त्रिनेन्द्रका विम्ब बुद्धमानोंने सराहा है ।
भाषार्थ—सुवर्ण, रत्नमणि, चांदीसे निर्मित हो व स्फटिक व निर्दोष शिलासे बनी हो व कायोत्सर्ग तथा पद्मासन

श्लोक १५१ से १८२ में विम्ब बनानेकी जो विधि बताई है उसमें लिखा है कि विम्ब ऐसा हो कि विम्बमें श्री बुद्धलक्षण हो व नख केव्व रहित हो । कायोत्सर्ग व पद्मासन प्रतिमाकी माप यहां बताई है सो उस पाठको देखकर समझ लेना चाहिये ।

श्लोक १८० व १८१ उपयोगी हैं । कहा है—

सुलक्षणं भाषबिबुद्धहेतुकं, सम्पूर्णं सुद्धावययं क्षिणम्भरं । सत्प्रातिहार्यैर्निजचिह्नमासुर, संकारयेद्धिम्बमयाहंतः

सिद्धेश्वराणां प्रतिमाऽपि योऽद्या, सत्प्रातिहार्याद्विधिना सथैव । आचार्यउत्पाठकसाधुसिद्धक्षेत्रादिकानामपि शुभम् ॥
आप वृद्धयै ॥

भाषार्थ—अर्द्धतका विम्ब सत् लक्षण सहित आन्त भावको षट्ठानेगाला, सम्पूर्णं अङ्गोपाङ्ग शुद्ध दिग्म्भर रूप आठ प्रातिहार्य सहित व अपने चिह्नसे प्रकाशमान करना योग्य है । सिद्ध परसेछोका विम्ब भी प्रातिहार्य विना स्यावना योग्य है

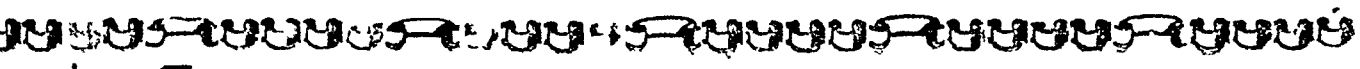


तथा मावोंकी घुड़के लिये आचार्य, उपाध्याय, साधु तथा सिद्ध क्षेत्र आदिको प्रतिमा भी कानो योग्य है ।
 नोट-इससे सिद्ध है कि आठ प्रतिहार्य सहित प्रतिमा अर्द्धतकी, प्रतिहार्य बिना सर्व अङ्गोपाङ्ग सहित प्रतिमा सिद्धकी व पीछी कण्डल सहित प्रतिमा आचार्य, उपाध्याय, साधुकी तथा सम्भेदशिखादि क्षेत्रोंको मूर्ति ये सब बन सकती है । जो घातुमें छिद्र कके सिद्धकी प्रतिमा बनाये हैं सो ठीक नहीं है । इस प्रतिमापर आमनमें चिह्न खुशना चाहिये । जिस प्रतिमाको जिस तीर्थकाकी प्रसिद्ध कानी हो वह चिह्न तथा उसके साथ प्रविष्टाकी मिति समस्त मूलमङ्ग कुन्दकन्दान्त्य आदि व प्रतिष्ठा करानेवाले श्रावकादिका परिषय सब खुशना देना चाहिये । बहुत प्राचीन प्रतिमाओंमें लेख नहीं मिलते हैं, परन्तु इस कालमें लेख लिखना बहुत उपकारी है ।

५-प्रतिष्ठा करनेके लिये मुहूर्त-प्रतिष्ठा करनेके लिये शुभ मुहूर्त निकलना लेना चाहिये तब ही प्रतिष्ठा करनी योग्य है । जो मुख्य प्रतिष्ठाकारक हो उसके नामसे मुहूर्त निकलवाया जावे । श्री जयसेनाचार्यजीने श्लोक १८७से २०२में इस विषयका वर्णन किया है उसका कुछ जरूरी भाग यह है कि मङ्गल, रविवार, बुधवारको छोड़ सब वार शुभ हैं; अमावस्या, पूर्णिमा, एकादशी मना है तथा जिस तीर्थकाकी प्रतिमा प्रतिष्ठा कावे, त्रिप तिथिमें जो कल्याणक हुआ हो उन तिथिमें वह कल्याणक इष्ट है तथा रविवारकी अष्टमी, सोमवारकी त्रीन, बुधवारकी द्वादशी व दोइज, गुरुवारकी दसमी-पञ्चमी व पूर्णिमा व शुक्रवारकी छठ व पडिमा, बुधवारकी चौथ तथा नौमी श्रेष्ठ हैं ।

६-प्रतिष्ठा करनेका मण्डप बनानेकी बिधि-राजाकी आज्ञा लेकर शुभ स्थानमें मण्डप बनाने तब पहले ही प्रतिष्ठाचार्य बहोंके निवासी देव आदिसे २१ वार गणोकार मंत्र पढ़ाकर क्षमाप्रार्थना करे कि वहां में प्रतिष्ठा विधि करना चाहता हूं, आप क्षमा करें । मण्डप ऐसा बनाना चाहिये जैसा कि नाटक-बार सर्व तरफसे ढहा होता है । प्रवेशद्वार रखने चाहिये । उनपर मनुष्य नियत हो । क्योंकि दर्शकोंकी भीड़ परिमित हो इसलिये नितना स्थान सुखसे बैठने योग्य हो तथा पुरुषोंके लिये हो उनमें ही टिकट बना लेने चाहिये । आनेवाले स्त्री पुरुषोंको भिना कुछ लिये हुये टिकट देकर भीतर मेवना चाहिये जब वह बाहर आवे तब फिर टिकट ले लेना चाहिये । मण्डपमें कोठाहल न हो व बकेनाजो न हो इसलिये सुप्रबन्धकी जरूरत है । जैसे नाटकघरमें सब सुखसे बैठकर नाटक देखते हैं ऐसे इप मण्डपमें स्त्री पुरुष सुखसे बैठकर भी निनेन्द्रके कल्याणकका दृश्य देख सकें ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये ।

पूर्व ओर या उत्तर ओर सामनेको वेदी आदिका स्थान रखना चाहिये जो स्थान नीचेकी धूमिसे कुछ ऊँचा हो । तीन तरफ दर्शकोंको बैठनेका स्थान नाटकके समान बना देना चाहिये । छेठ तरफ स्त्रियोंके लिये व छेठ तरफ पुरुषोंके



लिये । दोनोंके प्रवेश व निकलनेके भिन्न दो द्वार अलग २ होने चाहिये । वेदीमें तीन वेदी बारा २ बनाना चाहिये । मध्यकी वेदी तीन कटनीदार प्रतिमाओंके विराजमान करनेके लिये, उस वेदीके दाएके तीस कुण्ड गोल, चौखूँटे, प त्रिकोण होषके लिये बनाने चाहिये व दाहिनी ओर राजगृहकी रचना होनी चाहिये । इसके आगे एक चबूतरा बास्ते मण्डल बनाने व पूजा करनेके लिये होना चाहिये । इस चबूतरेके आगे एक परदा नाटकके समान होना चाहिये । उसीके लगता ही आगे दूसरा चबूतरा होना चाहिये जहां प्रतिष्ठा सम्बन्धी अनेक दृश्य बनाये जा सकें, जैसे माताका स्वप्न देखना, राज समा, इन्द्रका आना, वैराग्य, समव्यरण समा, आदि । इन दोनों चबूतरों तक ऐश्वी आड़ कर देने चाहिये कि लिंगाय प्रतिष्ठामें उपयोगी व्यक्तियोंके और कोई प्रवेश नहीं कर सके । वेदीके पीछे सामग्री बनानेको व प्रतिष्ठाके योग्य सामान रखनेको स्थान निगत करना व पास ही जाप व सामायित्त कानेका स्थान पीछे निगत करना चाहिये । ब्राह्म समा व व उपदेश समाके लिये अलग मण्डप बनाना व उसीमें ऊपरके भागमें एक पूजा-वेदी खुदो करना जिसमें प्रतिमा विराजमान रहे जिससे यात्रीगण वही पूजा, ब्राह्मदि किशएं कर सकें । प्रतिष्ठा मण्डपमें सिमाय प्रतिष्ठा विधिके और कार्य कोई न करे । बिना ऐसा प्रबन्ध हुये प्रतिष्ठाका आनंद ब्रान्तिपूर्वक नहीं मिल सकता है तथा छोटे २ बच्चोंके दिक बहलानेके लिये एक भिन्न मण्डप बना देना चाहिये जहां वे खेरा करें । वहां कुछ तस्वीरें लगा देनी चाहिये व कुछ खिलौने रख देने चाहिये । एक मंडप ऐसा हो जिसमें स्वदेशी वस्तुओंका बाजार हो उसमें स्त्रियां ही दुकानदार हों । बहूना स्त्रियोंको वस्तुओंके खरीदनेका शौक होता है यदि उनके लिये स्वदेशी पदार्थोंको प्रदर्शनो रहे व स्त्रियां ही प्रबंधक हों तो उनका काम भी निकल जाये तथा जो निर्लज्जना नीच कौमके सौदेगालोंके साथ स्त्रियोंके मिलने व बात कानेमें होता है वह भी जाता रहे ।

७-प्रतिष्ठा करनेके लिये पात्रोंकी आवश्यकता-नीचे लिखे पात्र प्रतिष्ठाकी विधिमें आवश्यक हैं- (१) प्रतिष्ठा कानेगाला प्रतिष्ठाचार्य, (२) और्णम इन्द्र और उपकी इन्द्राणो, (३) कृष्ण इन्द्र या प्रथेन्द्र, (४) तीर्थरुके पिता, (५) तीर्थरुकी माता, (६) पूजा पढ़ानेमें सहायक विद्वान्, (७) सामग्री तैयार कानेगाले चार महालय, (८) कमसे कम आठ पढी हुई कन्यायें जो देवियोंका काम कर सकें, (९) लौकान्त्रिक देव आठ जो खो रहिन पुरुष सदाचारी हों, (१०) एक सूचनाकर्मो, (११) चार प्रबन्धक ।

(१) प्रतिष्ठाचार्यका लक्षण-ब्राह्मशाखा, सदाचारी, जिनधर्मका दृढ़ श्रद्धानी, संतोषी, पवित्र स्त्रीरी, उच्च कुली, सात व्यसन रहित, ब्रह्मचारी, त्यागी या गृहस्थ हो, जससे प्रतिष्ठाका कार्य काये एक एकके शीघ्र करे, सुदृग्ध व रक्ष पड़े ।

(१) इन्द्रका लक्षण—धम्पत्तिवान, राघववान, नवबुधक, उषजुली, जैनधर्मका अदानी, सदाचारी, ब्राह्मघाता, मान्य, सप्तव्यसन त्यागी अर्थात् पाक्षिक श्रावकका आचार पालनेवाला हो । यह यज्ञोपवीतका धारी हो, कमसे कम नीचे लिखे गइने पहने—(१) करवनी कमरमें, (२) अंगुलीमें अंगूठी, (३) हाथमें कड़े, (४) कंठमें धार, (५) कानोंमें कुंडल, (६) मुकुट । जपतक प्रतिष्ठा समाप्त न हो एक दफे भोजन करे, दूसरी दफे पान पदार्थ ले सकता है । तीनों समय सामायिक करे । शुद्ध वस्त्र केकरसे रंगे हुये पहरे, गृहस्थके कार्योंसे निश्चिन्त हो ब्रह्मचर्य पाले । इन्द्राणी मी इन्द्रके समान नियम पाले व पढ़ी हुई विचारवान होनी चाहिये । उसीकी स्त्री होना ठीक है ।

(२) अन्य इन्द्र या प्रत्येन्द्र यदि ११ और हो सके तो अच्छा है । ये सब भी इन्द्रके समान नियम पालनेवाले हों । (४) तीर्थकारका पिशा—पुरुष संनपति जो श्रद्धावान व सदाचारी हो व पाक्षिक श्रावकका नियम पालता हो । प्रतिष्ठा होने तक रात्रि भोजन पानका त्यागी हो, दिनमें एक दफे भोजन करे, अन्य समय पान पदार्थ दूधदि ले सकता है, ब्रह्मचर्य पाले, वरके कार्योंसे निश्चिन्त हो, दो दफे सवेरे छांम सामायिक करे, चितका उदार तथा दानी हो तथा शिक्षित हो ।

(५) तीर्थकारकी माता—उसकी स्त्री जो ऊपरके नियम पाले, शिक्षित या समझदार हो ।

(६) पूजा पढ़ानेमें सहायक २ विद्वान् मी प्रतिष्ठा तक नियमसे रहे, एक मुक्त करे, दूसरी दफे पान पदार्थ लेवे, ब्रह्मचर्य पाले, पाक्षिक श्रावक हों ।

(७) सामग्री तैयार करनेवाले ४ महाशय भी ऊपरकी मांति हवें ।

(८) ८ कन्यायें जो १२ वर्षके अनुमान हों, स्वरूपवान हों, उनको केकरसे रंगे वस्त्र पहाराये जावें, मुकुट लगावें, प्रतिष्ठा होने तक पानी सिवाय रात्रिको कुछ न लेवें, दोनों काल जाप करें ।

(९) ८ ब्रह्मचारी या स्त्री रहित वैरागी या उदासीन भाव रखनेवाले पुरुष सफेद, शुद्ध वस्त्र पहने व चांदीका सफेद ही मुकुट लगावें ।

(१०) सूचनाकर्ता पढा हुआ बुद्धिमान ऐसा हो जिसका स्वर ऊँचा व गम्भीर तथा माननीय हो व विद्वान हो ।

(११) चार प्रबन्धक कई ऐसे बतुर हों जो प्रतिष्ठामें आवश्यक वस्तुओंका प्रबन्ध पहलेसे ह्यो कर दें व जो प्रतिष्ठाचार्यसे सम्मति लेते रहें व उसकी आज्ञानुसार सब काम करें व यह देखें कि प्रतिष्ठामें सावधानी व शान्ति है व दर्शकगणोंका मन धर्मभावमें भोज रहा है ।

८-नान्दी विधान-भी जिन मन्दिरमें किसी शुभ दिन सब नरनारी एकत्र हों तथा ऊपर लिखे सर्व ही पात्र प्रतिष्ठाकी विधि कारनेमें सहायक हैं सो एकत्र हों। जब नित्य अभिषेक व पूजन हो जावे तब भी जिन मगवानके आगे वेदीपर साथिया बनावे और उसके ऊपर एक माला व रत्नसे वेष्टित कलशको कुलवंती स्त्रियां उस स्वस्तिक पर प्रथम अघ चढाकर विराजमान करें।

फिर इंद्र जिसको स्थापित किया हो उसको तथा तीर्थकरका पिता जिसे स्थापन किया हो ये दोनों शुद्ध चन्दन-चर्चित जलसे स्नान करें और शुद्ध दूध पड़कर आर्वे, तप श्री जिनमुनि हों तो उनके सामने बर्हीं तो प्रतिमाजीके सामने प्रतिष्ठाचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर पुष्प क्षेपण करे। दोनों पर अलग २ मन्त्र पढ़कर ढाले।

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा गमो अरहंमाणं सप्तसिद्धगणधराणं अनाहतपराक्रमस्ते भवतु।

फिर आगे इन्द्र व मुख्य यजमान अर्थात् तीर्थकरका पिता हाथ जोड खड़ा हो। पीछे अन्य सब पात्र खड़े हों और योगभक्ति तथा सिद्धभक्ति प्रतिष्ठाचार्य पढ़ें तथ पढ़वावें। फिर कलश पर पुष्पक्षेपण करें व करारें। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर तीर्थकरके पिता पर पुष्पक्षेपण करें-

“ॐ अघ (यहां देख, नगर, काल बड़े) अस्य यजमानस्य (यहां तीर्थकरके पिता बननेवालेका नाम ले) इक्ष्वाक-वंशे श्री ऋषमनाथ संताने क.इ.प.प. गोजे परावर्तने यावद्भूवरं भवतु भवतु कौं ह्रीं ह्रीं नमः।”

नोट-जिस तीर्थकरकी प्रतिष्ठा करनी हो उसीका वंश व गोत्रका नाम ले। उस यजमानमें लक्षतक प्रतिष्ठापूण न हो स्थापित करे। फिर आचार्य यजमानके दृबंज और इन्द्रके मुकुटबंध बांधे। इम दिन इन्द्र तथा यजमान उपवासना एकमुक्त करे तथा आसे प्रतिष्ठा देने एक किसीके पंक्तिमें मौजल न करे-शुद्ध मौजल करे। फिर सब पात्र जो जो निशम पहले रताये गये हैं उनके पालनेका संवल्प करे। जिस समय दृष्ट बांधा जावे व मुकुट बांधा जावे उस समय मन्दिरके बाहर बाजे बजाये जावें। फिर सब पात्र खड़े होकर श्रुति पाठ व विपर्जन करें।

९-मण्डपरक्षा विधि व ध्वजाहण्ड स्थापित करना-जहां प्रतिष्ठाकी विधि की जाय उस मण्डपको यथा-योग ध्वजाओसे सज्जित करें, द्वारों पर वन्दनमालार्थे बांधे व चार तरफके मुख्य द्वारों पर धूप बट रक्खें जिनमें धूप सदा दिनमें दी जाया करे व चार मुख्य बल्लभ छिन्नीके या धातुके बरसे सज्जित कर व ९ दफे णमोकार मंत्र पढ़कर मंत्रित कर द्वारों मुख्य द्वारों पर विराजमान करें।

जिस दिन मण्डप प्रतिष्ठा व ध्वजा स्थापन विधि हो उस दिन नरनारी व प्रतिष्ठा करनेवाले सब पात्र उपस्थित हों। मण्डपकी ऊँचाईसे दुगुना व अधिक ऊँचा ध्वजारण्ड तैयार किया जावे उसमें त्रिकोणी ध्वजा वही शुद्ध रत्नकी रङ्गीन दृश्य की जावे। उस ध्वजमें श्री अर्हंतका चित्र आठ प्रतिहार्य सहित चित्रित हो। यदि चित्र न बन सके तो बड़ा ऊँ लिखा जावे तथा नीचे लिखा जावे—जैनधर्मकी जय। फिर लिखा जावे—श्री जिनेन्द्रमूर्ति प्रतिष्ठासण्डपमें पधारिये। इस ध्वजादंडको मण्डपके आगे तीन कटनीदार चबूतरा बनाकर नीचमें मजबूत गाढ़ा जावे।

इस दिन ऊपर टेविल पर छात्र या ग्रंथ विराजमान करके इन्द्र पहले नित्य व सिद्ध पूजा करे। सामने ध्वजादंड रक्खा हो। सिद्धभक्ति तथा श्रुतिभक्ति पढ़े फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर ध्वजा पर पुष्प क्षेपे—

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासनपलाके सखोच्छिना तिष्ठ भव भव षष्प स्वाहा।

फिर उदक चंदनादि बोलकर अर्घ्य चढ़ावे और ध्वजा दंडको चबूतरे पर खड़ा करावे।

फिर इन्द्र नीचेप्रकार देवोंको प्रतिष्ठाविधिमें सेवा करनेकी आज्ञा करे।

(१) चार प्रकार देवोंको नीचेका श्लोक पढ़कर कहे व मंडपके चारों तरफ पुष्प क्षेपे।

चतुर्णिकायामरसंघ एष, अगत्य यज्ञे विधिना नियोग। स्वाकृत्य भक्त्या हि यथाहंदेशो, सुस्था भवंत्वा-
निहककल्पनायाम् ॥

(२) पवनकुमार देवोंको यह पढ़कर कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातमारुतसुराः पवनोद्गताशाः, सघटसंसलसितनिर्मलतांतरीक्षाः।

वात्यादिदोषपरिभूतवसुन्धराद्यां, प्रत्यूहकम निखिल परिमार्जयन्तुः ॥

(३) वास्तुकुमार देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातवास्तुविधिषूद्रसंनिवेशा, योग्यांशभागपरिपुष्टवपुः प्रदेशाः।

अस्मिन् मखे रुचिरसुस्थितभूषणांके, सुस्था यथाहंविधिना जिनभक्तिभाजः ॥

(४) सेवकुमार देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयात निमलनभः कृतसंनिषका, मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरकाः।

अस्मिन्मखे विकृत विक्रियया नितान्ते, सुस्था भव तु जिनभक्तिसुवाह्रन्तु ॥

(५) अग्निकुमार देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आघातपावकसुराः सुरराज पूज्य, सस्थापनाविधिषु संस्कृतविक्रियाहोः।
स्थाने यथोचितकृते परिवद्धकक्षाः, सन्तु श्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥

(६) नागकुमार जातिके देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

नागाः समाविशतभृतलसन्नवेशाः, र्वा-भक्तिसुल्लसितगातत्रया प्रकाश्य ।
आशीविषादिद्विकृतविघ्नविनाशहेतोः, स्वस्था भवंतु निजयोग्यमहासनेषु ॥

(७) फिर पूर्व ओंके द्वारपाल यक्षको नीचेका श्लोक पढ़कर स्थापित करे तब पूर्व द्वार पर जो कलश रक्खा है उसपर पुष्प क्षेपे—

पुरुहितविशिस्थिति मे हि करांदू, घृतकांचनदण्डखण्डरुचे । विघिना कुसुदेश्वरसव्यशये, घृतपङ्कज
शङ्कितकरुणके ॥

(८) फिर ऊपरके समान दक्षिण दिशामें स्थापन करे—

वामनाद्युयमद्विग्विभागतः, स्थानमेहि जिनयज्ञकर्मणि । भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रहः, पूतशासनकृतमबंध्यकः ॥
(९) इसी तरह पश्चिम दिशामें करे—

पश्चिमासु बिततासु हरिरसु, सूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः । अञ्जनस्वहितकाम्ययाऽध्वरे, तिष्ठ विघ्नविलयं प्रणिधेहि
(१०) इसी तरह उत्तर दिशामें करे—

पुष्पदन्तभवनासुरमध्ये, सरकृतोऽसि यत इत्थमवोचम् । उत्तरत्र मणिवण्डकराग्रस्तिष्ठ विघ्नविनिवृत्तिविषायो ॥
इसतरह चार द्वारपर चार यक्ष द्वारपाल स्थापे ।

(१२) कुबेरको रत्नवृष्टि आदिके लिये नियत करे ।

करकृतकुसुमानामञ्जलिं सवितीर्थं, धनदमणिस्तुरद्वानीशपूजार्थसार्थे ।

विकिर विकिर शीघ्र भक्तिसुद्भाषयित्वा, निगदतु परमांके मण्डपोर्ध्वोवकाशे ॥

इतना पढ़ पुष्प मण्डपके ऊपर क्षेपण करे ।

फिर सब पात्र मिलकर स्तुति पढ़ते हुये ध्वजादण्ड सहित मंडपकी तीन प्रदक्षिणा दें और शीतिपाठ विसर्जन करें।
ध्वजादंड स्थापनके समय व आगे पीछे वादित्र बजाए जावें ।

(१०) जप करनेकी विधि-विम्ब प्रलिष्टामें १ लाख व मंदिर या वेदी प्रतिष्ठामें १०००० या ८००० जप करना उचित है ।

इस जपको गर्भशल्याणकके होनेके पहले तक मंडपकी वेदके स्थानमें बैठकर समाप्त किया जावे ।

यदि १० आदमी हों व १००० जप रोज करें तो १० दिन चाहिये । यदि अधिक हों व कम हों तो जिसतरह १ लाख जप पूरे हों वह प्रबन्ध किया जावे

एक लाख लौंगे गिन ला जायें । जप करनेवाले आगे अग्निकी अंगीठी रख लें तथा एरु एक मन्त्र पठते हुये एक एक लौंग डालते जायें शुद्ध भस्म पहनकर सवेके समय निराहार निर्मल माथसे जप करें । अशुद्ध बोलनेवाले न हों—
“ ईं हों हीं हू हों हू हः अमिभ्राउमा मर्धवमिबिनाशनाय स्वाहा ।

११-भागमण्डल ब्रह्मनेका विधि-मण्डपमें मूल मध्य वेदीके आगे जो चतुर्था हो उसपर मंडल बनानेकी आवश्यकता है । मण्डल बनानेके लिये मफेर, पीला, लाल, काला, हरा इन पांच रंगोंके रंगे हुये चावल तैयार करे और इससे बहुत सुन्दर मण्डल बनाये । या अन्य तरहके चूर्णसे मण्डल बनावे जो बिगड़े नहीं । मध्यमें ॐ लिखे, उसके चारों तरफ एक बलय बनायें ।

(१) पहले बलयमें १७ खाने करे व १७ पुञ्ज भिन्न २ रखे या १७ फूल बनावे व १७ नाम नीचे प्रमाण लिखे । अपनी बाईं ओरसे शुरू करके घूमते हुए दाहिनेको आवे, जैसे प्रदक्षिणा देते हैं—

१ अर्हत, २ सिद्ध, ३ आचार्य, ४ उपाध्याय, ५ साधु, ६ अर्हत मङ्गल, ७ सिद्ध मंगल, ८ साधु मंगल, ९ केवलि प्रज्ञप्तर्भ मङ्गल, १० अर्हत लोकोत्तम, ११ सिद्ध लोकोत्तम, १२ साधु लोकोत्तम, १३ केवलीप्रज्ञप्तर्भ लोकोत्तम, (इसको कम करके भी लिख सकता है— के० प्र० धर्म लोकोत्तम), १४ अर्हत क्षरण, १५ सिद्ध क्षरण, १६ साधु क्षरण, १७ के० प्र० क्षरण ।

(२) उसके बाहर दूसरा बलय खींचे—उसमें २४ श्रुत चौबीसीके २४ खाने करके पुञ्ज रखे या फूल बनावे व अलग २ नीचे प्रकार नाम लिखे—

१ निर्वाण, २ सागर, ३ महासाधु, ४ विमलप्रभ, ५ शुद्धामदेव, ६ भीवर, ७ भीदत्त, ८ सिद्धाम, ९ अमलप्रभ, १० उद्धार, ११ अमिदेव, १२ संयम, १३ शिव, १४ पुष्पाञ्जलि, १५ उत्साह, १६ परमेश्वर, १७ ब्रह्मेश्वर, १८ विमलेश्वर, १९ यज्ञोत्तर, २० कृष्णमति, २१ ज्ञानमति, २२ शुद्धमति, २३ भीमद, २४ अनन्तवीर्य । फिर इराबलय खींचे ।

(३) तीसरा बलय-इसमें मी २४कोठे करके २४ पुंत्र रखले या २४ फूठ बनावे या २४ नाम वर्तमान जिनके लिये-
१ ऋषभ, २ अजित, ३ संभव, ४ अभिमन्दन, ५ सुमति, ६ पद्मप्रभ, ७ सुपर्श्व, ८ चन्द्रप्रभ, ९ पुष्यदंत, १०
सीतल, ११ श्रेयांश, १२ वासुदेव, १३ विमल, १४ अग्रन्त, १५ धर्म, १६ सांति, १७ कुन्धु, १८ आर, १९ मल्लि,
२० मुनिमुद्रत, २१ नभि, २२ नेमि, २३ पार्श्वनाथ, २४ बद्धमान । इसके आगे चौथा बलय खींचे ।

(४) चौथा बलय-इसमें मी २४ कोठे खींच करके २४ पुंत्र रखले या २४ फूठ बनावे या २४ नाम भविष्य
जिनके लिये-

१ महापथ, २ सुरप्रभ, ३ सुप्रभ, ४ स्वयंप्रभ, ५ सर्वायुत्र, ६ जगद्देव, ७ उद्दामग, ८ प्रभादेव, ९ उदंकरदेव,
१० प्रभकीर्ति, ११ जयकीर्ति, १२ पूर्णबुद्धि, १३ निःकषाय, १४ विमलप्रभ, १५ बहुलप्रभ, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्ति,
१८ समाधिगुप्ति, १९ स्वयंभू, २० कन्दर्प, २१ जयनाथ, २२ विमल, २३ दिव्यवाद, २४ अनन्तवीर्य । इसके आगे
पांचवा बलय खींचे ।

(५) पांचवा बलय- इसमें २० कोठे करके २० पुत्र रखले या २० फूठ बनावे या नीचे लिये २० नाम विदेशके
वर्तमान तीर्थकरोंके लिये-

१ सीमंजर, २ युगमन्वर, ३ साहू, ४ सुबाहू, ५ संजातक, ६ स्वयंप्रभ, ७ ऋषामानन, ८ भ्रान्तगीर्ष, ९ सुरेप्रभ,
१० विशालप्रभ, ११ वज्रभर, १२ चन्द्रामन, १३ चन्द्रबाहू, १४ सुजङ्गम, १५ ईश्वर, १६ नेमिप्रभ १७ वीसेन, १८
महाभद्र, १९ देवयश, २० अजितवीर्य इसके आगे छठा बला बली खींचे-

(६) छठा बलय-इसमें आचार्यके छत्तीस गुणके लिये छत्तीस कोठे करे, ३६ फूठ बनावे या उनमें इनमें इनने की पुत्र
करे या गुणोंके नाम नीचे प्रमाण लिये-

१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ भारिनाचार, ४ तपाचार, ५ वीर्यीचार, ६ आशुन तप, ७ असोदर्य, ८ वृत्ति
परिसंस्थान, ९ रस परित्याग, १० विविक्षित्ययासन, ११ काण्डेय, १२ प्रायश्चित्त, १३ विनय, १४ वेयावृत्त, १५
स्वाध्याय, १६ व्युत्सर्ग, १७ ध्यान, १८ उत्तम धर्मा, १९ उत्तम मार्ग, २० उत्तम मार्ज, २१ उ० मत्प, २२ उ०
गौच, २३ उ० संयम, २४ उ० तप, २५ उ० त्याग, २६ उ० आर्किचन, २७ उ० ब्रह्मवर्ष, २८ मनोगुप्ति, २९ वचभ-
गुप्ति, ३० कायगुप्ति, ३१ सामायिक, ३२ नन्दना, ३३ स्वतन, ३४ प्रतिक्रमण, ३५ स्वाध्याय, ३६ कायोत्सर्ग ।
इसके आगे सातवां बलय खींचे-

मातृवां बलय-इसमें २५ कोठे करे, २५ पुंज रखे या २५ फूठ बनावे या २५ गुण उगाध्यायके नीचे प्रमाण लिखे-
 १ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग, ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रसङ्गति, ६ ज्ञातुवर्षकथा, ७ उपासकाध्ययन,
 ८ अन्तकृद्वांग, ९ अनुत्तरोपपादिकांग, १० प्रश्नव्याकरण, ११ विपाकसूत्र, १२ उत्पादपूर्व, १३ अग्रायणी, १४ वीर्या-
 नुवाद, १५ अस्तित्वास्ति प्रवाद, १६ ज्ञानप्रवाद, १७ सत्यप्रवाद, १८ आत्मप्रवाद, १९ कर्मप्रवाद, २० प्रत्याहार, २१
 विद्यानुवाद, २२ कल्याणवाद, २३ प्राणवाद, २४ क्रियाविद्याल, २५ त्रैलोक्यविन्दु । इसके आगे आठवां बलय खींचे—
 (८) आठवां बलय-इसमें २८ कोठे करे, २८ पुञ्ज रखे या २८ फूठ बनावे या २८ गुण साधुके नीचे

प्रमाण लिखे—

१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य, ३, अचीर्य, ४ ब्रह्मचर्य, ५ परिग्रह त्याग, ६ ईर्ष्या समिति, ७ माषा स० ८ एषगा
 म०, ९ आदाननिक्षेपण स०, १० व्युत्सर्ग स०, ११ सर्वश्रेन्द्रिय जय, १२ रसनेन्द्रिय जय, १३ घ्राणेन्द्रिय जय, १४ चक्षु-
 रिन्द्रिय जय, १५ श्रोत्रेन्द्रिय जय, १६ सामायिक, १७ वन्दना, १८ स्तवन, १९ प्रतिक्रमण, २० स्वाध्याय, २१ कायो-
 त्पर्ग, २२ भूमिस्वयन, २३ अस्नान, २४ वस्त्रत्याग, २५ केशलोच, २६ दन्तचावन, २७ एतमुक्त, २८ स्या मोजन ।
 इसके आगे नवमा बलय खींचे ।

(९) नवमां बलय-इसमें ४८ कोठे करे, ४८ पुञ्ज रखे व ४८ फूठ बनावे व ४८ ऋद्धे नीचे प्रमाण लिखे ।

यहां इन ऋषियोंके चारक मुनियोंका संकेत है—

१ केवलज्ञान, २ मनःपर्यय ज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ कोष्ठबुद्धि, ५ पादानुमागुद्धे, ६ बीजबुद्धि, ७ संमिन्नश्रोत्र,
 ८ दूरस्पर्श, ९ दूरास्वादन, १० दूर घ्राण, ११ दूरावलोकन, १२ दूराश्रण, १३ दक्ष पुरिता, १४ चतुर्दशपुत्रित्त, १४
 प्रत्येकबुद्धित्त, १६ वादित्त, १७ जलादि चारणऋद्धे, १८ आकाश गमन, १९ अणिमादि ऋद्धे, २० अन्तर्मानादि
 ऋद्धि, २१ उग्रतप, २२ दोषतप्त, २३ तप्तप, २४ महातप २५ घोतप, २६ घोर पाकन, २७ घोर ब्रह्मचर्य, २८
 मनोबल, २९ बचन बल, ३० काय बल, ३१ आमर्षौषधि, ३२ क्षैलीषधि, ३३ जलीषधि, ३४ मलीषधि, ३५ विडोषधि,
 ३६ सौषधि, ३७ आस्थविष, ३८ दृष्टयवेष, ३९ आशीविष, ४० दृष्टवेष, ४१ क्षीरश्रावि, ४२ मधुश्रावि, ४३ घृत-
 श्रावि, ४४ अमृतश्रावि, ४५ अक्षीणमहानस, ४६, अक्षीणमहालय, (४७) १४५३ गणना, (४८) २९४००० तीर्थका
 समास्थित मुनि ।

मण्डलके कोनोंमें चार कोठे बनावे-उनमें चार गुलदस्ते बनावे या नीचे प्रमाण क्रमसे लिखे—

(१) ९२५५३२७९४८ अकृत्रिमजिनमूर्तयः । (२) ८५६९७४८१ अकृत्रिम जिनमन्दाः । (३) स्वाहादपरम जिनामः । (४) निश्चयव्यवहारस्त्रयस्वरूप जिनवर्मः ।

इस तरह इस मण्डलमें कुल २५० कोठे बनाये-मण्डलको बहुत सुन्दर व दर्शनीय बनाना चाहिये । हम चांदी, रांगा आदि षातुओंके चूर्णसे या अन्य किसी चूर्णसे जिनमें प्रतिष्ठा पूर्ण होने तक त्रस जन्तु न पड़े, मंडल बना सकते हैं, ऊपर सुन्दर चन्दोबा होना चाहिये, तीन छत्र मध्यमें बंधे हों, चमरादिसे सुसोभित हो । मंडलके ऊपर न स्थापना रखना चाहिये न कुछ चढाना चाहिये । बह मात्र स्मृति करानेके लिये है । सर्व दर्शकगण देख कके आने मार्गोंका निर्मल करे यह प्रयोजन है । मण्डलको चौकी पर चढ़ विछाकर भी बना सकते हैं ।

१२-मण्डलमें श्री जिनधिष स्थापना-याग मंडलकी पूजा गर्भकर्याणकके एक दिन पहले कानी चाहिये । इसके एक दिन पहले श्री जिनमन्दिरसे प्रतिष्ठित विम्ब लाकर मध्य वेदीमें विराजमान करना चाहिये । विम्बको रथमें या पालकीमें यथायोग्य उत्सवके साथ लाना व विराजमान करना उचित है तथा इस वेदीमें आठ मङ्गल द्रव्य जो सुन्दर बने हों स्थापित करना चाहिये । अर्थात् १ छत्र, २ ध्वजा, ३ कलश, ४ चमरा, ५ ठाना (सप्रतिष्ठिता), ६ झारी, ७ दर्पण, ८ पंखा ।

१३-याग मण्डलकी पूजाके लिये तयारी-जिम दिन याग मण्डलको पुनः हो मण्डलमें स्त्री पुरुषोंको यथायोग्य बैठनेका प्रबन्ध टिकट द्वारा किया जाये । जो प्रबन्धकर्ता हों उनको प्रबन्ध सम्बन्धी खाम टिकट दिये जावें । जितने पात्र पहले कहे गये हैं उनमें लौकिक देवोंको छोड़कर और सब उा स्थित हों । उा में प्रतिष्ठाचार्य, हन्द्र तथा मुख्य यजमान जो तीर्थकरका पिता है ये तीस नीचे प्रकार क्रिया कके शुद्धि करें । अन्य मय पात्र बैठे रहें । उतार प्रनिष्ठाचार्य समय २ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करें । सामग्री तैयार कानेवाले, खवनाकर्मी व प्रबन्धक इस शुद्धि विधानमें शरीक न हों तो हर्ज नहीं है । सब शुद्ध वस्त्र सुन्दर केसरिया रंगे हुये पहनें । आचार्य ज्वेन वस्त्र पहने । प्रायः बस्त्रोंमें बिा मिले धोती डुपट्टे पहने जावें जिससे शरीर इलका रहे, पसेवकी रज निकल सके व शुद्ध पत्र प्रवेश कर सके ।

१४-अङ्गशुद्धि, न्यास व सकलीकरण क्रिया-जब सब पात्र यथायोग्य आपन पर याग मण्डलके सामने बैठ जावें तब अङ्गशुद्धि विधान आरम्भ करे-

(१) नीचे लिखा मन्त्र पठना शुद्ध जल अपने ऊपर व दूपों पर छिड़के-अथोत् अमृत खान करे -
 ॐ ह्रीं अमृतोद्भवे अमृतधर्षिणि अमृतं सावय सं सं ह्रीं ह्रीं बृह बृहं द्रां द्रां द्रां द्रां द्रां द्रां द्रां द्रावय द्रावय सं सं ह्रीं ह्रीं ॐ साः स्वाहा ।

इसके पहले सब कोई तीन बार गमोकार मंत्र पढ़ लेवें तब अमृत खान करें ।

(२) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़कर अपनी २ घोतीको स्पर्श करें—

धोतांतरीयं विद्युर्जातिसूत्रः, स्रष्टु प्रंथितं धौनवीन श्रुद्धं । नगनत्वलब्धिर्न भवेन्न यावत् सत्रार्पते अमृत-
सुरभूम्याः ॥

(३) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ अपना २ डुपट्टा स्पर्श करे—

खंड्वानमध्वदृक्काया विष्णुसहस्रनामिनां चतुर्दश । सन्धार्यते पीतासितांशुवर्णमंगोरश्चिच्छाद् दधु ॥

(४) फिर अंग शुद्धिके लिये सर्व अंगमें नौ स्थानोंमें चंद्रम लगावे तब नीचे लिखा मंत्र पढ़े—

नौ स्थान—१ ललाट (मस्था), २ मस्तक (सिर), ३ गला, ४ छाती, ५-६ दोनों बाहु, ७ पैर, ८ नाभि,

९ पीठ ।

मंत्र—“ ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं वाः मम सर्वांगं शुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा । ”

(५) फिर मालाको चाहे रत्नकी हो या मोतीकी हो या सुवर्णकी हो या पुष्पाकी हो या गूये हुये सूती हो नीचेका श्लोक पढ़कर धारण करे—

जिनां धिसूमिरुक्तुरितां सजंसे, स्वयंबरं यज्ञधिधानपत्नी । करोतु यत्वाहनतः पहे नोरितोत्र जालामु (रो) करोमि ॥

(६) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ मुकुट धारण करे—

शीर्षणपशुमन्मुकुटं त्रिलोकी हर्षसिराव्यस्य च यदृधंयं । दधामि वापोर्मिकुलग्रहंतु रत्नाह्य मालामिह चिगंगं ॥

(७) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़कर ऋणमालाको पहने—

त्रेवेयकं मौक्तिकदामधाम धिराजितं स्वर्णं निबद्धसुतं । दधेऽध्वरापणं विसर्पणेच्छुर्महायना भोगनिरूपणांके ॥

(८) फिर गलेमें हार डाले तब यह श्लोक पढ़े—

सुक्ताबलीगोस्तनवद्द्रमाला, विभूषणान्युत्सवनाकभाजां । यथाहंसं सगंगतानि यज्ञलक्ष्मी समालिगनकुदधेऽहं ॥

(९) फिर कानोंमें कुंडल पहने तब नीचे लिखा श्लोक बोले—

एकप्र आस्थानपरम्रसौमः सेषां विधातुं जिनपस्य भक्त्या । रूपं परापृथग् च कुण्डलः प विषादयसे ह्य कुडले द्वे ॥

(१०) फिर मुजाओंमें मुजन्धन पहने तब नीचे का श्लोक पढ़े—

मुजासु षेयूरमपास्ततुष्टवीर्यस्य सम्यक् जयकृत् ध्वजांके । दधे निधीनां नभकैश्च एतैर्निर्मंडितं सदृग्रथितं सुवर्णं ॥

(११) फिर नीचेका श्लोक पढकर यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहने या बदले—

यज्ञार्थमेवं सृजतादिचक्रेश्वरेण चिह्न विधिभूषणानां । यज्ञोपवीतं चिततं हिरतनत्रयस्य मार्गं विदधाम्यतोऽहं

(१२) फिर नीचेका श्लोक पढकर कटिसेखला या काशनी परे—

अन्यैश्च दीक्षां यजनस्य गाढ कुर्वद्भिः कटिस्त्रुमुत्थैः । संभूषणैर्भूषयतां शरीरं, जिनेन्द्रपूजा सुखदा घटेत ॥

नोट—इन गइनोंका पहनना इन्द्रके लिये आवश्यक है ।

(१३) फिर नीचेका श्लोक पढकर नियम करे कि जबतक प्रतिष्ठाका कार्य समाप्त न होना व्यापारादिको चिन्ता छोड़ता हूं व एरुचित होकर सर्व प्रतिष्ठाका कार्य अरूंगा ।

विधेविंघातुर्यजनोत्सवेऽहं गेहादिसूच्छीर्षपनोदयामि । अनन्यचेताः कुत्रिमादयामि, स्वर्गादि लक्ष्मीमपि क्षापयामि ॥

(१४) फिर अङ्ग रथके लिये पञ्चमेष्टी दानक अ सि आ उ सा पांच अक्षरोंको क्रमसे मस्तकमें, ललाटमें, नेत्रोंके मध्यमें, कण्ठमें व वक्ष स्थलमें धारण करे । फिर आचार्यभक्ति, सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति तथा चारित्र्यभक्ति पढ़ी जावे, फिर नी वार णमोकार मन्त्र मनमें पढकर कायोत्सर्ग करे व अपने दोषोंकी आलोचना करे । फिर—

(१) ॐ हां णमो अरुन्ताणं हां अंगुष्ठाभ्यां नमः । ऐसा मन्त्र पढकर दोनों अंगुठे शुद्ध करे अर्थात् पानीमें डबोधे या पानी छिड़के ।

(२) ॐ ह्रीं ह्रीं कथां सिद्धाण ह्रीं तजनीभ्यां नमः, तजनी दोनों अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(३) ॐ ह्रीं ह्रीं णमो आश्रीयाणं हूं मध्यमाभ्यां नमः, मध्यमा बीचकी दोनों अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(४) ॐ ह्रीं ह्रीं णमो उवज्झायाणं ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः, दोनों अनामिका अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(५) ॐ हां णमो लोये सव्वसाहूणं, वः कर्निष्टकाभ्यां नमः, दोनों सबसे छोटी अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(६) ॐ वां ह्रीं हूं ह्रीं हः करत्तलकरपृष्ठाभ्यां नमः—दोनों हाथोंको दोनों तरफसे शुद्ध करे ।

(७) ॐ ह्रीं णमो अरुन्ताणं हां मम शीर्षं रथ रथ स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर मस्तक पर पुष्प डाले ।

(८) ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वदनं रथ रथ स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर अपने चेहरे (मुख) पर पुष्प क्षेपे ।

(९) ॐ हूं णमो आश्रीयाणं हूं हृदयं मम रथ रथ स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर छाती पर पुष्प डाले ।

(१०) ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं ह्रीं मम नाभिं रथ रथ स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर नाभि पर पुष्प क्षेपे ।

- (११) ॐ ह्रः णमो लोए सवसाहूणं हः मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा ।
- (१२) ॐ ह्रां णमो अरहंताणं हां पूर्वदिशात् आगत विद्वान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर पूर्व दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे । (१३) ॐ ह्रीं णमो सिद्धिण ह्रीं दक्षिण दिशात् आगतविद्वान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर दक्षिण दिशामें पुष्प क्षेपे ।
- (१४) ॐ हूं णमो आहरीयाण हूं पश्चिमदिशात् आगतविद्वान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर पश्चिम दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे । (१५) ॐ ह्रीं णमो उवञ्जायाणं ह्रीं उत्तरदिशात् आगतविद्वान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर उत्तर दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे ।
- (१६) ॐ ह्रः णमो लोए सवसाहूणं हः सर्वदिशात् आगत विद्वान् निवारय निवारय रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर सर्व दिशाओं पर पुष्प क्षेपे ।
- (१७) ॐ हां णमो अरहंताणं हां मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर अपने भीतर अङ्गपर पुष्प क्षेपे ।
- (१८) ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वस्त्रं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर अपने वस्त्रोंपर पुष्प क्षेपे ।
- (१९) ॐ हूं णमो आहरीयाण हूं मम पूजाद्रव्यं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर पूजाकी सामग्रियों आदिपर पुष्प क्षेपे ।
- (२०) ॐ ह्रीं णमो उवञ्जायाण ह्रीं ह्रीं मम स्थलं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर पूजाके स्थानपर पुष्प क्षेपे ।
- (२१) ॐ ह्रः णमो लोए सवसाहूणं हः सर्वं जगत् रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढ़कर चारों तरफ लोगों पर पुष्प क्षेपे ।
- (२२) ॐ क्षीं क्षीं क्षे क्षः यह मन्त्र पढ़ सर्व दिशापर पुष्प क्षेपे । (२३) ह्रां ह्रीं हूं ह्रीं हः यह मन्त्र पढ़ सब दिशापर पुष्प क्षेपे ।
- (२४) ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं श्रावय श्रावय सं सं ह्रीं ह्रीं बल्लू बल्लू द्रां द्रां द्रां द्रां द्रां द्रावय द्रावय ठः ठः स्वाहा । इस मन्त्रको पढ़कर तुल्लुमें पवित्र जल ले मस्तक पर डाले । (२५) फिर ऐसा ध्यान करे कि अपने मस्तकरूपी मेरुपर्वतपर श्री पार्वत्याथ जिनेन्द्र स्थापित हैं अर देवोंके समूह अभिषेक कर रहे हैं, उस जलसे मैं पवित्र मया हूं ।
- (२६) फिर नीचे लिखे मन्त्रोंको नौबार ३ पे— ॐ ह्रीं णमो अरहन्ताणं णमो सिद्धाणं स्वाहा । ॐ ह्रीं णमो आहरीयाणं णमो उवञ्जायाणं स्वाहा । ॐ ह्रीं णमो लोए सवसाहूणं स्वाहा—पीछे मन्त्रमें अपने दोषोंकी आलोचना करे ।
- (२७) फिा दोनों शंथोंकी अंगुलियोंसे अपने हृदयका स्पर्श और यह मन्त्र पढ़े— ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां स्वाहा ।

- (२८) इसी तरह ललाटको स्पर्श व षटे-ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं स्वाहा ।
 (२९) इसी तरह सिरके दाहिनी ओर-ॐ हू णमो आश्रीयाणं हूं स्वाहा ।
 (३०) इसी तरह सिरके पीछे-ॐ ह्रीं णमो उवल्झायाणं ह्रीं स्वाहा ।
 (३१) इसी तरह सिरके बाईं ओर-ह्रः णमो लोए सव्वसहूणं ह्रः स्वाहा ।

(३२) नीचे लिखा मन्त्र ७ बार पढ़कर पुष्पोंमें फूंक देकर सर्व पात्रोंपर व प्रत्येक आदि पर क्षेपे-ॐ नमोऽस्मि ते सर्वे रक्ष रक्ष हू पट् स्वाहा । (३३) फिर नीचे लिखा मन्त्र षट् पुष्पोंको फूंक देकर सर्व विघनोंकी बातिके लिये सर्व दिशाओं पर क्षेपे-ॐ क्षू हं पट् किरिटि वातय घातय परिघ्नान् स्फोटय २ सप्त खण्डान् कुरु कुरु छिन्द छिन्द परमन्त्रान् मिद मिद क्षां क्षवः फट् स्वाहा ।

द्वितीय अध्याय ।

शुभाशुभफलकी पूजा ।

ऊपर कहे अनुसार प्रतिष्ठाके मुख्य पात्र जब अपनी शुद्धि कर चुके व रक्षाका उपाय कर चुके तब सबको खड़े होकर व हाथ जोड़कर नीचे लिखी स्तुति पढ़नी चाहिये ।

स्तुति

दोहा—वन्दौ श्री अरहंतको, वन्दौ सिद्ध महान् । आचारज उषझाय मुनि, वन्दौ करके ध्यान ॥

पद्यों छन्द ।

जय वीतराग सर्वज्ञ देव, तुम ही मङ्गलकर देव देव । तुम ही अवधर्ता पूज्य देव, तुमरी शरणा सुख-हेतु देव ॥१॥
 तुम अश्वजीत तुम काम जीत, तुम द्वेषजीत तुम लाम जीत । तुम रागजीत तुम कमजीत, तुम मोहजीत तुम मानजीत ॥२॥
 तुम जगतध्येय तुम सत्यग्यान, तुम ही गुण निमलके निधान । तुम समदर्शी समता अधीश, भवि भक्ति करै निज वाय शीस ॥३॥
 तुम ही जग पावन हो उदार, तुम ही दाता निज ज्ञान धार । तुम ही भव श्रमण विगष्टकार, तुम ही भवदधिसे पारकार । ४॥
 तुम ही प्रमन्न तुम नदि निराश्र, तौ भी भक्तकी पूर्ण आश्र । यह महिमा कैसे कशी जाय, तुम ध्यानगम्य योगी सह य ॥५॥
 वंदे तब पद हम बारवार, यह कार्य होय निर्विघ्न पार । बल्याणक पञ्च करन महान्, उमगे हम तुमरी शरण आन ॥६॥

सब कार्य होंग सुख शांतिकार, भोवें मङ्गल दिन दिन उदार । राजा पिरजा सब सुखी होय, जिनघर्मतनो लघोत होय ॥७॥
हम ज्ञानहीन विधि से अज्ञान, तब भक्ति बरे द्विय गुण पिछान । जो भूलें चूकें क्षम्य माथ, विमती करते ह्य जोड हाथ ॥८॥

फिर अभिषेकपूर्वक नित्यनियम पूजा व सिद्ध पूजा करे ।

अभिषेककी संक्षेपमें विधि—

(१) उच्च आसन पर चौकी या थाली विराजमान करे उस समय यह मन्त्र पढ़े—ॐ ह्रीं अहं क्षं ठः ठः श्री पीठ-
स्थापनं करोमि स्नाहा ।

(२) फिर उस थाली या चौकीका पवित्र जलसे घोवे तब यह मन्त्र पढ़े—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽऽते भगवते श्रीभते पवित्रजलेन श्री पीठमखालनं करोमि स्नाहा ।

(३) फिर उपपर माथिषा बनाकर श्री जन्म प्रतिमाको स्थापित करे तब यह मन्त्र पढ़े—ॐ ह्रीं अहं बमतीर्थ-
आदिमाथ (यहां अन्य तीर्थकारका नाम ले जिस प्रतिमाको विराजमान करे) भगवान् यह पांडुकशिला पीठे तिष्ठ २ स्नाहा ।

(४) फिर शुद्ध जल प्रायुक्त लेकर प्रतिमाका अभिषेक करे तब यह पढ़े—

श्रीमद्भिः सुरैस्त्रिनिसगधिभ्रूलैः पुण्याथायाभधाह्नैः । शीतश्चाकृघटाश्चितरथितथैः सन्नापचिच्छेदकैः ॥

तृषणोद्रेकहरै रजः प्रशमकैः प्राणोपसैः प्राणिनां । तोयैर्जैनधचोऽसृतातिशयिभिः संस्नापयामो जिनम् ॥
सौरभेन परां शुद्धिं, धारिणा तीर्थधारिणा । स्वभाषपदमापन्नं सिद्धं, संस्नापये जिनम् ॥

(६) गन्धोदक दो बड़े घुखके ग्लासमें भरे व दो ग्लास केवल जलसे भरे उसमें लवंग डाल दे । एक प्रवीण पुरुषको एक ग्लास गन्धोदकका व एक ग्लास जलका दे दे जो सर्व दर्शक पुरुषोंके पास ले जावे जो मस्तकादियर लगवें । इसी तरह एक प्रवीण स्त्री या कन्याको दो ग्लास दे दिवे जावें, यह स्त्रियोंको नम्रबार देवे । गन्धोदक गिरे नहीं इससे ग्लासमें देना ठीक है उगली लवोकर ले लिया जावे फिर उनको दूमेमें लवोकर शुद्ध कर लिया जावे । (७) अभिषेकके पीछे इन्द्र मुख्यतासे नित्यप्रति होनेवाली संस्कृत, देव-ब्राह्म-पुरुज्जा करे जो पाठके अन्तमें दी हुई है । (८) फिर शान्तिके अर्थ तीनों कुण्डोंमें होम किया जावे ।

होमकी विधि—तीन कुण्डोंमें चौकोर □ कुण्ड जो तीर्थकारके निर्वाणकी अग्रिका प्रद्योतक है मध्यमें बनावे, उसकी दाहिनी तरफ अद्वचन्द्रोकार ” कुण्ड बनावे जो सामान्य केवलीकी निर्वाणकी अग्रिका प्रद्योतक है और बाई तरफ

त्रिकोण Δ कुण्ड बनावे जो गणधरके निर्वाणकी अधिकता बतातेवाला है। एक हाथ गहरे व इतनी ही इभकी सुत्रायें हों, अर्द्धचन्द्रका व्यास आध हाथहा हो। ये कुण्ड तीन कटनीदार हो। तीनों कटनीपर मन्त्र आर माथिपा बनावे—

(१) नीरजसे नमः—यह पठकर जहाँ होम करना है उस भूमिको पवित्र करे। (२) द्रुपमथनाय नमः—यह पढ़कर जहाँ डामका आसन बिछावे। हरएक कुण्डमें दो इन्द्र नियत हों। एक होमकी मामग्रा डाले, दूसरा घों काष्ठको कड़लीसे ढाले। फिर हरएक इन्द्र आसन पर बैठ जावे। (३) स्त्रीलक्षणध्याय नमः—यह पठकर प्राशुक्र जरुसे चारों ओर छींटे देवे। (४) विश्वलाय नमः—यह पठकर भूमियें पुष्प चढ़ावे। (५) अक्षताय नमः—यह पढ़कर जहाँ अक्षत चढ़ावे। (६) श्रुतधूपपाथ नमः—यह पढ़कर धूपपाथमें धूप सेवे। (७) ज्ञानोद्याताय नमः—यह पठकर दोष चढ़ावे या दोषसे आरती करे। (८) परमसिद्धाय नमः—यह पठकर नैवेद्य चढ़वे।

(९) कुंडमें साथिधा बनावे और नीचे प्रकार लकड़ी इतनी चुने जिसकी ली कुठ ऊँची कुण्डसे रहे, बहुत अधिक न रहे जिससे कोई प्रकारका मय हो। लाल चन्दन, सफेद चन्दन, कपूर, अगर, पीपल व आककी लकड़ी व अन्य शुद्ध लकड़ी जिसमें जन्तु न हों।

(१०) होमकी सामग्री—चन्दनका तुगादा, अगुरुका तुगारा, बादाम व पिस्ताकी गिरी, छुहरा, तोडा हुआ खोपडा, किसमिस, रुक्का देशी, लौंग, कपूर, छोटी इलायचीके दाने आदि सुगन्ध द्रव्योंको धूप बनावे। करीब ३ सेर हो व इतना ही शुद्ध या हो।

(११) फिर नीचे लिखा मन्त्र पठकर होमकुण्ड व पात्रोंकी शुद्धि अलसे करे अर्थात् जल छिडके।
 ॐ ह्रीं नमः सर्वज्ञाय सर्वलोकमान्याय सर्वतीर्थकराय श्री शान्तिनाथाय परमपवित्राय पवित्रजलेन होमकुण्डशुद्धिं प्राप्तशुद्धिं च करोमि स्वाहा।

(१२) फिर नीचे लिखा मन्त्र पठ कुंडमें कपूर जलाकर अर्घ्य अक्से—कुण्डमें थोड़ी सुखी घास भी रख दें।
 जैनेन्द्रबाबयैरिन सुप्रसन्नैः, सशुद्धरुद्रभोगताम्रिकीलेः। कुण्डस्थिते भेद्यनशुद्धबह्वी, संयुक्षणं सांपतमातनोमि।
 उसहायि जिणे पणमाभि सया, अमलां किरजो वरधपतरू।

सथ कामसुहा मन्त्र रक्ख सया, पुरविज्जुण्ही पुरविज्जुण्ही ॥ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं स्वाहा।
 (१३) फिर तीनों पवित्र अग्निको अर्घ्य चढ़ावे। प्रथम तीर्थकारकी अर्घ्यको जो चौथे कुण्डमें है ऐषा बोलकर अर्घ्य चढ़ावे—

तीर्थस्वास्थान्यमद्योत्सवे यं, सक्तयानताश्रोन्द्रतिरीटजातम् । आनचुंरिन्द्राः सकलास्तमेतं, यजे जलाद्यैरिह
गार्हपत्यम् ॥

ॐ ह्रीं गार्हपत्य प्रणिताराग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । अर्घं । फिर त्रिकोण कुण्डको अग्नेको यह कह अर्घ देवे—
गणाधिपस्थान्त्यमहोत्सवे यं, सक्तयानताश्रोन्द्रतिरीटजातम् । आनचुंरिन्द्राः सकलास्तमेतं, यजाथहेद्याह्वनी-
यज्ञश्रिम् ॥

ॐ ह्रीं आह्वनीय प्रणिताराग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । फिा अर्घचन्द्राकार भायेको अर्घं चढावे व यह कहे—
श्रीक्षेत्रलीशान्त्यमहोत्सवे य, सक्तया ननाश्रोन्द्रतिरीटजातम् । आनचुंरिन्द्राः सकलास्तमेतं, यजामहे दक्षिण-
द्विपमश्रिम् ॥

ॐ ह्रीं दक्षिणावर्तं प्रणिताराग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । अर्घं ।

(१४) फिा सिद्धार्चा मन्मन्धी पीठिका मन्त्रोंसे होम करे ।

पीठिकाक्षे मन्त्र—ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥२॥ ॐ परमजाताय नमः ॥३॥ ॐ अनु-
पमजाताय नमः ॥४॥ ॐ स्वप्रधानाय नमः ॥५॥ ॐ अचलाय नमः ॥६॥ ॐ अथावाधाय नमः ॥७॥ ॐ अन्तश्चानाय नमः ॥८॥
ॐ अन्तश्चानाय नमः ॥९॥ ॐ अन्तदर्शनाय नमः ॥१०॥ ॐ अन्तवीर्याय नमः ॥११॥ ॐ अन्तमुखाय नमः ॥१२॥ ॐ
नीरजसे नमः ॥१३॥ ॐ निर्मलाय नमः ॥१४॥ ॐ अच्छेद्याय नमः ॥१५॥ ॐ अमेद्याय नमः ॥१६॥ ॐ अत्राय नमः
॥१७॥ ॐ अमराय नमः ॥१८॥ ॐ अप्रमेयाय नमः ॥१९॥ ॐ अगमंसाय नमः ॥२०॥ ॐ अश्लोमाय नमः ॥२१॥
ॐ अविलीनाय नमः ॥२२॥ ॐ परमबनाय नमः ॥२३॥ ॐ परमकाष्ठायोर्गलाय नमः ॥२४॥ ॐ लोकाग्रवासिने नमो
नमः ॥२५॥ ॐ परमसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२६॥ ॐ अर्हतिमद्भ्यो नमो नमः ॥२७॥ ॐ केरलिमिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२८॥
ॐ अन्तःकृत्पिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२९॥ ॐ परस्परसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३०॥ अवादिपरंपासिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३१॥
ॐ अवाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३२॥ ॐ सम्यग्दृष्टयासन्नमयनिर्वाणमूर्जाहोन्द्राय स्वाहा ॥३३॥ इम ताह ३३ मंत्र
पठ आहूति देकर फिा नीचे लिखा आश्रीर्वादसूचक मंत्र पठ आहूति देवे और पुष्पा ले अपने सर्व पाप बैठनेवालोंके
ऊपर डाले ।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु । अयमृःशुविनाशनं भवतु । समाधिमरणं भवतु ।

अथ जाति मन्त्र-ॐ सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥१॥ ॐ अर्जुनमनः शरणं प्रपद्ये ॥२॥ ॐ अर्जुनमनः शरणं प्रपद्ये ॥३॥ ॐ अर्जुनमनः शरणं प्रपद्ये ॥४॥ ॐ अनादिगमस्य शरणं प्रपद्ये ॥५॥ ॐ अनुात्मनः शरणं प्रपद्ये ॥६॥ ॐ रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये ॥७॥ ॐ सम्यग्दृष्टे र ज्ञानमूर्ते र सगस्वति र स्वाहा । ॥८॥ इय ताह जातिमन्त्र पठ आठ आहूति देकर आशीर्वादसूचक नीचे लिखा मन्त्र पठ आहूति दे पुष्प क्षेपे ।

सेवाफल षट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशन भवतु । समाधिसरण भवतु ।
अथ विस्तारक मन्त्र-ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्जुजाताय स्वाहा । २॥ ॐ षट्कूर्पणे स्वाहा ॥३॥ ॐ प्रापपतये स्वाहा ॥४॥ ॐ अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा ॥५॥ ॐ सातकाय स्वाहा ॥६॥ ॐ श्रावकाय स्वाहा ॥७॥ देवमाहा-
णाय स्वाहा ॥८॥ सुब्राह्मणाय स्वाहा ॥९॥ ॐ अनुामाय स्वाहा ॥१०॥ ॐ सम्यग्दृष्टे र विधियते र वैश्राण वैश्राण स्वाहा ।

इसतरह ११ आहूति दे फिर वही 'सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु' । आदि मन्त्र पठ आहूति दे पुष्प क्षेपे ।

अथ ऋषि मन्त्र-ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्जुजाताय नमः ॥२॥ ॐ निश्रयाय नमः ॥३॥ ॐ वीतरागाय नमः ॥४॥ ॐ महाव्रताय नमः ॥५॥ ॐ त्रिपुरायाय नमः ॥६॥ ॐ महायोगाय नमः ॥७॥ ॐ निविद्ययोगाय नमः ॥८॥ ॐ विविषर्द्धये नमः ॥९॥ ॐ अङ्गवराय नमः ॥१०॥ ॐ पूर्ववराय नमः ॥११॥ ॐ गणराय नमः ॥१२॥ ॐ परमर्षिभ्यो नमो नमः ॥१३॥ ॐ अनुामजाताय नमो नमः ॥१४॥ ॐ सम्यग्दृष्टे र भूति भूयते नगरपते नगरपते कालश्रमण काल श्रमण स्वाहा ॥१५॥

ऐसी १५ आहूति दे कर वही निम्न लेखित आशीर्गर सूचक मन्त्र पठ आहूति दे पुष्प क्षेपे ।

'सेवाफल षट् परमस्थानं भवतु । अपमृत्युविनाशनं भवतु । समाधिसरण भवतु ॥'

अथ सुरेन्द्र मन्त्र-ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्जुजाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ दिव्यजाताय स्वाहा ॥३॥ ॐ दिव्याधिजाताय स्वाहा ॥४॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥५॥ ॐ सौमर्माय स्वाहा ॥६॥ ॐ कल्याधिपतये स्वाहा ॥७॥ ॐ अनु चरण स्वाहा ॥८॥ ॐ परंपरेन्द्राय स्वाहा ॥९॥ ॐ अहमिन्द्राय स्वाहा ॥१०॥ ॐ परमाहंताय स्वाहा ॥११॥ ॐ अनुामाय स्वाहा ॥१२॥ ॐ सम्यग्दृष्टे र कल्पयते र दिव्यमूर्ते र वज्राम्बु र स्वाहा ॥१३॥ इत तरह १३ आहूति दे वही पछिले लिखित आशीर्वादसूचक मन्त्र पठ आहूति दे पुष्प क्षेपे ।

वृत्तिः-

॥ २४ ॥

अथ परमराजादि मन्त्र-ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥ १ ॥ ॐ अहजाताय स्वाहा ॥ २ ॥ ॐ अतुभेन्द्राय स्वाहा ॥ ३ ॥
 ॐ विजयार्च्यजाताय स्वाहा ॥ ४ ॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ परमजाताय स्वाहा ॥ ६ ॥ परमार्हताय स्वाहा ॥ ७ ॥
 ॐ अतुपमाय स्वाहा ॥ ८ ॥ ॐ समग्रदृष्टे २ उग्रतेजः २ दिक्षां नमः २ संत्र पठ आहुति दे पुण्य क्षेपे ॥ ९ ॥

इस तरह ९ आहुति दे वही आशीर्वादसूचक मंत्र पठ आहुति दे पुण्य क्षेपे ।
 (१५) फिर नीचे मन्त्रसे १०८ आहुति देवे- ॐ नमोऽर्च्ये यगवते प्रक्षोणशेषशेषाय दिव्यतेजोशूर्पणे नमः श्री
 क्षांतिनाथाय क्षांतिक्रमाय सर्वविद्याप्रणाशनाय सर्वशोभापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतशुद्रोपद्रवनाशनाय ॐ हां हीं हूं ह्रौं हः अ
 सिं आ उ सा सर्वक्षांति कुरु कुरु स्वाहा । (१६) फिर नीचेकी स्तुति सर्व इन्द्र मिलकर व खड़े होकर पठे—

तुभ्यं नमो दशगुणोजिन्मदिव्यगात्र । कोटिमथाकरनिशाकरजैमतेजः ॥
 तुभ्यं नमोऽतिचिरदुर्जयभातिजात । घातोपजात दशवारगुणाभिराम ॥ १ ॥
 तुभ्यं नमः सुरनिकाथकृतैर्बिहारे । दिव्यैश्चतुर्दशविधातिशयरूपेन ॥
 तुभ्यं नमस्त्रिभुवनधिपतिरथ चिन्ह । श्री प्रातिहार्याष्टकलक्षितार्हन् ॥ २ ॥
 तुभ्यं नमः परम केवलधोषघाते । तुभ्यं नमः कृष्णमस्तपदावलोकं ॥
 तुभ्यं नमो निरुपलाननिरन्धीर्य । तुभ्यं नमो निजनितरनित्यसौख्य ॥ ३ ॥
 तुभ्यं नमः सकलमंगलघस्तुशुख्य । तुभ्यं नमः शिवसुखपदपापहारिन ॥
 तुभ्यं नमस्त्रिजगतुत्तमलोकपूज्य । तुभ्यं नमः क्षरणभूत्रय रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥
 तुभ्यं नमोस्तु नमकेवलपूर्वत्वधे । तुभ्यं नमोस्तु परमेश्वर्योपलब्धे ॥
 तुभ्यं नमोस्तु सुनिष्ठुञ्जरयूथनाथ । तुभ्यं नमोस्तु सुवनजिनयैरुनाथ ॥ ५ ॥

श्री जिनेन्द्रके सामने बड़े भावसे स्तुति पठे । आचार्य इसका भाव सर्व मण्डलीको समझावे । फिर सर्व मण्डली जो
 अथ तक बंठी थी वह भी तथा सर्व प्रतिष्ठिके पात्र मस्तक भूमि पर लगाके दंडात करें ।

(१७) फिर नीचे लिखा मंत्र पठ इन्द्रादि क्षोमप्रसक्तो ललाटमें, दो भुजाओंमें, कण्ठमें व हृदयमें ऐसे पांच
 जगह लगावे ।

रत्नत्रयार्चनमयोत्तमहोममृत्युर्दमकरुमाषहतु वासवदिव्यभृत्सिम् ॥
 षट्खण्डभूमिबिजयप्रभवां विभृत्ति । त्रंलोक्यराज्यविषयां परमां विभृत्सिम् ॥

तथा दो बड़े प्यालोंमें भस्म रखकर एक प्याला पुरुषको व एक प्याला स्त्रीको, सर्व पुरुष व स्त्रियोंको भस्म पांचों अङ्गोंमें लगानेको दें ।

(१८) मण्डलकी पूजा—अब इंद्र तथा मुख्य यजमान (पिता) वे दो मिलकर सामग्री बढावें, पूजन पढानेवाले आचार्यको महायत्ना दें, पूजा शुद्ध स्वासे पढी जावे, अन्य सब धुनें पड़ेले सब पात्र खड़े होकर नीचे लिखे प्रमाण पढ़ें—
ॐ जय जय जय, नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु, नन्द नन्द नन्द, पुनीहि पुनीहि पुनीहि, ॐ नमो आहन्तारणं, नमो मिद्धान, नमो आक्षीषाण, नमो उवल्हायाणं, नमोलोए मठरसाहूणं ।

स्थायक

प्रत्यथिब्रजनिर्जयाश्रिजगुणमाप्तावनन्ताक्रमदृष्टिज्ञानचरित्र । सुखचित्संज्ञास्वभावाः परं
आगत्यान्ननिवेदितार्कितपदैः भस्मशौषडा द्विष्टयो, स्यारोपणसरकृतैश्च यथा गृह्णाध्वमवोधिधिम् ॥४४॥
माषः—गीता छन्द—कर्कशासको हनन कर निजगुणप्रकाशान भासु हैं, अंत अर क्रम रहित दर्शन ज्ञानवीर्यं निवान हैं ।

सुख स्वभावी द्रव्य चित्त सत् सुदृढ परिणतिमें रमें, आइये सब धिप्त चूर्ण पूजते सब अघ बमें ॥
ह्रीं अत्र जिन् प्रतिष्ठा विने सर्वथा मण्डलं का जिनमुनय अत्रावतरत अवतरत संवोषट्, ॐ ह्रीं अत्र जिन् प्रतिष्ठा-
विधाने सर्वथा मण्डलं का । मनुष्य अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः, ॐ ह्रीं अत्र जिन् प्रतिष्ठा विधाने मर्नया मण्डलं का जिन-
मुनय अत्र मग संवदितो भव यव वषट् । (यहां थापना मण्डलके बीचमें न रखके पूजाकी टेबुल ही पर रखके पुष्प
क्षेपण करे ।)

अनुष्ठुत

प्रांशुस्वर्णसणिप्रभाततिष्ठताभृंगारनालोच्छलद्, गंगाभिधुसरिन्सुखोपचिन्मत्पाथो भरेण त्रिधा ।
जन्मभारतिभिभञ्जनीषमिभित्तैर्नोद्भूगन्धालिना, चाये यागनिधिश्चरानघहृते निश्रयसः प्राप्तये ॥४४॥
भाषा—छन्द—चाल—गंगासिंधू बर पानी, सुधरणाझारी फरलानी । गुरु पंचपरमसुखदाई, हम पूज ध्यान लगाई ॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् पतिष्ठोत्सये सर्वज्ञेश्वरजिमनुभिभ्यो जन्मभारामुत्पुविनाशनाय बलं निर्वपामीति स्वाहा ।
छुसुणमलप्रजातैश्च वत्सैः शीतगन्धैर्भञ्जलनिधिमध्ये दुःखदो वाडधामिः ।
तदुपशमनिमित्तं पदकक्षैर्निमजद्—अमरयुवभिरुत्तु सांद्रसाद्रप्रवाहिः ॥४४॥

भाषा-शुद्ध गन्ध लाय मनहारी, भवताप शम्भन कर्तारी। गुरुपञ्च परम सुखदाई, हस पूजें ध्यान लगाई ॥४४४॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वश्रेष्ठर जिनमुनिभ्यो भवातापनिवाहनाय चन्दनं निर्वापीति स्वाहा ।

शशाङ्कसर्पहृद्भिः कमलजननैरक्षतपदाधिरूढैः, आमण्यं ह्युच्चिसरलयाद्यैर्गुणधरैः ।

हसद्भिः सात्राड्याधिपतिचमनाहैः सुरभिभि-जिनार्थाहिपंची विपुलशरपुञ्जैः परिचजे ॥४४५॥

भाषा-शानिसम शुचि अक्षत लाए, अक्षयगुणहित हुलसाए । गुरु पञ्च परम सुखदाई, हस पूजें ध्यान लगाई ॥४४५॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वश्रेष्ठरजिनमुनिभ्यो अक्षयगुणप्राप्तये अक्षतं निवपामीति स्वाहा ।

दुरन्तमोहानलदीप्यदन्तु कामेन नष्टीकृतसाशुविश्वं, तद्गाणराजीशम्भनाय पुष्पयजामि कल्पद्रुमसङ्गतैर्षा ॥४४६॥

भा.-शुभरूपद्रुमन सुखनाले, जग घशाकर काम नशाले, गुरु पञ्च परम सुखदाई, हस पूजें ध्यान लगाई ॥४४६॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वश्रेष्ठरजिनमुनिभ्यो कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निवपामीति स्वाहा ।

पीयूषपिण्डनिवहैर्धृतघाकराश्रययोगोद्भवैनयनचित्तविलासदक्षैः ।

चामोकरादिशुचिआसनसंस्थितैर्षा, हसपूजयाम्यशम्भनाय । ४४७॥

भाषा-पकवान मनोहर लाए, जासे शुद्धरोग शासाए । गुरु पञ्च परम सुखदाई, हस पूजें ध्यान लगाई ॥४४७॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वश्रेष्ठरजिनमुनिभ्यो शुधरोगनिवारणाय नैवेद्यं निर्वापीति स्वाहा ।

अमितमोहतसोविनिमृत्तये घटिस्तमणिप्रभवात्सभिः । अथमहं खलुहीपकनामकैजिनपदाश्रमुजं परिदीपये ॥

भाषा-मणिरत्नसयो शुभ दीपा, तममोहरण उदीपा । गुरु पञ्च परम सुखदाई, हस पूजें ध्यान लगाई ॥४४८॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वश्रेष्ठरजिनमुनिभ्यो मोहापकारविनाशनाय दीप निवपामीति स्वाहा ।

धूपोद्घ्राणैर्यजनविधियु प्रीणिताशेषद्विक्कुरुद्वन्द्वशयगुरुमलयापीडकान् सन्दहद्भिः ॥

अथै कमक्षपणकारणे कारणैरासथाकैर्मयज्ञाधीशानिच बहुविधैर्धूपदानप्रशस्तैः । ४४९॥

भा.-शुभगंधिल धूप चढाऊँ कर्कोके बँका जलाऊँ । गुरु पञ्च परम सुखदाई, हस पूजें ध्यान लगाई ॥४४९॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वश्रेष्ठरजिनमुनिभ्यो अष्टभद्रनाय धूपं निवपामीति स्वाहा ।

निःश्रेयसपदलब्धयै कृतावतारैः प्रमाणपटुभिरिव । स्याद्भाद्रभंगनिकरैर्यजामि सचज्ञमनिशममरफलैः ॥४५०॥

भा.-सुन्दर दिवि भव फल लाए, शिवहेतु सुचरण चढाये । गुरु पञ्च परम सुखदाई, हस पूजें ध्यान लगाई ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वश्रेष्ठरजिनमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वापीति स्वाहा ।

पात्रे सौवर्णे कृत्मानन्दजयषक् पूजाहंतं विस्फुरितानां हृदयेऽत्र ।

तोषाद्यष्टद्रव्यसमेतैश्चुनमर्घं शारतुणाभ्रे धिनयेन मणिक्थमः ॥४५१॥

भा.-सुवर्णके पात्र धराये, शुचि आठों द्रव्य मिलिए, गुरु पंचपरम सुखदाई. हम पूजे ध्यान लगाई ॥४५१॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठात्सने सर्वयज्ञेष्वजिनमुनिभ्यो अमर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(अत्र २५० कोठोंमें स्थापित पुर्योंको अलग अलग अर्घ्य चढाना, थालीमें ही) —

अनन्तकालममद्भवश्रमणभीतितो निर्वाच्य रुन्धन् स्वय शिवोत्तमायमश्नानि ।

जिनेशशिवदशिविश्वनाथमुख्यनामाभिः स्तुत जिनं महामि नीरचन्दनैः फलेरहं ॥४५२॥

भाषा अडिह-काल अनन्ता श्रमण करत जग जीव हैं । तिनको अवसे काढ करत शुचि जीव हैं ॥

ऐसे अहत् तीर्थनाथ पद ध्यायके । पूजू अर्घ्य बनाय सुमन हरषायके ॥ ४५२ ॥

ॐ ह्रीं अनन्त भवाणवयनिनागकानन्तमणतु ॥५ अहंते अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

कर्मकाष्ठहुतमुक् स्वशक्तिः सप्रकाश्यमहनीयभानुभिः । लोकतरवतसबले निजात्मनि संस्थितं शिवमहोपति

यजे ॥४५३॥

भाषा-हरिगीताछन्द-कम-काष्ठ महान जाले ध्यान-अग्नि जलायके । गुण अष्ट लह बृषहरनय निश्चय अनंत निज आत्ममें थिर रूप रहके, सुधा स्वाद लखायके ।

सो अिद्ध हैं कृतकृत्य चिन्मय, अजूं मन उमगायके । ४५३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टरुमनिनाशक निजात्मतत्त्वविमाक सिद्धयमेष्टिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सार्थवाहमनवद्यविथया शिक्षणान्मुनिषहत्तमनां धरं । मोक्षमार्गमल्लुपकाशकं संयजे गुरुपरंपरमेश्वरम् ॥४५४

भाषा-त्रिमंगीछन्द-मुनिगणको पालत आलस डालत आप संभालत परम यती ।

त्रिनवाणि सुहानां शिवलुखदानां अधिजन मानी धर सुमती ॥

दिक्षाके दाता अवसे दाता समसुखमाता ज्ञानपती ।

शुभ पश्चाचारा पालत प्यारा हैं आचारज कमहती ॥

ॐ ह्रीं अनवद्यविद्याविद्योतनाय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

ब्रह्मशांगपरिपूणसञ्छृतं यः परानुपदिशेत पाठतः । बोधतयथाभिहितार्थसिद्धये तानुपास्य यजयामि पाठकान् ४५५

भाषा-त्रोटक छन्द-जय पाठक ज्ञान कृपान नमो, भवि जीवना हरा अज्ञान नमो ॥ ३३ ॥
 ॐ ही ही । निज आत्म सठानिधि धारक हैं । स्वशय वन दाह नियारक हैं ॥४५५॥
 ॐ ही द्वादशांगपरिपूर्णभुनपाठनोद्यत बुद्धिविवोपाध्यायपरशेष्ठभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 उग्रमध्यतपसाभिसंस्कृतिं ध्यायन्माननिनिवेशिनात्मनं । आधकं शिवरमासुखासृते साधुमील्यपल्लवधये-
 ऽर्चये ॥४५६॥

भाषा-दुर्गाविलिख छन्द-सु गग तप द्वादश कर्तार हैं । ध्यान सार सरान प्रचार हैं ॥
 सुकृति वाच अचल गति साधते । सुख सु आत्म जन्य समहारते ॥ ४५६ ॥

ॐ हीं वारतपोऽपिमंच्छगध्यायसाधयनित साधुगामेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अर्हन्नेव त्रिसुवनजानमानदानमण्डल इयो, विप्रश्चंसं निजसतिकृतादखनघोरनोदात् ॥
 संकुर्वन्तत्कृतिरपि स्पष्टमानन्ददायिन्येव । स्मृत्या जलचरुफलैरर्चयामि त्रिवारं ॥४५७॥

भाषा-मालिनीछन्द-अरि हनन सु अरिहन्त दृज्य अर्हन् यनाये । न पाप गलनहेतु संगल ध्यान लाए ॥
 सग सुवकारण संगलकं जगए । ध्यानी छवि तेरी देखते दुख नशाए ॥४५७॥

ॐ हीं अर्हत्परमोष्ठमङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (५)
 रमारं रमारं गुणगणमणिरफारसासथसुचैर्यत्प्राप्त्यर्थं प्रयतति जनो मोक्षयत्तत्त्वेऽनवद्ये ॥
 प्रत्यूहान्त भवभवगतानां प्रधानपक्लृप्त्यै सिद्धानेन श्रतिभतिबलादवये स्वविचार्ये ॥४५८॥

भाषा-चौपाई-जय जय सिद्ध परमसुखकारी । तुम गुण सुसरत कमं निवारी ।
 विप्रसखूय सहज हरगारे । संगलभय संगल करतारे ॥४५८॥

ॐ हीं सिद्ध मङ्गलेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (७)
 रागद्वेषौरगपरिहासे मन्त्ररूपस्वभावा, मित्रे शत्रौ समकुरुद्वदानदमांगलयरूपाः ।
 येषां नामशरणमपि सन्मंगलं सुक्तिदायीत्वर्चं भद्रं नसुविधिविद्यप्रोणनः प्राणिपूज्यं ॥४५९॥

भाषा-आर्दूलविक्रीडित-रागद्वेष महानसर्प शत्रुने शत्रु अन्नधारी यती । शत्रूमित्र समान भाव करके भवतापहारी यती
 मंगल सार महानकार अवहर स्वत्वसुकम्पी यती । संयम पूर्णप्रकार साधनपक्षो संसारहारी यती ॥
 ॐ हीं साधुमंगलाय अय निवपामीति स्वाहा । (८)

सूची सूची गुरुलघुभिदा द्वेषकर्मप्रदिष्टो, जैनो घर्मः स्याद्विषयगृहकारदर्शी निर्गतिं ।
 सेव्यो विघ्नप्रहाणनिधावुत्तमार्थः प्रशस्तः, सपूजेऽहं यजनमननोद्दामसिद्धयथमद्यम् ॥४६०॥
 भाषा-शुक्रालाद-जिनघम है सुखकार जापलें घरन भव भयवंत । स्वर्ग सोक्ष सुह्वार अतुरम घरे सो जयवंत ॥

सम्यक्त ज्ञान चरित्र लक्षण भजत जगमें संत । सर्वज्ञ रागविहीन वक्ता है प्रमाण महन्त ॥४६०॥
 ॐ ह्रीं कैवल्यप्रदसु धर्ममङ्गलाय अर्घं निवर्णामोति स्वाहा । (९)

येषां पादस्मृतिसुखसुधायोगपरतार्थनाम प्रापुः पुण्य यद्वचनतिना जन्मसार्थं लभन्ते ।
 लोका धात्र्यां वनगिरिसुवश्रोतमन्त्र जिनेन्द्रा-नर्चै यज्ञपत्रविधिसु त्वक्तये मुक्तिलक्ष्म्याः ॥४६१॥
 भाषा-शुलनालन्द-चर्ण संस्पर्शते वन गिरि शुद्ध हो नाभ ससीथको प्राप्त करते भए ।

दर्या जिनका करे पूजते तुम हरे जन्म निज साथे भविजीव मानत भए ॥
 देव तुम लेलके देव सब छोडके देव तुम उत्तमा सन्त ठानत भए ।
 पूजते आपको टालते नापको सोक्षलक्ष्मी निकट आप जानत भए ॥

ॐ ह्रीं अंशुलोकात्मभ्यो अर्घं निवर्णामोति स्वाहा (१०)

इष्टिज्ञानप्रतिभटनया कलमीमांसायाऽभ्यान्, श्वश्रे संपन्नयति धिविधा येदनाः संकरोति ।
 तेषां सूत्रं निविद्धपरमज्ञानगुणो न इत्या, निःकर्मत्व समधिगतयानर्चयते, सिद्धनाथः ॥४६२॥
 भाषा सुतंप्रयातछंद-दरशा ज्ञान धेरो करल तीव्र आए । नरक पशुगतो मांदि प्राणी पठाए ।
 तिनहें ज्ञान अस्मिते बनल नाथ कीना । परम सिद्ध उत्तम भजूं रागहीना ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकात्मभ्यो अर्घं निवर्णामोति स्वाहा । (११)
 सूर्याचन्द्रौ मरुदधिपतिभूमिनाथोऽहुरेन्द्रो, यस्मांह्यज्जे प्रणतशिरसा लोलुठान्ति त्रिशुद्धया ।
 सोऽय लोके प्रवरगणनापूजितः किं न वा स्यादुःयस्यदुर्वं सुनिषरिवृहं स्वानुषावरक्तया ॥४६३॥
 भाषा छन्दचौपैया-सूरज चन्द्र देवपात नरपति पद-सरोज नित-पंदे । लोट १, मस्तक धार, पणमें पतक सब
 निकंदे ॥

लोकादि उत्तम यतिपनमें जैनस्वाधु सुख कंदे । पूजन सार आतमगुणपावन होवत आप स्वच्छंदे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकात्मभ्यो अर्घं निवर्णामोति स्वाहा । (१२)

यत्र प्राणिप्रवरकरुणा यत्र मिथ्यात्वनाशो । यत्रोपति शिष्यपदसम्बन्धेषणां कामनष्टिः ।
 यत्र प्रोक्ता दुराविरतिः सोयमद्वयः कथं न । यस्माद् धर्मो निखिलहितकृत् पूज्यतेऽसौमयाऽपि ॥४६३॥
 माया छंदसु रंगी-जो दया धम विस्तारता विश्वमें । नाश मिथ्यात्व अज्ञान कर विश्वमें ॥

(१३)

काम अथ दूर कर, मोक्ष कर विश्वमें । सत्य जिनघम यह धार ले विश्वमें ।
 ॐ ही कैवलीप्रदस धमलोकोचमाय अर्ध निवर्षामोति स्वाहा ।
 जीवाजीचद्विविधशरणान्धेषणे श्रेयसङ्ग स्वात्वा तपक्त्वाऽन्यतरशरणं नश्वर अद्विधानी ।
 इन्द्रादिनामितिपरिचयादात्मरत्नोपलब्धि-मिष्टेः प्राप्तुं निचितमनसा पूज्यतेऽहं शरण्यः ॥४६४॥

माया-छन्द मरुटा-
 भ० भ्रमण कराया शरण नवाया जीव अजीषष्टि खोज । इन्द्रादिक देवा जाको पूजे जगगुण गाथे रोज ॥
 ऐसे आहतकी शरण आये, गलत्रय प्रकटाय । जासे ही जन्ममरण भय नाशो, नित्यानन्दा धाय ॥४६५॥

(१४)

ॐ ही अर्हत शरणेभ्यो अथ निवर्षामोति स्वाहा
 यावद्देहे स्थितिरूपचयः कल्पणामाख्येण, तावत्तौल्यं कृत उपलभेतस्तत्त्वोदनेच्छुः ।
 एतत्कृत्यं न भवति विना सिद्धभक्ति यतो मे, पूर्णाधौघप्रयजनविधावाभिनोऽहं शरण्यम् । ४६६॥
 माया-छंद नाराच-छुखी न जीव हो कस्यो जहां कि देह साथ है । मदा हि कर्म अ स्वै न शांतता लहात है ॥
 जो सिद्धको लखाय अक्ति एक मन करात है वही सुमिद्ध आप हा स्वभाव आत्मपात है ॥

(१५)

ॐ ही सिद्धशरणेभ्यो अर्ध निवर्षामोति स्वाहा
 रागद्वेषठगपप्रगतो निःस्पृहा धीरधीराः, संसाराब्धौ विषमगहने मज्जतां निर्निमित्तं ।
 दरबाधर्मोन्नरणरणि पारयन्तो मुनीशास्त्रानर्धेण स्थिरगुणधिया प्रार्चयामि त्रिगुप्त्या ॥४६७॥
 माया-छन्द त्रोटक-नष्टि राग न द्वेष न काम धरें, भवदधि नौका भवि पार करें ।
 स्वारथ बिन सय हितकारक हैं, ते साथ जजूं सुखकारक हैं ॥

(१६)

ॐ ही साधुशरणेभ्यो अथ निवर्षामोति स्वाहा ।
 भिन्नं सम्यक् परमधयाचक्रमे सार्थदायि, नान्यो धर्माद्दुरितदहन प्लोषणैऽनुप्रयाहः ।
 जानन्तं मां समहविधिषां सन्निधानाच्छरण्य, प्रायस्व त्वं त्वयि धृत्वा गतिं पूजनार्धेण युक्तं ॥४६८॥

भाषा-छन्द चामरो-धर्म ही सु मित्रसार साथ नाहि त्यागता, पापरूप अग्निही सुमेघ सम बुझावता ।
धर्म सत्य क्षण गद्दी जीबको सम्हारता, भक्ति धर्म जो करें अनन्त ज्ञान पावता ॥

ॐ ह्रीं धर्मशरणेश्यो अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

सर्वा ते तान् तत्त्वचन्द्रप्रमाणान्, जापध्यानस्तोत्रमन्त्रै र्द्रव्यै ।

द्रव्यक्षेत्रसफूर्तिमजावकाशं, नत्वर्धेण प्रांशुनां सरसरामि ॥ ४३९ ॥

भाषा-दोहा-पञ्च परम गुरु सार हैं, अङ्गुल उत्सव जान । क्षरणा राखनको बली, पूजूं कर छर ध्यान ॥ ४३९ ॥
ॐ ह्रीं अर्हतपरमेष्ठिप्रभृतिधर्मशरणान्तप्रथमत्रयस्थितसप्तदशजिनाधीश्वरज्ञेयताश्रयो अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

इति पूर्णार्घ्यं—(यहां पूर्णार्घ्य देकर एक छोटासा नारियल सुन्दरताके साथ पहले बलयमें कहीं पर रख दे जिससे विदित हो कि पहले बलयकी पूजा हो चुकी, यदि वहां तक हाथ न पहुंचे तो अण्डलके किनारेकी तरफ एक नारियल रख दे) ।
अथ दूररे बलयमे २४ धूनकालके तीर्थङ्गोंकी पूजा करनी

निर्वाणदेवं अतमठग्रलोकं निर्वाणदात्तामनन्तसौख्यं । अपूजयेत्सहं अखसद्धिहेनो रघोश्वरं प्राथमिकं जिनेन्द्रं ॥
भाषा-पदारी छन्द-अविलोक क्षरण निर्वाणदेव, शिवसुखदाता सब देव देव ।

पूजूं शिवक्षरण अन लगाय, जासो अघसागर पार जाय ॥ ४७० ॥

ॐ ह्रीं निर्वाण जिनाय अथ निवपामीति स्वाहा ।

श्रीसागर वीतमलत्परागद्वेषं कृताशेषजनप्रसादं । स्वसर्चये नोरुपरदीपैरुदीपिताशेषपदार्थमालं ॥ ४७१ ॥
भाषा-तज रागद्वेष मयता विहाय, पूजक जन सुख अनुभव लहाय ।

शुणसागर सागर जिन लखाय, पूजूं मन पच अर काय नाय ॥ ४७१ ॥

ॐ ह्रीं सागरजिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

श्रीमन्महासाधुजनं प्रमणनप्रमाणोकुतजीवतत्त्व । स्याद्वादभंगप्रणिधानहेतुं स्वसर्चये यज्ञविधानसिद्धयं ॥

भाषा-नथ हर प्रमाणसो तत्त्व पाय, निज जीवतत्त्व निश्चै कराय । साधो तप केवलज्ञान दाय, ते साधु महा

ॐ ह्रीं महामाधु जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२०)

बन्दों सुभाय ॥ ४७२ ॥

यस्यातिसाज्ज्ञानविशालदीपेप्रभासमानं जगदल्पसारं । विलोक्यते संपरपत्तारात्रे स्वसर्चयेऽहं विमलप्रभाख्यं ॥

भाषा-दीपक विशाल निजज्ञान पाय, त्रैलोक लखे विनश्रम उपाय । विमलप्रभ निर्मलता कराय, जो पूजे

ॐ ह्रीं विमलप्रभाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२१)

जिनको अर्घ्य लाय ॥

प्रतिष्ठा-

॥ ३२ ॥

समाधितानां मनसो विरुद्धय, कृतावतारं सुनिगीतकीर्तिम् ।
प्रणम्यथ शेऽहसुतंचयामि शुद्धाभयैर् चरुभिः प्रदीपैः ॥ ४७४ ॥

भाषा-भवि शरण गेह मन शुद्धिकार, गांधे धुति सुनिगण यथा प्रचार ।

शुद्धाभदेव पूजू विचार, पाऊं आत्मन गुण मोक्ष द्वार ॥ ४७४ ॥

ॐ हीं शुद्धाभदेशाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२०)

लक्ष्मीद्वयंवाद्य गतांवरद्वयैश्चाप्यदोत्रे विच्छलोठ यस्या । यस्मात्प्रदा श्रीधरकीर्तिं मापत्तस्य रणेष्वाशिराषव्यसार्थम् ॥

भाषा-उंगर काहर लक्ष्मी अर्थीका, इन्द्रादिक लोचन नाथ शीस । श्रीधरचरण श्रीशिवकराय, आश्रयकर्ता

ॐ ह्रीं श्रीगणाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२१)

श्रिय दधानीष्ट शुभस्तिभाजां, वृन्दाय यस्मादिह नाम जातं ।

श्रीवत्सदेवं भवामीति सुतयं, यजामि नित्याद्भुतायामलक्ष्म्यै ॥४७६॥

भाषा-जो अर्त्तिक करे मन मनन कार, वाता शिवलक्ष्माके जिनाथ ।

श्रीवत्त चरण पूजू महात्तु भवभय छूटे लहू अमल ज्ञान ॥

ॐ हीं श्रीवत्त जिनाय अथ निर्वापामीति स्वाहा । (२४)

सिद्धापभागस्य धिलपिणी तन्मध्येजमुः सप्तकदशनेन ।

सुप्रयणिवशुद्धिर्भनसो यतस्त्वां सिद्धाभ । यज्ञेऽर्चयितु समीहे ॥ ४७७ ॥

भाषा-भामण्डल छवि वरणी न जाय, जहं जीव लखें भन सप्त आय ।

मन शुद्ध करे सम्यक्त पाग, सिद्धाभ भजे भवभय नशाय ॥ ४७७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धाभ जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२५)

प्रभामतिः शक्तिरनेकधा हि, सद्बुधयानलक्ष्म्या यत उत्तमार्थैः ।

सङ्गायते त्वं ह्यमलां विभ्रपिं, यतोऽर्चये त्वात्सलप्रभाख्यं ॥ ४७८ ॥

भाषा-अमलप्रभ निर्मल ज्ञान धरे, लेशासै हन्द्र अनेक खड़े । नित संतुमुंगल गान करे, निज आत्मसार

ॐ ह्रीं अमलप्रभ जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२६)

अनेकसंसारगतं भ्रमेभ्य उद्धारतंति बुधैश्चादि । यतो मम आंतिमपाकुह स्वमुद्धारदेव प्रयजे भवंतं ॥४७९॥

भा-उद्धार जिनं उद्धार करे, भव कारण भांति विनाश करे, हम डूब रहे भवसागरमें, उद्धार करो निज

ॐ ह्रीं उदार जिनाय अघ निर्वपामीति स्वाहा । (२७)

आत्मरसे ॥४७९॥

तुष्टाष्टकर्मधनदाहकर्ता यतोऽग्निनामाभ्युदिते यथार्थम् । ततो ममामातृणव्रजेऽपि तिष्ठाचये त्वां किमु पौनरुक्ते ।
भाषा-अग्निदेव जिन हो अग्निमई, अठ कर्मन ईधन दाह दई ।

हम असात तृणं कर दग्ध प्रभो, निज सम कारले जिनराज प्रभो ॥ ४८० ॥

ॐ ह्रीं अग्निदेव जिनाय अघ निर्वपामीति स्वाहा । (२९)

प्राणेन्द्रियद्वैधसुसंयमस्य दातारमुच्चैः कथयामि सार्धं । महत्तमर्धं जिनसंगृहाण सुसंयमं स्वीयगुणं प्रदेहि ॥४८१॥
भाषा-संयम जिन द्वैविध संयमको, प्राणीरक्षण इन्द्रिय दमको । दीजे निश्चय निज संयमको, हरिये हम सर्व

असंयमको ॥

ॐ ह्रीं समय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२९)

स्वयं शिवः शाश्वतसौख्यदायि, स्वायं प्रभुः स्वात्मगुणप्रसन्नः ।

तस्मात्तदर्थप्रतिपन्नकामस्वाअचंचे प्राञ्जलिना नतोऽस्मि ॥ ४८२ ॥

भाषा-शिव जिन शायन सौख्यकरी, निज आत्म विसृति स्वहस्त करी ।

हम शिव वाञ्छक कर जोड़ नमें, शिव लक्ष्मी दो नहिं काहू नमें ॥ ४८२ ॥

ॐ ह्रीं शिव जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३०)

सत्कुन्दमल्लजलर्जादिपुष्पैरभ्यर्चयमानः श्रियमावधायति ।

नाम्नाऽप्यसौ णाहश एव यस्मात्, पुष्पांजलि त्वां प्रतिपूजयामि ॥ ४८३ ॥

भाषा-पुष्पांजलि पुष्प निते जजिये, लक्ष काम इयथा क्षणमें हरिये ।

निज शील स्वभाव शिरम रहिये, जिन आत्म जनित सुखको लहिये ॥ ४८३ ॥

(३१)

ॐ ह्रीं पुष्पांजलि जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्साहयन् ज्ञानवनेश्वराणां, शाब्द्याम्बुधि संयमबन्धकीर्तः ।

उत्साहनाथो यजनोत्सवेऽस्मिन्, संपूजितो मे स्वगुणं वदातु ॥४८४॥

भाषा-उत्साह जिन उत्साह करे, निज संयम बन्ध प्रकाश करे ।

समभाव समुद्र बहावत हूँ, हम पूजत तब गुण पावत हूँ ॥ ४८४ ॥

ॐ ह्रीं उत्साह जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३२)

नमोऽस्तु नित्यं परमेश्वराय, कृपा यदीयाक्षणसंनिधानात् ।

करोति चिन्तामणिरीप्सितार्थमिवाचये तं परमेश्वराख्यं ॥४८५॥

।। ३४ ॥
।। प्रतिष्ठा-
।। ३४ ॥

।। ३४ ॥

(३३)

ॐ ह्रीं परमेश्वरजिनाय अर्घं निवपामीति स्वाहा ।

यज्ज्ञानरत्नाकरप्रधवती, जगत्त्रयं विन्दुस्रसं विभाति ।

तं ज्ञानसाक्षात्पति जिनेन्द्रं, ज्ञानेश्वरं संप्रति पूजयामि ॥४८६॥

माषा-ज्ञानेश्वर ज्ञान समुद्र पाय, त्रैलोक्य विन्दुस्रस्र जहं दिखाय ।

निज आत्मज्ञान प्रकाशकार, यन्दू पूजूं मैं बार बार ॥ ४८६ ॥

(३४)

तपोवृहद्भानुसमूहतापकृतात्मनमत्यस्रनिमलानाम् । अस्माहंशां तद्गुणमावदान संभुजयासो विमलेश्वरं तं ॥

माषा-बमौने आत्ममलीन किया, तप अग्नि जला निज शुद्ध किया ।

विमलेश्वर जिन मो विमल करो, मल ताप सकल ही शांत करो ॥४८७॥

(३५)

ॐ ह्रीं विमलेश्वर जिनाय अर्घं निवपामीति स्वाहा ।
यशः प्रसारे सति यस्य विश्वं, सुवामयं चंद्रकलावदातं । अनेकरूपं विकृतरूपं, जातं सख्ये हि यशोधरेयं ॥

माषा-यश जिनका विश्व प्रकाश किया, शशि कर इव निर्मल व्याप्त किया ।

भट मोह अरीने शांत किया, यशधारी सार्थक नाम किया ॥ ४८८ ॥

ॐ ह्रीं यशोकर जनेश्वर अघ निवपामीति स्वाहा ।

क्रोधस्मरशासनविघातनाय, संजाततीव्रकुघिवात्मनाम ।

प्राप्तं तु कृष्णेति नु शुद्धियोगात्, तं कृष्णमर्चं शुचितामपन्नं । ४८९ ॥

माषा-समता भय क्रोध विनाश किया, जग काम रिपूको शान्त किया ।

शुचिता घर शुचिकर नाथ जजूं, श्री कृष्णमती जिन नित्य भजूं ॥४८९॥

(३७)

ॐ ह्रीं कृष्णमतेये जिनाय अघ निवपामीति स्वाहा ।

ज्ञानं मतिर्भाव उपाश्रयादिकार्येष्वप्रणिधानयोगात् । ज्ञानेमतिर्यस्य समासजातेष्वपर्यथनामानमहं यजामि ॥

प्रतिष्ठा-

॥ ३५ ॥

भाषा-शुचि ज्ञानमती जिन ज्ञान घरे, अज्ञान तिमिर सय नाश करे ।
जो पूजे ज्ञान बढावत है, आत्म अनुभव सुख पावत है ॥४९०॥

ॐ ह्रीं ज्ञानमयै जिनाय भय निर्धपामीति स्वाहा । (३८)

समश्चमानान्यपदार्थजातं, धुरंधरं धर्मरथांगनेमिः । जिनेद्वरं शुद्धमतिं यजेत, प्राप्नोति श्रद्धां सतिमेव ना सः ॥

भाषा-शुद्ध मती जिनधर्म-धुरन्धर, जानत विश्व सकल एकीकर ।

शुद्ध बुद्धि होवे जो पूजे, ध्यान करे भवि निर्मल हूजे ॥ ४९१ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धमयै जिनाय भयं निर्धपामीति स्वाहा । (३९)

संसारलक्ष्म्या अतिनश्वनाय, जन्मक्षंसुद्राभिव कुटसयन्त्वा । भद्रा शिवश्रीरिति योगयुक्त्या श्रीभद्रमीशं
रभसार्चयामि ॥४९२॥

भाषा-संसार विभूति उदास भये, शिवलक्ष्मी सार सुहात भए

निज योग विशाल प्रकाश किया, श्रीभद्र जिनं शिव वास लिय ॥४९२॥

ॐ ह्रीं श्रीभद्र जिनाय भयं निवपामीति स्वाहा । (४०)

अनन्तवीर्यादिगुणप्रसन्नमात्मप्रभवानुभवैकगम्य । अनन्तवीर्यं जिनपं सतवीमि, यज्ञार्थं मागैरुपलाल्यमानं ॥

भाषा-सतवीर्य अनन्त प्रकाश किये, निज आत्म तत्व विकाश किये ।

जिन वीर्य अनन्त प्रभाय घरे, जो पूजे कर्म कलङ्क हरे ॥४९३॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यं जिनाय अ निर्धपामीति स्वाहा । (४१)

पूर्वं विसृपिण्णथ कालमप्ये, सज्जातकत्याणपरम्परणाम् ।

संस्मृत्य सार्थं प्रगुजं जिनानां, यज्ञसमाहूय यजे समस्तान् ॥४९४॥

भाषा दोषा-भूत भरत कौषीस जिन, गुण समरू हरथार । मङ्गलकारी लोकमें, सुख शान्ति दातार ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठाप्रदोत्सवे याज्ञसण्डलेश्वरद्वितीयवलयोन्मुद्रितनिर्वाणाद्यनन्तवीर्यान्तेभ्यो भूतविनेभ्यो पूर्णार्थे नि० ।

अत्र तीसरे वलयमें वर्तमान चौबीस जिन पूजा करनी ।

मनुनाभिमहीधरजातभभुञ्जं, मरुदेव्युदराक्षतरन्तमहं । प्रणिपत्य शिरोभ्युदयाय यजे, कृतसुखजिनं पुषमं २ ॥

॥ ३५ ॥

सार सं०

भाषा चाल छंद-मनु नाभि महीधर जाये, मरुदेवि उदर उतराए । युग आदि सुधर्म बलाया, वृषभेश जजो

जितशत्रुगृहं परिभूषयितुं. वषट्कारदिशा तनुसूत्रमयं । नयनिश्चयतः स्वयमेवभुमजित जिनमचतु वरुधरं ॥४९४

भाषा-जितशत्रु जने व्यवहारा, निश्चय आयो अवतारा । स्वय कर्मन जीत लिया है, अजितेश सुनाम मया है ॥

हठराजसुवन्धानभंगमिहर त्रिजगन्नयभूषणमभ्युदयं । जिनसम्भवसूर्धगतप्रदमर्चनया प्रणमाञ्चि पुरस्कृतया ॥

भाषा-हठराज सुवश अकाशो, सूरजसम नाथ प्रकाशो जग भूषण शिव गति दानी, समब जज केवलज्ञानी ॥

कपिकेतनमीश्वरमर्थयतो मृगजन्मजरपदनोदयतः । भविकल्पमद्योत्सवसिद्धिमियाल एव कजे ह्यमिन्दनकं ॥

भाषा-कपिचिह्न धरे अभिनंदा, भवि जीव करे आनन्दा जन्मन सरणा दुख टारें, पूजे ते मोक्ष सिवारें ॥४९८

सुमतिं श्रितमर्थमति उकारापणतोऽर्थकरारुद्रमवासिधं । महयामि पितामहमेतदधिऋगतीश्वसूक्तिभक्तिनुतः

भाषा-सुमतीश जजो सुखकारी, जो शरण गहें मतिधारी ।
मति निर्मल कर शिव पार्थे, जग भ्रमण हि आप मिटाये ॥४९९॥

धरणेशभवं भवभावमितं, जलजप्रथमीश्वरमानमताम् । सुरसंपद्विधतिं न केति यजे, वरुद्रीपफलेः सुरवासपदैः

भाषा-धरणेश सुदृप उपजाए, पद्मप्रथम नाम कहाये । है रक्त कमल पग चिह्ना, पूजन सन्ताप बिछिना ॥५००॥

सुमपार्श्वजिनेश्वरपादसुगं, रजसां श्रयतः कमलातयः ।
कति नाम भवन्ति न यज्ञसुचि, नयितुं महयामिमहद्वनिभिः ॥५०१॥

भाषा-जिनवरणा रज सिर दीनी, लक्ष्मी अनुपम कर कीनी । हैं धन्य सुपारश नाथा, हम छोड़ें नहि जगसाया ॥

मनसा परिचित्य विधुः स्वरसात, मम कांतिहृतिजिनेदेहृणोः ।

इति पादसुखं भित्तवानिष तं, जिनचन्द्रपदांबुजमाश्रयत ॥ ५०२ ॥
भाषा-बाशि तुम लखि उतम जगमें, आया वसने तब पगमें ।

इम शरण गही जिन बरणा, चन्द्र प्रभ भवतम हरणा ॥ ५०२ ॥

ॐ ही चन्द्रप्रयजिनाय अर्घं निवषामीति स्वाहा । (४९)

सुमदंतजिनं नषमं सुचिधीतिपराहमखंडमंगहरं । शुचिदेहततिप्रसरं प्रणुनात् सलिलादिगैर्घजतां विधिना ॥

भाषा-तुम पुण्डवन्त जितकामी, हे नाम सुविधि अभिरामं ।

बन्दू तेरे जुग बरणा, जासे हो तिबतिय बरणा ॥ ५०३ ॥

ॐ ही पुण्डवन्त जिनाय अर्घं निवषामीति स्वाहा । (५०)

... .. ॥५०४॥

भाषा-श्री शीतलनाथ अकामी, शिष लक्ष्मीधर अभिरामी । शीतल कर भव आतापा, पूजू हर मम संतापा ॥

ॐ ही शीतलनाथ जिनाय अर्घं निर्वागामीति स्वाहा । (५१)

अथो जिनस्य वरणौ परिधाय चित्ते, संसारपञ्चतयदुःप्रमण्डपपाय ।

अयोऽर्थिनां भवति तत्कृतये मयाऽपि, सपूज्यते यजनमद्विधिषु प्रकाशे ॥ ५०५ ॥

भाषा-अर्थांस जिना जुग बरणा, चित्त धारु झङ्गल करणा । परिधर्तन पञ्च बिनाशे, पूजनते ज्ञान प्रकाशे ॥ ५०५ ॥

ॐ ही अर्थांस जिनाय अर्घं निवषामीति स्वाहा । (५२)

इक्षांकुर्वंशानिलको वसुपूज्यराजा, यजन्भजातकविधौ हरिणाधितोऽभूत् ।

तन्वासुपूज्यजिनपार्थिवया पुनीतः, स्यामद्य तत्प्रतिकृतिं चरुभिर्यजामि ॥ ५०६ ॥

भाषा-इक्षांकु सुवंश सुहाया, वसुपूज्य तनय प्रकटाया । इंद्रादिक सेवा कीना, हम पूजें जिनगुण चीन्हो ॥

ॐ ही वासुपूज्य जिनाय अर्घं निवषामीति स्वाहा । (५३)

कापित्यनाथकृतधमगुहाप्रतारं, श्यामाजयाहजननीसुखद नमामि ।

कोलध्वजं मिश्वरमध्वरेऽस्मिन्नर्चे, द्विरुक्तमलहापनकर्मसिद्धय ॥ ५०७ ॥

भाषा-कापित्य पिता कृतवर्मा, माता श्यामा शुचि वर्मा । श्रीविमल परम सुखकारी, पूजा है मल हरतारी ॥

ॐ ही श्री विमलनाथ जिनाय अर्घं निवषामीति स्वाहा । (५४)

साकेतनाथनृपस्य च शिष्टसेवनास्नाननूतनस्रराचिनपादपद्मं ।

सम्पूजयामि विधिघार्हणया ह्यनन्तनाथं चतुर्दशजिनं मल्लिहाक्षतीर्थैः ॥५०८॥

भाषा-साकेतनागरी स्वामी, हरिसैन पिता अविकारी । सूर अष्टुर सदा जिनवर्णा, पूजें अस्वसागर तरणा ।

ॐ ह्रीं अन्नन्तमाथ जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (५५)

धर्मं द्विधोपदिशथा ह्यदसिर्द्विधार्थे, किं किं न नाम जनताहितमन्वदशि ।

श्री धर्मनाथ ! भवतेति स्वर्धेनाथ, अस्मप्राप्तयेऽचनबिद्धिं पुतः करोमि ॥ ५०९ ॥

भाषा-सत्यचल द्वेयिध धर्मा, उपदेशो श्रीजिनधर्मा । हितकारी तत्त्व धनाए, जासे जन शिवमग पाये ॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथ जिनाय भव निर्वापामीति स्वाहा । (५६)

श्री हस्तिनागपुरपालकविश्वसेनः, स्वांके निवेश्य तनयासुतपुष्टितुष्टः ।

ऐराऽपि छा सुकुरुवन्शनिधानमूर्धिमिर्धस्माद् वभूव जिनशांतिमिहाश्रयासि ॥५१०॥

भाषा-कुरुवशी श्री विश्वसेना, ऐराक्षी सुखदेना । श्री हस्तिनागपुर आए, जिनशांति जजों सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं शांतिनाथ जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (५७)

श्री कुन्थुनाथजिनजन्मनिषट्त्रिंशत्यजीवाः सुख निरुपमं बुभुजुर्भिक्षाङ्कं ।

किं नाम तत्समृत्तिनिराकुलघानसोऽह सुश्वे न सत्त्वरमतोऽचलमारभेय ॥५११॥

भाषा-श्रीकुन्थु व्यामय ज्ञानो, रक्षक षट्कार्या प्राणो । सुमरत आकुलना भाजे, पूजनं ले दव सु ताजे ॥५१२॥

ॐ ह्रीं कुन्थुनाथ जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (५८)

सदशनप्लुतसुदर्शनमूर्पुञ्जं, त्रैलोक्यजीववररक्षणहेतुमित्रम् ।

श्री मिश्रसेनजननीखनिरत्नसर्चे, श्री पुढ्यचिन्हमरनाथजिनेन्द्रमध्यम् ॥५१२॥

भाषा-शुभहृष्टो राथ सुदर्शन, अर जाए द्रय भू पशन । माता सेना उर रत्न, धर चिह्न सुमन जजं यत्न ॥

ॐ ह्रीं अरनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (५९)

कुम्भोद्भवं धरणिदुःखहरं प्रजावस्थानंङ्कारकमतन्द्रमुनीन्द्रसेव्यं ।

श्रीमल्लिनाथविशुमदशरविघ्नशांत्यै, सम्पूजये जलसुचन्दनपुढ्यदीपैः ॥५१३॥

भाषा-दृप कुम्भ धरणिसे जाए, जिन मल्लिनाथ मुनि नाथे । जिन यज्ञ विघ्न हरतारे, पूजें शुभ अर्घं उतारे ॥

ॐ ह्रीं मल्लिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६०)

राजसुराजहरिवन्शनिभोविभास्वान्, वप्रांविकाप्रियसुतो मुनिसुव्रनाख्यः ।
कम्पूज्यते शिष्यपथप्रतिपत्यहेतुयज्ञ, सया विविधवस्तुभिरहणेऽस्मिन् ॥६१४॥

भाषा-हरिवंश सु सुन्दर राजा, वप्रा माता जिनभाजा । मुनिसुव्रन शिष्यपथ कारण, पूजूं सब विघ्न निवारण ॥

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रत जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६१)

सन्मैथिलेशधिजयाहृगृहेऽवतीर्ण, कल्याणप्रश्नकसमर्चितपादपद्म ।

धर्मावुत्तारपरिपोषितमध्यशास्यं, नित्य नमिं जिनवरं महसार्चयामि ॥६१५॥

भाषा-मिथुलापुर विजय नरेन्द्रा, कल्याण पांचकर इन्द्रा । नमि धर्मावुत वर्षीयो, मध्यम खेतो अकुलाया ॥

ॐ ह्रीं नमिनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६२)

द्वारावनापतिस्सुद्वजयेक्षणान्यं, श्री यादवेजबलकेशव पूजिनां हिस्र ।

शंखाङ्कभंजुररमेवकशेहर्षेर्षे, मद्ब्रह्मचारिसिग्निनेमिजिनं जलाद्यैः ॥६१६॥

भाषा-द्वारावति विजयससुद्रा, जग्मे गृहबंश जिनेन्द्रा । हर्षबल पूजिथ जिनवरणा, शंखांक अंबुधर बरणा ॥

ॐ ह्रीं नैधनाथ जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६३)

काशीपुरीशानुगभूषणदिव्यसेलभैरवप्रिय कसलकण्ड्यनिमण्डनेनं ।

पद्माहिराजावतुत्रज्ञतपूर्नांरु, गन्धेऽर्चयामि शिरसा नतमौलिनीत ॥६१७॥

भाषा-काशी विश्वसेन नरेक्षा, उपजायो पार्श्वजिनेशा । पद्मा अक्षिपति पग यन्दे, रिषु कसल मान निःकंदे ॥

ॐ ह्रींपार्श्वजिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६४)

सिद्धार्थभूयतिगणेन पुरस्कियायामानन्दनाणहृबविधौ स्वजन्तु शशासे ।

श्री अणिकेन सदसि ध्रुपभूयदापत्य, यज्ञऽर्चयामि वरवीरजिनेन्द्रमास्मिन् ॥६१८॥

भाषा-सिद्धार्थराय अय ज्ञानी, सुत बद्धमान गुणखानी । समवसुत अणिक पूजे, तुम सम है देव न दूजे ॥

ॐ ह्रीं पद्धमान जिनेन्द्राय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६५)

अथाहृतसुपवपर्वनिकरे, विम्बप्रतिष्ठात्सवे सम्पूज्याश्चतुरुतरा जिनवरा, विंशप्रभाः सम्प्रति ॥

सञ्जाग्रतसमयादैकसुकृतानुधार्य मोक्षं गतास्तेऽप्रागत्य समस्तमध्वरकृतं गृह्णन्तु पूजाविधि ॥

भाषा दोहा-बतमान चौबीस जिन, उदारक भवि जीव । बिस्वप्रतिष्ठा साधने, यजूं परम सुखनीव ॥५१२॥
 ॐ ह्रीं अस्मिन् यागमण्डले मखसुखाचित्तृतीयबलयोन्मुद्रिवर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्यः पूर्णाधिं निर्वपामीति स्वाहा ।
 यद्वां १ नारियल तीसरे बलयमें कर्षीपर या मण्डलके किनारे रख दे । अथ चौथे बलयमें मविषय चौबीस तीथङ्कों-
 की पूजा करनी ।

पद्या बलेत्यकनलुप्तिकाशा, जिनस्य पादावचलौ विचार्ये ।

यत्पादपद्मे यस्मिन् चकार, सोऽयं अहायश्च जिनोऽर्च्यतेऽर्थैः ॥५२०॥

भाषा चौपाई-अहायश्च जिन आधीनाथ, भेणिक जीव जगत बिरह्यात । लक्ष्मी चञ्चल लिण्डी ज्ञान, सद्य चरणा पूजूं
 ॐ ह्रीं महापद्म जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६६) भगवान् ॥

देवाश्चतुर्भेदनिकायमिन्द्रास्तेषां पदौ सूर्धनि सन्दधानः । तेनैव जातं सुरदेवनाम तसचंये यज्ञविधौ जलाद्यैः ॥
 भाषा-देव चतुर्विधि पूजे पाय, नाय २ सुरग्रथ जिनराय में सुमरण करके हरषाय, पूजूं हर्ष न अङ्क समय ॥

ॐ ह्रीं सुरप्रप जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६७)

सेवार्थमुत्प्रेक्ष्य न भूतिदाता, कारुण्यबुद्धयैव ददाति लक्ष्मीम् ।

यतो जिनः सुप्रसुरायस्वार्थे नामार्चयेऽहं विधिनाध्वरीयः ॥५२१॥

भाषा-सुप्रसु जिनके बँदू पाय, सेवकजन सुखकार लहाय । करुणाधारी धनदातार, जो अविनाशी जिय सुखकार ॥

ॐ ह्रीं सुप्रम जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६८)

न केनचित्परविधायिमोक्षसाम्राज्यलक्ष्म्याः स्वयमेव लब्धं । स्वयंप्रभत्वं स्वयमेवजातं यस्यार्चते पादसरोजयुग्मं ॥
 भाषा-मोक्ष राज्य देवे नहि कोय, स्वयं आत्मबल लेवें सोय ।

देव स्वयंप्रभ चरण नभाय, पूजूं मन बच श्यान लगाय ॥५२३॥

ॐ ह्रीं स्वयंप्रभदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६९)

सर्व मनःकायवचःप्रहारे कर्मोगसां शस्त्रमभूद् यतो यः । सर्वायुधाख्यामगमन्मद्य संपूज्यतेऽसौ कृतुभागभाड्यैः ॥

भाषा-मन वच काय गुप्ति धरतार, तीव्र शस्त्र अव मारणहार ।

सर्वायुध जिन साम्य प्रचार, पूजत जग मङ्गल करतार ॥५२४॥

ॐ ह्रीं सर्वायुधदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७०)

कर्मद्विषां मूलमपास्य लब्धो, जयोऽग्नयस्यैरपि योऽनवाप्यः

ततो जयाख्यामुपलभ्यमानो, मयाहंणाभिः परिवृज्यतेऽसौ ॥५२५॥

भाषा-कर्म शत्रुजीतन बलवान्, श्रीजयदेव परम सुखवान् पूजन मिथ्यातम विघटाय, तस्य कुतस्त्व एकट वशाय ॥

ॐ ह्रीं जयदेवाय अथ निर्वाणमीति स्वाहा (७१)

आरमप्रभावोदयनाश्रितांत, लब्धोदयत्वातु इयप्रभार्यां ।

समाप यस्मादपि सार्थकत्वात्, कृतार्चनं तस्य कृती भवामि ॥५२६॥

भाषा-आरमप्रभाव उदयजिन भयो, उदयप्रभजिन तातैं थयो । पूजत उदय पुण्यका होय, पापबन्ध सब

ॐ ह्रीं उदयप्रभजिनाय अर्घं निर्वाणमीति स्वाहा । (७२)

प्रभा मनीषा प्रकृतिर्मतिर्शा, प्रभृत्युदीर्घैककलेति मत्वा ।

जाता प्रभादेव इति प्रशस्तिस्ततोऽर्चनान्तोऽहमपि प्रयामि ॥५२७॥

भाषा-प्रभा मनीषा बुद्धिप्रकाश, प्रभादेवजिन छटी आश । पूजत प्रभा ज्ञान उपजाय, संशयतिमिर सबै

ॐ ह्रीं प्रभादेवजिनाय अथ निर्वाणमीति स्वाहा । (७३)

उदंकरदेव त्वर्गि अक्तियोग्या, घटी घटी सा न तदुच्यते हा ।

त्वामेव लब्ध्वा जननं प्रयात, वरं यतस्त्वामहं महामि ॥५२८॥

भाषा-भव्यभक्तिजिनराजशराय, सफल काल तिनका हो जाय । देव उदंकर पूज जो करें, मनुष्यदेह अपनी

ॐ ह्रीं उदंकरदेवजिनाय अथ निर्वाणमीति स्वाहा । (७४)

सुरासुरस्वांतगत भ्रमैकविध्वंसने प्रश्रुक्तोपपत्त्या । कीर्तिं ययौ प्रोष्ठिलमुद्वयनामस्तथैर्निरुक्तोऽहमुदंबयामि ॥

भाषा-सुरविद्याधर प्रश्रु कस्य, उत्तर देत भरम टल जाय । प्रश्रुकीर्तिजिन यशके धार, पूजत कमकलंक

ॐ ह्रीं प्रश्रुकीर्तिजिनाय अर्घं निर्वाणमीति स्वाहा । (७५)

पापाश्रवाणां दलनाद् यशोभिवर्धक्तेर्जयात् कीर्तिसमागमेन ।

निरुक्तलक्ष्म्यै जयकीर्तिदेवं, स्तवस्रजा नित्यमुपाचरामि ॥५३०॥

भाषा-पापदलनते जयको पाय, निर्मल यश जगमें प्रकटाय । गणधरादि नित बन्दन करें, पूजत पापकर्म

ॐ हीं जयकीर्तिजिनाय अघ निर्वपामीति स्वाहा ।

(७६)

सुष हरेँ ॥

चार सं०

केवल्यभानातिशये सभशा, बुद्धिप्रवृत्तियुक्त उत्समार्थी । तत्पूणबुद्धेश्वरणी पवित्रावद्ययनयायस्मिन्नभयप्रणष्टय ॥
भाषा-बुद्धिपूर्णं जिन वन्दू पाथ, केवल ज्ञान ऋद्धि प्रकटाय ।

चरण पवित्र करण सुखदाय, पूजन भवघाथा नष्टा जाय ॥५३१॥ ॐ हीं पूणबुद्धिजिनाय अघ निर्व० स्वाहा ।
कोधाहयआत्मभरत्नभाषं, स्वधर्मनाशान्न जहत्युदीर्णं ।

तेषां इतिथेन कृता ध्यशक्तेस्तं, निःकषायं प्रयजामि निस्य ॥५३२॥

भाषा-हैं कषाय जगमें दुःखकार, आत्मभ्रमके नाशनहार । निःकषाय होंगे जिनराज, तांत पूजूं मङ्गल काज ॥
ॐ हीं निःकषायजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७८)

अलव्यपायान्मननारमलाभाद्, यथार्थशब्दं विमलप्रभेति ।

लब्धं कृत्वा स्वीयबुद्धिकामाः, सम्पूजयामस्तमनघजात ॥५३३॥

भाषा-कमरूप मल नाशनहार, आत्म शुद्धकर्ता सुखकार । विमलप्रभ जिन पूजूं आथ, जासो मन चिशुद्ध
ॐ हीं विमलप्रभदेवाय अ निर्वपामीति स्वाहा । (७९) हो जाय ॥

आस्वद्गुणश्रावविभासनेन, पौरस्थसम्प्राप्तविभावितानं ।

संस्मृत्य कांश्च बहुलप्रभं तं, समर्चये तद्गुणलब्धिलुब्धः ॥५३४॥

भाषा-दीसवत्त गुणधारणहार. बहुलप्रभ पूजो हितकार । आत्मगुण जासो प्रगटाय, ओहतिबिर क्षणमें
ॐ हीं बहुलप्रभदेवाय अघ निर्वपामीति स्वाहा । (८०) विनशाय ॥

नीरात्रालानि सुनिमलानि, प्रवालयेशोऽनृतथादिनां वै ।

येन द्विधा कर्ममलो निरस्तः, स निर्मलः पातु सद्चित्तो माम् ॥५३५॥

भाषा-जलनभरत्न विमल कहवाथ, सो असून व्यथहार यत्नाय । भाव कम अठकम महान, हत निमल जिन
ॐ हीं निर्मलजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८१) पूजूं जान ॥

मनोवचःकायनियन्त्रणेन, चिन्नाऽस्ति गुप्तियद्वासिपूतः तं चित्रगुप्ताह्वयमचगामि, गुप्तिप्रशंसासिरिचं मम स्यात् ॥
भाषा-मनवचकाय गुप्ति धरतार, चित्रगुप्ति जिन हैं अधिकार । पूजूं पग तिन भाष लगाय जासो गुप्तित्रय

ॐ हीं चित्रगुप्तिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८२) प्रगटाय ॥५३६॥

अपारसंसारगतौ समाधिलंबधौ न यस्माद् विहितः स येन ।

समाधिगुप्तिजिनमचयित्वा, त्वमे समाधिं त्रियति पूजयामि ॥५३७॥

भाषा-चिरभव अमण करत दुख सहा, मरण समाधि न कबहूँ लहा । गुप्तिस्समाधि शरणको पाय, जजत
ॐ ह्रीं समाधिगुप्तिजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८३) समाधि प्रगट होजाय ॥

स्व चिनाऽन्यस्य सुयोगसात्प्रसवशक्तिसुदभाव्य निजस्वरूपे ।

व्यक्तोवभूवेति जिनः स्वयंभूद्वदप्रात् शिवं पूजनयानयाच्यैः ॥५३८॥

भाषा-अन्यरुहाय बिना जिनराज, स्वयं लेय परमात्मराज । नाथ स्वयंभू मग शिवदाय, पूजन बाधा सम टल
ॐ ह्रीं स्वयभूजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८४) जाय ॥

कन्दर्पनाम स्मरसद्भ्यस्य, सुधैव नासेति तद्वद्वेनोद्भयः । प्रशस्तकल्प इयाय शक्ति, यतोऽर्चयेऽहंतदयोगबुद्धये ॥
भाषा-अनदर्पके नाशानहार, जिनकल्प आत्मकल्पधार । तप अयोग बुद्धिके काज, पूजू अर्घी लिए जिनराज ॥
(५३९)

ॐ ह्रीं कन्दर्पजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८५)

अनेकनामानि गुणैरनन्तै, जिनस्य बोधयानि विचारयद्भिः ।

जयं तथा न्यासमथैकशिसनागत रुम्रति पूजयामि ॥५४०॥

भाषा-गुण अनंत ते नाम अनंत, श्रीजयनाथ धरत अगवंत । पूजू अष्टद्वय कर लाय, विघ्न सकल जासे
ॐ ह्रीं जयनाथजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८६) टल जाय ॥५४०॥

अभ्यर्हितात्मप्रगुणस्वभावं, मलापहं श्रीविश्वलेखामोक्षं । पात्रेनिधाथाध्यमफलशुशोलेद्धरप्रशक्त्यै जिनमर्चयामि

भाषा-पूज्य आत्म गुणधर मलहार, निरुलनाथ जग परम उदार । शील परम पावनके काज, पूजू अघ
ॐ ह्रीं विमलजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८७) लेय जिनराज ॥५४१॥

अनेकभाषा जगति प्रसिद्धा, परन्तु दिव्यो ध्वनिरर्हतो वै ।

एवं निरूप्यात्मनि तरुबुद्धिसभ्यर्चयामो जिनदिव्यवाक् ॥५४२॥

भाषा-दिव्यवाद अहन्त अपार, दिव्यध्वनि प्रगटासनहार । आत्मतत्त्वज्ञाता सिराज, पूजू अघ लेय
ॐ ह्रीं दिव्यवादजिनाय अर्घी निर्वपामीति स्वाहा । (८८) जिनराज ॥

शक्तेरपारश्रित एव गीतस्तथापि तद्द्वयक्तिमिति लब्धया ।

अनन्तश्रीय त्वमगाः सुयोगात्प्रामचये त्वत्पददृष्टमूर्ध्नी ॥५४३॥

भाषा-शक्ति अपार आत्मधरतार, प्रगट करें जिनयोग संसार बीर्य अनंतनाथको ध्याय, नल मस्तक पूजें
 ॐ ह्रीं अन्तवीयजिनाय अर्घी निवेपामीति स्वाहा (८९) इषाय ॥

काले भाविनि ये सुनीर्थधरणात् पूर्व प्ररूप्यागसे, विख्याना निजकर्मसन्ततिषपाकृत्य स्फुच्छक्तयः ॥
 तानत्र प्रतिहृत्पावृत्तमखे सम्पूजिमा ऋक्तितः, प्राप्ताशेषगुणस्तदीपिननपदाबाप्ये तु सन्तु श्रिये ॥५४४
 भाषा दोहा-तीर्थराज चौआम जिन सावी अथ हरतार । विस्वप्रतिष्ठा कार्यसें, पूजूं विघ्न निवार ॥

ॐ ह्रीं विम्बप्रतिष्ठाद्यापनं मुखपूत्राईचतुशतार्थीन्सु द्रवा गणतत्रुविशुलिसह ॥ अ दानवी ीतभ्यो जिनेभ्यः पूर्णाईं नि० ।
 यहाँ १ नारियल चौथे तलामे यः षण्डलके एक तण्डलसे आ गये वलयमें वीम विदेह तीर्थस्वरुकी पूजा करनी ।
 श्रीमन्धरं मोक्षलक्षणगर्थाः । श्रींस्मचित्तादयमानुमन्न । यत्पुण्डरी करुप्रुरस्त्रजात्या, पूर्तीकुं तं महत्वाचयामि ॥
 भाषा छन्द मृ गणी-मोक्ष लक्षणयनि हस राजा सुनं पुण्डरीका पुी राजते दुखहतम्

श्रीमन्धर जिना पूजते दुखहना, फेर दोषे न या जगतसे आचना ॥५४५॥ ॐ ह्रीं तीषन्त्राजि० अ० नि०
 युगंधरं धर्मनयप्रमाणश्चतुष्यवस्थादिषु युगभवृत्तैः । धारण त्ीरुहभूपजातं, प्रणम्य पुष्पांजलिनाचयामि ॥

भाषा-धमद्वय बस्तु द्वय नय प्रमाणद्वय, नाथ जुगलधरं वथिन नल द्वयं ।
 भूपश्री रुह सुतं ज्ञानक्षेपल गतं, पूजिये मक्तिसे कर्मकात्रू हत ॥५४६॥ ॐ ह्रीं जुगमन्त्राजि० अ० नि०
 सुग्रीवराजोद्भवमेणचिह्ने सुमीमपुर्णै भिजयाप्रसूतं । बाहु त्रिलोकाद्धरणाय बाहुं, मखे पवित्रेऽर्चिनमर्घयामि ॥

भाषा-भूपसुग्राथ बिजयासे जाए प्रभू, एणचिह्ने धरे जायते नाम भू ।
 स्वच्छ सीमापुरी राजते बाहुजिन पूजिये साधुको राग रुष दोष धिन ॥५४७॥ ॐ ह्रीं बाहुजनाय अ०
 निःशतयबंधाभ्रप्रभसिमन्तं, सुनन्वया लालतसुग्रकातिं ।

अषन्धबदेनाधिपति सुबाहु तोषादिभिः पूजितुसुत्तमहेऽह ॥५४८॥
 भाषा-बंधनभ निमंल सूयम राजते, कीर्तिषय बन्धयत्रिन क्षेत्र शुभ शोभते ।

मात सुन्दर सुनन्दा सु भवहतं, पूजतें बाहु शुभ भवमभ निगतं ॥ ॐ ह्रीं सुबाहुजिनाय अ० नि०
 श्रीदेवसेनारमजमर्घमाक थिदेहवषट्पलकापुरिस्थं । अञ्जलकं, पुण्यजनुर्धरत्वात्, सार्थोषयर्धेऽन्नमखे जलाद्यैः ॥

भाषा-जन्म अलकापुरी देवसेनारमजं, पुण्यमय जन्मए नाथ मञ्जु लकं ।
 पूजिये भावसे द्रव्य आठों लिये, और रस त्याग कर, आत्मरसको पिये ॥५४९॥

ॐ ह्रीं संज्ञातकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वयकृतात्मप्रभवत्वहेतोः स्वयंपसुं सद्बुद्धयस्यभूत । सन्मङ्गलापूःस्थमनुष्णकांतिचिह्नं यजामोऽत्र महोत्सवेषु ॥
भाषा-जन्मपुर मङ्गला चन्द्र चिह्न बरे, आपसे आप ही भव उदधि उद्धरे ।

प्रभस्वयं पूजते विश्व सारे दरे, ह्येय मङ्गल महा कर्मशत्रू डरे ॥१५०॥ ॐ ह्रींस्वयंपमजिनाय अर्घं नि०
श्रीवीरसेना प्रसवं सुसीमाधीशं, सुराणासुषमाननं त । ईशं सुसौभाग्यसुत्रं महेशमर्चं विशालैश्चरुभिर्नवीनैः ॥
भाषा-वीरसेना सुमाला सुसीमापुरो, देवदेवी परमभक्ति उरमें धरी ।

देव ऋषमानन आनन सार है, देखते पूजते भव्य उद्धार है ॥१५१॥ ॐ ह्रीं ऋषमाननदेनाय अर्घं नि०
यस्यास्ति वीर्यस्य न पारमत्र, तारागणभयेष निनांत रम्यं । अनन्तवीर्यप्रभुमर्चयित्वा कुनीभवाम्यत्रमखे पवित्रे ॥
भाषा-वीर्यका पार ना ज्ञानका पार ना, सुक्त्वका पार ना ध्यानका पार ना ।

आपमें राजते शांतमय छाजते, अन्तविन वीर्यको पूज अथ भाजते ॥१५२॥ अनन्तवीर्यजिनाय अर्घं नि०
वृक्षांकसुखेश्रणे विभाति, यस्यापस्ताद् वृषभूतिहेतुः ।

सूरिप्रसु तं विधिनामहामि, वार्मुख्यतत्त्वैः शिष्यतत्त्वलब्धै ॥१५३॥

भाषा अंकवृष धारते धर्म वृष्टी करे, भाव सन्तापहर ज्ञान सुष्टो करे ।
नाथ सूरिप्रसं पूजते दुखहनं, मुक्ति नारी घर पदुपे निजघ्ननं ॥ ॐ ह्रीं सूरिप्रमजिनाय अर्घं नि० (१८)
वीर्येशभूमीरुद्रपुष्पमिद्रमह्लांछनं पुण्ड्रपूरिरीट । विशालमीशं विजयाप्रसूनमवोमि सद्बुध्यानपरायणोऽह ॥
भाषा-पुण्ड्र पुरवर मात विजया जने, वीर्य राजा पिता ज्ञानधारी तने ।

जुगमचरण भजे ध्यान इकनाब हो, जिनविशालप्रभ पूज अघहान हो ॥१५४॥ ॐ ह्रीं विशालप्रमजि०.....
करस्वतापद्मार्धांगजातं, शखांरुद्धैः श्रियमीशितारं ।

संमान्य त बज्रधरं जिनेन्द्र, जलाक्षतैरर्चितसुःकरोमि ॥१५५॥

भाषा-बज्रधर जिनवरं पद्मरथके सुनं, शख चिह्न धरे मान रुष भयगतं ।
मात सरसुति बड़ी इन्द्र मन्मानिता, पूजते जासको पाप मष भाजना ॥ ॐ ह्रीं बज्ररजिनाय अर्घं नि०
वात्मीकवंशांबुविधिशीतरश्मि, दयाधतीमातृकमंक्षयावं ।
सप्तपुण्डरीकिण्यवनं जिनेन्द्र चन्द्रानन पूजयताज्जगद्यैः ॥१५६॥

भाषा-चन्द्र आनन जिनं चन्द्रको जयकरं, कर्मविधेदंसकं सायुजनशमकरं ।
 मातृ कक्षगावती नम्र पुण्ड्रीकिनो, पूजते माहकी राउथधानी छिनो ॥ ॐ ह्रीं चन्द्राननजिनाय अर्घं नि०

श्री रेणुकामातृकमञ्जचिह्न, देवेशसुतपुत्रसुदारभावं ।
 श्री चन्द्रबाहु जिनमर्चयामि, कृतप्रयोगे विधिना प्रणम्य ॥५५७॥

भाषा-श्रीमती रेणुका मातृ है जासकी. पद्मचिह्न धरे मोहको भात की ।
 चन्द्रबाहुजिनं ज्ञानलक्ष्मीधरं. पूजते जासके सुक्तिलक्ष्मीवर ॥ ॐ ह्रीं चन्द्रबाहुजिनाय अर्घं नि० स्वाहा ।
 सुजङ्गम स्वौर्यसुजेन मोक्षपन्थावरोहाद्दुग्धनानामकीर्तिम् । महाबलश्मीपतिपुत्रमर्चये चन्द्रांकयुक्तं महिमाविशालं ॥

भाषा-नाथ निज आत्मबल सुक्ति पथ पथ दिया, चन्द्रसा चिह्न धर मोहतम हर लिया ।
 बलमहाभूपती हैं पिता जासके, गलसुजे नाथ पूगे न अवसें छके ॥५५८॥ ॐ ह्रीं सुजङ्गमजि० अ० नि०

उवालाप्रसूर्येन सुखांतिमासा. कृतार्थशां वा गलसेन मृपः ।
 सांस्य सुखीमाथनिरीश्वरो से. बोधिं ददातु त्रिजगद्विलासां । ५५९॥

भाषा-मातृ उवाला सती सेन गल मृपती, पुत्र ईश्वर जने पूजते सुरपती ।
 स्वच्छ सासानगर धर्म विस्तारकर, पूजते हो प्रगट बोधिमय भारकर ॥ ॐ ह्रीं ईश्वरजिनाय अर्घं नि०

नेत्रिप्रभं धर्मरथांगवाहे, नेत्रिस्वरूपं तपनांकसीडे । वाश्र्वन्दैनः शालिसुमप्रदीपः, धूपैः फलश्रावचरुप्रदानैः ॥

भाषा-नाथनेत्रिप्रभं नेत्रि हैं धर्मरथ, सूर्य चिह्न धरे चालते सुकिनपथ ।
 अष्ट द्रव्य लिये पूजते अघ हने, ज्ञानवैराग्यसे बोधि पावे घने । ५६०॥ ॐ ह्रीं नेत्रिप्रमजिनाय अ० नि०

श्री वीरसेनाप्रभवं प्रदुष्टकर्मोरिसैनाकरिणे मृगेन्द्रः ।
 यः पुण्डरीकां जिनवीरसेनं, सद्भूमिपालात्मजमर्चयामि ॥५६१॥

भाषा-वीरसेना सुतं कर्मसेना हत, सेनशूर जिन इन्द्रसे चन्द्रितं ।
 पुण्डरीक नगर भूमि पालक नृप, हैं पिता ज्ञानसूरा करूं मैं जपं ॥ ॐ ह्रीं वीरसेनजिनाय अ० नि०

यो देवराजक्षितिपालबंशदिनामणिः पूर्वित्तेश्वरोऽमृत ।
 उमाप्रसूनो व्यवहारयुक्ता, श्रीमन्महाभद्र उदर्थतेऽसौ ॥५६२॥

भाषा-नम्र विजया तने देव राजा पती, अर उमासातके पुत्र सशय हती ।
 जिन महाभद्रको पूजिये भद्रकर, सर्वं मङ्गल करूं मोह सन्तापहर ॥ ॐ ह्रीं महाभद्र जिनाय अर्घं नि० ।

गङ्गाफनिरुकारमणि सुसीमापुरीश्वरं वै सवभूतिपुत्रं । स्वस्तीप्रद देवयशोजिनेन्द्रमर्चोमि मत्स्रस्त्रिकलाच्छनोयं ॥
भाषा-है सुसीमा नगर भूप भूतिस्त्रवं, मात गङ्गा जने द्योतते त्रिसुत्रं ।

लांक्षणा स्वस्त्रिकं जिनयशोदेवको, पूजिये वन्दिये-सुक्ति गुरुदेवको ॥५६३॥ ॐ हां देवयशोजिनाय अ० नि०
कनकचूषणितो कनकोपकं, कुन्तलपञ्चरणादितमोहकं । अजिनवीर्यजिनं सरसीरुहविषदाविह्वमहं परिपूजये ॥
भाषा-पद्म चिन्हं धरे लोहको ब्रह्मा करे, पुत्र राजा कनक क्रोधको क्षय करे ।

ध्यान अण्डित महावीर्य अजितं धरे, पूजते जालको कर्मबन्धन टरे ॥५६४॥ ॐ ह्रीं अजितवीर्यजि० अर्घं...
एष पञ्चमकोष्ठपूजितजिनाः सर्वे विदेहोद्भवा । नित्य ये स्थितिमादधुः प्रतिपत्तन्नाममन्त्रोत्तमाः ।

करिषश्चित्तमथेऽञ्जबृविद्युञ्जित पूर्णं जिनानां मतं । ते कुर्वन्तु शिवात्मलाभमनिर्गुं पूर्णाधि सप्तमानिताः ॥५६५॥
भाषा दोहा-याजत बीस निरुह जिन, कवचि स्वाठ क्षान्त होय । पूजन बन्दन जासको, विघ्न सकल क्षय होय ॥

ॐ ह्रीं विश्वप्रतिष्ठापरोद्यायने मूल्यपुजाईपञ्चमालयोन्मुद्रितविदेहक्षेत्रे सुषण्डिप्रहितैकव्रतजिनेशसंयुक्तनित्यविहरमाण-
निबन्धितजिनेभ्यः पूर्णाधि निर्दिशामीति स्थाप्य । इव तस्य पञ्चम वक्त्रमें वीर्य जिनपुजा करके एक नारियल वहां पर या मंडलके
किनारे चढावे ।

अब छठे वक्त्रमें आचार्य परमेष्ठीके ३६ गुणोंकी पूजा कानी ।

मोहत्पथादासहस्रोः अ पञ्चविंशानिचारत्तजनादवापनां ।

सम्यक्तचतुष्टुष्टि प्रतिरक्षतोऽथ, आचार्यशर्षान् निजसायशुद्धान् ॥५६६॥

भाषा-शुजङ्गपयाल छन्द-हटाथे अनन्तानुबन्धी कषाये, करणसे हैं मिथ्यात तीनों स्वपाथे ।

अतीचार पञ्चोक्तको हैं बचाए, सु आचार दर्शन परम गुरु धराथे ॥

ॐ ह्रीं दर्शाचारस्युक्ताचार्यशर्षमेष्टिभ्योऽर्घं तन्वपामीति स्थाप्य ।

विपर्ययादिप्रहृतेः पदार्थज्ञानं, समासाद्य परात्मनिष्ठं । हृत्पतोति दंघनो सुनीद्वानर्चं शुहाद्यं सत्यपूर्णहवोन् ॥
भाषा-न संशय विपर्यय न है मोह कोई परम ज्ञान निर्मल धरे तत्त्व जोई ।

स्वपरज्ञानसे भेद विज्ञान धारे, सु आचार ज्ञानं स्व अनुभय सम्कारे ॥५६७॥

ॐ ह्रीं ज्ञानवासंयुक्ताचार्यशर्षमेष्टिभ्यो अत्र निर्दिशामीति स्थाप्य ।

जात्मस्वभावे स्थितिमादधानांश्चारित्रचारुव्रतधौर्ध्वर्तन ॥

(१११)

प्रतिष्ठा-

॥ ४८ ॥

द्विधा चरित्रावचल्यमाप्तानार्थान् यजे सद्गुणरत्नभूषान् ॥५६८॥

भाषा-सुधारित्र न्यषट्कार निश्चय सम्हारे, अट्टिसादि पाँचों व्रतें सुद्व घारे ।

अवल आत्ममें सुद्वता सार पाए, जजँ पद गुरुके दरब अष्ट लाए ॥५६८॥

ॐ ह्रीं चरित्राचारसयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्मृष्टा । (११२)

बाह्यांतरद्वैघतपोअभियुक्तान्, सुदर्शनाद्रि हसतोऽचलत्थात् ।

गाढाषरोऽहात्मसुखशेषभाषान्, यजामि भक्त्या मुनिसंघपूज्यान् ॥५६९॥

भाषा-तपें द्वादशों तप अचल ज्ञानधारी, सह गुरु परीषह सुसमता प्रचारी ।

परम आत्म रस पीवते आगहो तें, भजँ मैं गुरु छूट जाऊँ भवों तें ॥ ॐ ह्रीं तयाचारसयुक्ताचार्यपर० अर्धं

स्वात्मानुभावोद्भूतवीर्यशक्तिहृदाभियोगावनतः प्रशक्तान् । परीसहापीडनदुष्टदोषागतो स्ववीर्यप्रवणान् यजेऽहं

भाषा-परम ध्यानमें लीनता आप कानी, न हटते कभी घोर उपसर्ग दीनी ।

सु आत्म बलीवीर्यकी ढाल धारी, परम गुरु जजँ-अष्ट द्रव्यें सम्हारी ॥ ५७० ॥

ॐ ह्रीं वीर्याचारसयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्मृष्टा । (११४)

चतुर्विधाहारविमोचनेन, द्वित्रयादिघस्रषु तृषाक्षुधाद्रैः । अम्लानभावं दधतस्तपस्थानर्चोमि यज्ञे प्रवराचतारान् ॥

भाषा-तपः अनशनं जो तपें धीरवीरा, तजें चारविध भोजनं शक्ति धीरा ।

कभी मास पक्ष कभी चार अथ दो, सु उपवास करते जजँ आप गुण दो ॥५७१॥

ॐ ह्रीं अन्ननतपोयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्मृष्टा । (११५)

त्रिभागभोज्ये क्षितिवेदवह्निग्राह्याशने तुष्टिमतोमुनीन्द्रान् ।

ध्यानावधानाश्रमिष्टुद्धिपुष्टान्, निद्रालभौ जेतुमितान् यजामि ॥५७२॥

भाषा-सु जनोदरी नप महा स्वच्छकारी, करे नींद आलस्यका नहिं प्रचारी ।

सदा ध्यानकी सावधानी समहारे, जजँ मैं गुरुको करम घन विदारें ॥

ॐ ह्रीं अवमोदर्यतपोऽ मयुक्ताचय परमेष्ठिभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्मृष्टा । (११६)

शृङ्गाग्रलंघं वसनं नवीनं, रक्तं नीरीक्ष्यैव मुजि करिष्ये । इत्यादिवृत्तौ निरतानलक्ष्यभाषान् मुनीन्द्रानहमंचयामि ॥

भाषा-जभी भोजना हेतु पुरमें पधारें, तभी हठ प्रतिज्ञा गुरु आप धारें ।

यही वृत्तिपरिसंख्य तप आकाहारी, भजू जिन गुरु जो कि धारें विचारी ॥५७३॥

(११७)

मिष्टान्धतुग्धादिरसापवृत्तेः, परस्य लक्ष्येऽप्यवभासनेन ।

त्यागे सुखं चेष्टिनमत्ययोगाद्, भर्तृन् गणेशाधिपतीन् यजामि ॥५७४॥

भाषा-कभी छः रसोंको कभी चार अथ दो, तजें राग बलिन गुरु लोभजित हो ॥

धरें लक्ष्य आत्म सुधा मार पीले, जजू में गुरुको समी दोष बीते ॥

ॐ ह्रीं रमपरित्यागतपेऽभियुक्ताचार्यपरमेऽप्यु अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दरीषु शूद्रोपरिषु उभक्काने, दुर्गे स्थले शून्यगृहाधलीषु. शरयासने योगहढामनेन, सधार्थमाखान्परिपूजयामि ॥

भाषा-कभी पर्वतों पर गुहा बल मशाने, धरें ध्यान एकांतमें एकताने ।

धरें आसना हठ अपल शान्तियारी, जजू में गुरुको भरम तापहारी ॥५७५॥

ॐ ह्रीं त्रिविक्तशरणात्मलपोभियुक्ताचार्यपरमेऽप्यु अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीरुमे महीध्रे सरितां तटेषु, शान्तसु वर्षासु चतुष्पथेषु । योगं हधानान् तलुकष्टदाने, प्रीतान् सुतीर्द्रान् चकृभिः

कृणामि ॥५७६॥

भाषा-कस्तु लवण पर्वत शरद्रितु नदी तट, अघोषुश वर्षातमें याकि चउ पथ ।

करें योग अलुपम सहें कष्ट सारी, जजू में गुरुको सुमम दम पुकारी ॥

ॐ ह्रीं काथङ्केऽतपोभियुक्ताचार्यपरमेऽप्यु अर्घं निर्वपामी त स्वाहा ।

संभाष्य दोषानुनयं गुरुभ्य, आलोननापूर्वमष्टनिकाये । तच्छुद्धिमात्रे निपुणा भतीशा, संतवर्धशनेन सुद्विचारः ॥

भाषा-करें दोष आलोचना गुरु सकाशे अरें वण्ड कविसों गुरु जो प्रकाशे ।

सुतप अन्तरङ्ग प्रथम शुद्ध कारी, जजू में गुरुको स्व आत्म विहारी ॥५७७॥

ॐ ह्रीं प्रायश्चित्तपाभियुक्ताचार्यपरमेऽप्यु अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सदर्शनज्ञानचारित्ररूपभेदतश्चारमगुणेषु पञ्च-पूज्येष्वशाल्यं धिनयं दधानाः, सां पांतु यज्ञाऽर्धनया पट्टिष्ठाः ॥

भाषा-दरश ज्ञान चारित्र आदि गुणोंमें, परम पवमयो पांच परमेष्ठियोंमें ।

विनय तप धरें शाल्य त्रयको निवारें, हमें रक्ष श्रीगुरु जजूं अर्घ धारे ॥५७८॥

ॐ हीं विनयतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अघ निवपामीति स्वाहा ।

दिक्संख्यसंवे खलु बातेपित्तक्फादिरोगक्रमजातिसंघौ, बयार्द्रचित्तान्मुनियेगितक्षांस्तद्दुःखहेतूनहमाश्रयामि
भाषा-यती संघ दस बिध यदी रोग धारे, तथा खेद पीडित मुनी हों विचारे ।

करें सेव उनकी दया चित्त ठाने, जजूं मैं गुरूको भरम ताप हाने ॥ ५७९ ॥

ॐ ह्रीं वैद्यवृत्तपौभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अघ निवपामीति स्वाहा ।

श्रुतस्य बोधं स्वपरार्थयोर्वा, स्वाध्याययोगादवभासमानान् ।

आम्नायपृच्छादिषु दत्तचित्तान्, सपूजयामोऽर्घविधानमुख्यैः ॥५८०॥

भाषा-कर बोध निज तत्त्व पर तत्त्व रुचिसे, प्रकाशें परम तत्त्व जगको स्वमतिसे ।

यही तप अमोलक करमको खपावे, जजूं मैं गुरूको कुबोधं नशावे ॥

ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ नि० स्वाहा ।

विनश्चरे देहकृते समत्वस्यागेन कायोऽसृजतोपि पद्मा-सनादियोगानवधार्थचात्मसंपत्सु सरथाः सहस्रश्रयामि ॥

भाषा-अपावन विनाशीक निज देह लखके, तजें सध समत्वं सुधा आत्म चखके ।

कर तप सु व्युत्सर्ग सन्तापहारी, जजूं मैं गुरूको परम पद बिहारी ॥ ५८१ ॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अघ नि० स्वाहा ।

येषां मनोऽनिशमात्तैरौद्रभ्रूसैरनङ्गीकरणाद्धि धर्म्यै । शुक्लोपकण्ठे परिवर्त्तमानं तानाश्रये विंबविधानयज्ञ ॥

भाषा-जु है आंतैरौद्र कुध्यानं कुज्ञानं, उन्हें नहिं धरें ध्यान धर्म प्रमाण ।

करें शुद्ध उपयोग कर्मपहारी, जजूं मैं गुरूको स्व अनुभव सम्हारी ॥५८२॥

ॐ ह्रीं ध्यानावरुग्धननिरताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ नि० स्वाहा ।

येषां श्रुवः क्षेपणमात्रतोऽपि, शकस्य शकत्वविघातनं स्यात् ।

एषविधा अग्युदिः कुघातो, क्षमा भजन्ते ननु तान् महामि ॥५८३॥

भाषा-करै कोय बाधा वचन दुष्ट बोले, क्षमा ढालसे क्रोध मनमें न कुछ लें ।

धरें शक्ति अनुपम तदपि शाम्बधारी, जजूं मैं गुरूको स्व धर्मपबारी ॥

ॐ ह्रीं उत्तमशुभापरमवर्णवारकाचार्यपरमेश्वरिभ्यो अथ निर्वाणमीति स्वाहा ।

न जातिलाभैश्च्यविदङ्करूपमदाः कदाचिन्नननं प्रयांति ।

येषां मृदिम्ना गुरुणाद्रचित्तास्ते वदुरीशाः स्तवनाच्छिवं मे ॥५८४॥

भाषा-धरें मद न तप ज्ञान आदी स्व मनमें, नरम चित्तसे ध्यान धारें सु बनमें ।

परम मादबंधं धर्म संशयकू प्रचारी, जजूं में गुरूको सुधा ज्ञान धारी ॥

ॐ ह्रीं उत्तममोर्दवधर्भधुग्नराचार्यपरमेश्वरिभ्यो अर्घ्यं निर्वाणमीति स्वाहा ।

सवप्र निदृच्छद्मदशासु वल्लोप्रतानमानमारोहति चित्तभूमौ ।

तपोयमोद्भूतफलरबन्ध्या, शास्त्र्यांबुसिक्ता त नमोऽतु तेभ्यः ॥५८५॥

भाषा-परम निदृक्पट चित्त भूमौ समहारे, लना धर्म वर्धन करे शांति धारें ।

करम अष्ट हन मोक्ष फलको विचारें, जजूं में गुरूको ु ज्ञान धारें ॥

ॐ ह्रीं उत्तमोर्दवधर्भधुगिष्टाचार्यपरमेश्वरिभ्यो अर्घ्यं निर्वाणमीति स्वाहा ।

भाषासमित्या भयलो ममोहमूलङ्कस्तथादनुभूतया च । हितं मितं भाषयतां सुनीनां, पादारविद्वहपमर्चयामि

भाषा-न रुष लोभ अथ हास्य नहिं चित्त धारे, बवन सत्य आगम प्रमाणे उचारे ।

परम हितमित सिष्ट वाणो प्रचारी, जजूं में गुरूको सु समया विहारो ॥५८६॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्भप्रतिष्ठिताचार्यपरमेश्वरिभ्यो अर्घ्यं निर्वाणमीति स्वाहा ।

न लोभ रक्षोऽभ्युदयो न तृष्णागृद्धो पिशाच्यौ सविधं सदेतः ।

तस्मात् शुचित्वात्मविभा चकास्ति, येषां तु पादश्लमर्चयेऽहं ॥५८७॥

भाषा-न है लोभ राक्षस न तृष्णा पिशाचा, परम शौच धारें मदा जो अजाची ।

करें आत्म शोभा सत्र भंताष धारी, जजूं में गुरूको भवातापहारी ॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्भधारकाचार्यपरमेश्वरिभ्यो अर्घ्यं निर्वाणमीति स्वाहा ।

मनोबचःकायभिदानुमांदादिभङ्गश्चेन्द्रियजन्तुरक्षा । वर्धति सत्संयमबुद्धिधीरास्तेषां सपर्योधिधिमाचरामि ॥

भाषा-न संयम विराधें करें प्राणिरक्षा, वमें इन्द्रियोंको मिटावें कुदृच्छा ।

निजानन्द रात्रे खरे संघमी हो, जजू में गुरूको यमी अरु दसी हो ॥५८८॥

ॐ ह्रीं उत्तमद्विविधसंयमप्राचायपामेष्टिभ्यो अघ निर्धामीति स्वाहा
तपोविभृषा हृदयं विभर्ति, येषां महाघोरतपोगुणाग्रयाः ।

इन्द्रादिधैर्यच्यवनं स्वतस्थं, तथा युता एष धिचैषिणः स्युः ॥

माषा-तपो सूषण धारते यति निरागी, परम धाम सेवी गुणग्राम त्यागी ।

करें सेष निन्दकी त इन्द्रादि देया, जजू में चरणको लहूं ज्ञान मेया ॥ ॐ ह्रीं उत्तमत्वोऽतिस्वधर्मं० पर०
समस्तजतुष्वभय पायसंपत्करी ज्ञानशुद्धतिरिष्टा धर्मोषधीगा अपिते मुनीशास्योगेश्वरा द्रक्षुं मनोमलानि ॥

अभयदान देते परम ज्ञान दाता, सुधर्मोषधी पादते आत्म प्राता ।

परम त्याग धर्मी परम लक्ष कर्मी, ज में गुरूको शमूं कर्म गर्मी ॥ ५९० ॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधमप्रवोणाचार्यपरमं धृभ्यो अ निर्धामीति स्वाहा ।

आत्मस्वभावादपरे पदार्थो, न हेऽथवाऽऽं न परस्य बुद्धिः ।

येषामिति प्राणयति प्रज्ञां, तेषां पदार्थी करवाणि नित्य ॥ ५९१ ॥

माषा-न पर वस्तु मेरी न संबन्ध मेरा, अलख गुण निःशून शमी आत्म मेरा ।

यही भाव अनुपम प्रकाशो सुध्यानं, जजू में गुरूको लहूं शुद्ध ज्ञानं ॥ ॐ ह्रीं उत्तमाकिच्यधर्मं० चा०प०

रं भावार्था यत्सत्सोविकारं, कर्तुं न शक्ताऽऽत्मगुणानुभावात् ।

शीलेशतामादधुक्तमार्थो, यजामि तानार्थशरान् मुनीन्द्रान् ॥ ५९२ ॥

माषा-परम शील धारी निजारास चारी, न रंभा सु नारी करे मन विकारी ।

परम ब्रह्मचर्या चलत ए कृतानं, जजू में गुरूको सभो पापहानं । ॐ ह्रीं उ०त्र०महानु० धर्मसहनीयाचार्यपरमे०

संरोधनान्मानसमङ्गवृत्तं, विकल्पसङ्कल्पपरिक्षयाच्च । शुद्धोपयोगं भजतां मुनीनां, गुप्तिं प्रशस्यन्नशामहे तान्
माषा-मनः गुप्तिधारी विकल्प प्रहारी, परम शुद्ध उपयोगमें नित विहारी ।

निजानन्दसेवी परम धाम बेनी, जजू में गुरूको धरम ध्यान देयो ॥ ५९३ ॥ ॐ ह्रीं मनोगुप्तिमयुक्ताचार्यपर०

धर्मोपदेशात्तहते कथाया, आभषणात् संभ्रमतादिदोषिः ।

धियोजनाद् ध्यानसुधैकपानाद्, गुप्तिं वचोगामदितान् यजामि ॥ ५९४ ॥

भाषा-वचन गुप्तिधारी महासौख्यकारी, करें धर्म उपदेश संशय निवारी ।
सुधा सार पीते धरम ध्यान धारी, जजूं मैं गुरूको सदा निर्विकारी ॥ ॐ ह्रीं वचनधारिकाचार्यपरमे०

वन्याः समिद्धिरचितां दृषस्वृत्कीर्णांमिषांगपतिमां निरीक्ष्य ।
कण्डूतिनांगानि लिहन्ति येषां, धाराप्रमर्धेण यजामि सम्यक् ॥५९५॥
भाषा-अचल ध्यान धारी खही सृति धारी, जजू खुत्रावें सृगी अंग अपना सम्हारी ।
धरी काय गुप्त निजानन्द धारी, जजूं मैं गुरूको सु समता प्रचारी ॥ ॐ ह्रीं कायगुप्तियुक्ताचार्यपरमे०

सामायिकं जाहति नोपदिष्टं, त्रिकालजातं ननु सर्वकाले ।
रागक्रुधोर्मूलनिवारणेन, यजामि चावश्यककर्मघातुम् । ५९६॥
भाषा-परम साम्य भाधं धरें जो त्रिकालं, भरम राग द्वेष मद माह टाले ।
पियै ज्ञान रस शाति सनता प्रचारी, जजूं मैं गुरूको निजानन्द धारी ॥ ॐ ह्रीं सामायिकावश्यकर्मधारि०

सिद्धश्रुति देवगुरूश्रुतानां, स्मृतिं विधायापि परोक्षजातं ।
सद्बन्धनं नित्यमपार्थहानं, कुर्वति तेषां चरणौ यजामि ॥५९७॥
भाषा-करै बन्दना सिद्ध अ हन्त देवा, सगन तिन गुगोंमें रहें साग लेवा ।
उन्हींसा निजात्म लु अपने विचारें, जजूं मैं गुरूको धरम ध्यान धारें ॥ ॐ ह्रीं बन्दनावश्यकनिराचार्यपरमे०

तेषां गुणानां स्तवनं सुनीद्रा, यत्रोभिरुद्धूतमनोमलांकैः ।
कुर्वति चावश्यकमेव यस्मात् पुण्यांजलि तत्पुरतः क्षिपामि ॥५९८॥
भाषा-करें संस्तवं सिद्ध अरहन्त देवा, करें गान गुणका लहें ज्ञान मेवा ।
करें निर्मलं भाषको पाप नाशें, जजूं मैं गुरूको सु समता प्रकाशें ॥ स्तवनावश्यकभंयुक्ताचार्यपरमेऽडि०

मलोत्सृजादौ कचनारदाष प्रतिक्रमेणापनुदन्ति वृद्धं ।
साधुं समुद्दिश्य निशादिधीगहोषान् जहत्यर्चनया धिनोमि ॥५९९॥
भाषा-एगो दोष तन मन बचनके फिरनसे, कइ गुरु समापे परम शुद्ध मनसे ।
करें प्रतिक्रमण अर लहें क्षण्ड सुखसे, जजूं मैं गुरूको छुटूं सर्व दुःखसे ॥ ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकनिर०

स्वो नाम चात्थाऽध्ययते यदर्थः, स्वाध्याययुक्ता निजमानुबुद्धः ।

श्रुतस्य चिन्ताऽपिदर्थबुद्धिस्तासाथये स्वाभिमताथेसिद्धय ॥६००॥

भाषा-करे भावना आत्मकी ज्ञान ध्यावे, पढ़े शास्त्र कचिसे सुबोध बढ़ावे ।

यही ज्ञान सेवा करम मल छुडावे, जजू में गुरूको अबोध हटावे ॥ ॐ ह्रीं साध्यावश्यकर्मनिरताचार्यप०

भुजप्रलम्पादिविधिज्ञतायाः, पौरस्त्यमाध्याधिगमं बहन्तः ।

व्युत्सर्गमात्रा वशिः कृताथो, अस्मिन् मखे यान्तु विधिज्ञगुजां ॥६०१॥

भाषा-तजें मय मरुत्त शरीरादि सेती, खड़े आत्म ध्यावे छुटे कर्म रेती ।

लहें ज्ञान भेदं सु व्युत्सर्ग घारें, जजू में गुरूको स्व अनुभव विचारें ॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गाऽप्रकनिताचार्यपरमंष्टिभ्यो अघ निवपामीति स्वाहा ।

गुणोद्देशादेवा प्रणिधिवशतोऽनंतगुणिनां । कृता ह्याचार्योणामपचित्तिरिंध्र भावबहुला ॥

समस्तान् संसृत्त्य श्रमणमुकुटानर्धमलधु । प्रपूर्त्तं संहंधं मम मखविधिं पूरयतु वै ॥६०२॥

भाषा दोहा-गुण अनन्त धारी गुरू, शिवमग चालन हार । मंध सकल रक्षा करे, यज्ञ विद्य हरतार ॥

ॐ ह्रीं अस्मन्नप्रतिष्ठोद्यापने पूजां मुख्याषष्ठलयोन्मदित आचार्यपरमंष्टिभ्योपूर्णघ निर्वपामीति स्वाहा ।

इम तरह पूजा काके एक नागियल छुटे बलयमें या मण्डलके किारे रखे ।

अब सातवें बलयमें स्थापित उमाधाय परमंष्टीके ०५ गुणोंको पूजा करनी ।

आचाराङ्गं प्रथम सागरमुनीशचरणभेदकथं । अष्टादशसहस्रपदं यजामिसर्वोपकारसिद्धयथ ॥६०३॥

भाषा दुतिविलम्बित छन्द-प्रथम अङ्ग कथन आचारको, सहस्र अष्टादश पद धारतो ।

पढ़त साधु सु अन्य पढावते, जजू पाठकको अति चावसे ॥

ॐ ह्रीं अष्टादश सहस्रादकावागङ्गाज्ञाताउपाधाय परमंष्टिभ्यो अघ निर्वपामीति स्वाहा ।

सूत्रकृताङ्गं द्वितीय षट्त्रिंशत्सहस्रपदकृतमहितं । स्वपरसमयविधानं पाठकपठित यजामि पूजाह ॥६०४॥

भाषा-द्वितीय सूत्रकृतांग विचारते. स्वपर तत्त्व सु निश्चय लावते ।

पद छत्तीस हजार विशाल है, जजू पाठक शिष्य दयालु हैं ॥

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत्सहस्रपदंयुक्तसूत्रकृतांगज्ञाताउपाधायपरमंष्टिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्थानांगं द्विकचत्वारिंशत्पदकं षडर्थहृशसरणे; एकादिसुभेदयुजः कथकं परिपूजये वसुभिः ॥६०५॥

भाषा-तृतीय अङ्क स्थान छः द्रव्यको, पद हजार विद्यालिम धारतो ।

एक द्वे त्रय भेद बखानता, जज्जू पाठक तत्त्व पिछानता ॥

ॐ ह्रीं द्विचत्वारिंशत्सप्तमयुक्तस्थानांगज्ञाताउपाध्यायपामेष्ठिनेऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

समवायाङ्गं लक्षकं चतुरितषष्टोमहस्रपदविशदं । द्रव्यादिचतुष्टयेन तु साम्योक्तिर्धत्त पूजये विधिना ॥६०६॥

भाषा-द्रव्य क्षेत्र समय अर भावसे, साम्य झलकावे विस्तारसे ।

लख सहस्र चौसठ पद धारता. जज्जू पाठक तत्त्व विचारता ॥

ॐ ह्रीं एकलक्षषष्ट पदन्यामहस्रमत्रायांगज्ञाताउपाध्यायप मे छिनेऽत्र निवपामीति स्वाहा ।

व्याख्याप्रज्ञपर्यंगं द्विलक्षमहिताष्टविशतिमहस्रपदं । गणघाकृत्षष्टिसहस्रपञ्चाक्तियत्र पूज्यते महसा ॥६०७॥

भाषा-प्रश्न साठ हजार बखानता, सहस्र अठविंशति पद धारता ।

द्विलख और विशद परकाशना, जज्जू पाठक ध्यान सम्हारता ॥

ॐ ह्रीं द्विलक्षअष्टविशतिपस दं जन्व्याख्याप्रज्ञपर्यंगज्ञाताउपाध्यायपामेष्ठिनेऽत्र निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञातुर्धर्कथांगं शारलक्षषष्टकपञ्चाशत् पदसहित दृष्टचर्चाप्रश्नोत्तरपूजित महये ॥६०८॥

भाषा धर्म चर्चा प्रश्नात्तर करे, पाँच लाख महस्र छप्यन धरे ।

पद सु मध्यम ज्ञान बढावना, जज्जू पाठक आतम ध्यावना ॥

ॐ ह्रीं पचलक्षषट्पंचासत्सहस्रादमङ्गलान्तुर्धर्कथांगथा/कोपाध्यायपामेष्ठिनेऽथ निर्वपामीति स्वाहा ।

उपामकपाठकशिवलक्षसप्ततिसहस्रपदभंगं । (?)

त्रतशीलाधानादिक्रियाप्रवीणं, यजामि सलिलाद्यै ॥६०९॥

भाष-त्रत सुशील क्रिया गुण आवका, पद सु लक्ष इगधारह धारका ।

सहस्र सप्तति और मिलारहे, जज्जू पाठक ज्ञान बढाइये ॥

ॐ ह्रीं एकादशलक्षपप्ततिसहस्रपदशोभितोगासकाध्ययनांगवारकोपाध्यायपामेष्ठिने अथ निर्वपामीति स्वाहा ।

अन्नकुदंगं दश दश साधुजनोपसगकथकमधितोर्थम् ।

तेषां निःश्रेयसलंभनमपि, गणधरपठित यजामि सुदा ॥६१०॥

भाषा-दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थकर शिवतिथ बरे ।

सहस्र अठाहस्र लाख तोहसा, पद यजूं पाठक जिन सारिसा ॥

ॐ ह्रीं त्रिविभ्रतिलक्षभाठविभ्रतिसहस्रपदशोभितातकृतदशज्ञानाकोपाध्यायपरमेष्ठिने अघ निर्वपामीति स्वाहा ।
उपपादानुत्तरकं द्विचत्वारिशल्लक्षेसहस्रपदं । (?) विजयादिषु नियमेन मुनिगतिरुथं यजामि सहनीय ॥
भाषा-दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थ अनुत्तर अवतरे ।

सहस्र च चालिस लाख जानवे, पद धरे पाठक बहु ज्ञान दे ॥६११॥

ॐ ह्रीं द्विभ्रतिलक्षचतुर्वंत्वारिशल्लक्षपदशोभितानुत्तरोपपादिकांगधाकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।
प्रश्रव्याकरणांगं त्रिणवत्रिलक्षत्रिषोडशसहस्रपदं । नष्टोद्दिष्टं सुखश्रमगतिसाविकथं पूजये चरुफलचैः ॥
भाषा-प्रश्रव्याकरणांग महान थे, सहस्र ओलह लाख तिरानवे ।

पद धरे सुख दुःख विचारता, जजूं पाठक धर्म प्रचारता ॥६१२॥

ॐ ह्रीं त्रिभ्रतिलक्षषोडशसहस्रपदशोभिसप्रश्रव्याकरणांगधाकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।
अंग विपाकसूत्रं कोटयेरुचतुरशोभिसहस्रपदं । कर्मोदयसत्त्वानानोदीर्णादिकथं यजनभागलोऽर्चामि ॥६१३॥

भाषा-सहस्र चत्वारसि कोटि एक पद, धरत सूत्रविपाक सुज्ञान धद ।

कर्म-बन्ध उदय सत्त्वादिक कथं, जजूं पाठक जोते कामरथ ॥

ॐ ह्रीं एककोटिचतुरशोभिसहस्रपदशोभिसविपाकसूत्रोपधाकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽयं निर्वपामीति स्वाहा ।
उत्पादपूर्वकोटिपदपद्धतिजीवसुखषट्कं । निजनिजस्रभाषघटितं कथयतप्रांचामि शक्तिभरः ॥६१४॥

भाषा-कथन षट् द्रव्योंकी सारता, एक कोटि पदको धारता ।

पूर्व है उत्पाद सु जानकर, जजू पाठक निज रुचि ठान कर ॥

ॐ ह्रीं उत्पादपूर्वोपधाकोपाध्यायपरमेष्ठिने अघ निर्वपामीति स्वाहा ।

अप्रायणीयपूर्वषणवतिकोटिपद तु यत्र तत्वकथा । सुनद्यदुर्गयतस्त्वप्राणयपरूपकं प्रयजे ॥६१५॥

भाषा-सुनय दुनेय आदि प्रमाणता, नभति छ कोटि पद धारता ।

पूर्व अप्रायण विस्तार है, जजू पाठक भवदधि तार है ॥

ॐ ह्रीं अप्रायणीयपूर्वषाकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीर्यानुवादमधिसप्ततिलक्षपादं, द्रव्यस्वतस्वगुणपर्यथवादमध्य ।

तत्तत्स्वभावागतिनीचिधानदक्षं, सम्पूजये निजगुणप्रतिपत्तिहेतोः ॥६१६॥

भाषा-द्रव्य गुण पर्यय बल कथत है, लाख सत्तर पद यछ भरत है ।

पूर्य है अत्रुथाद सु वार्थका, जजूं पाठक यतिपत्र धारका ॥

ॐ हीं वीर्भानुथादपूर्वभाको गध्यायपमे प्रुने अर्ध निर्वेपामी त स्वाहा

नास्त्यस्तिवादमधिषट्पिण्डुलापादं हसोद्भंभश्चनप्रतयत्तिसूल । स्वाद्वादनेतिभिरुदस्तविरोधमात्रं पूजयेजिनगतप्रसवैकहेतुम् ॥

भाषा-नास्ति अस्त्त प्रवाद सुअंय है, साठ लाख मध्यम पद संग है । सप्तभंग कथत जिन मार्गका, उजं पाठक मोहनिवारकर ॥

ॐ हीं अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वभाकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्ध निर्वेपामी त स्वाहा ।

ज्ञानप्रवादमकाटिपदं तु हींभकेन वाणामितभावाविवणत्वं कृत्वागरुपरिमौनहरं सर्वे यत्पाठकः क्षणमिदं सप्तपै विचार्थम् ॥

भाषा-ज्ञान आठ तुभेद प्रकाशता, एककम कोटीपद धारत ।

सतत ज्ञान प्रयाद विचारता जजूं पाठक संजय टारता ॥

ॐ हीं ज्ञानप्रवादपूर्वभाकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अर्धं निर्वेपामीति स्वाहा ।

स्त्यप्रध्व द्धमधिकं रसप्रादजातः कोटीपदं निखिलस्त्यविचारदक्षं ।

ओटुपदवत्तुगुणभेदकथापि यत्र तं पूर्वसुख्यमभवाद्य उक्तमंत्रैः ॥

भाषा-कथन अस्त्य सु भावको कोटि अरु पदधारी पूर्वको ।

पहन स्त्यप्रयाद जिनागसा, जजूं पाठय ज्ञाता आगसा ॥६१९॥

ॐ हीं स्त्यप्रवादपूर्वभाकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्य उर्ध्वं स्वाहा (१६)

आत्मप्रवादादरश्मिभित्तिकोटिपादात्, जीवस्य कर्तृगुणभोक्तृगुणादिवादान् ।

शुद्धेतरप्रणयत्तत्कथनं तु येषु धंदासहे तदभिलाष्यगुणपवृत्त्ये ॥ ६२० ॥

भाषा-सकल जीव स्वरूप विचारता कोटि पद दृढवीम सुधारता ।

पढा आत्मप्रवादा महालको, जजूं पाठक दुर्धनि हाभका ६२० ॥

ॐ हीं आत्मप्रवादपूर्वभाकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्धं निर्वेपामीति स्वाहा (१६३)

कर्मपवादकर्मये विद्युसंख्यकोटीसंख्यानघांतिलयुतान् बहुकर्मणां च ।
सर्वापकर्षणनिर्घातिसुखालुगादे. पद्यान् स्थितानमित्तपूजनवा धिनोमि ॥६२१॥
भाषा-कर्मपंच विधान बलान्ना, कोटि पद अरलीलाख धारता ।
पठत कर्म प्रवाद सुखानस्यै, जजूं पाठक शुद्ध विधानस्यै ॥६२१॥

ॐ ही कर्मपवादपूर्वभागकोषाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽथ नि० । (१६४)
प्रत्याहृतेत्यतुर्गातिसुखप्रदान् निक्षेपसंस्थितिविधानकथप्रसिद्धान् ।
गान्प्रमाणनवलक्षणसंयुजोऽर्थे यामार्चने शुलभरस्वयनोपयुक्तान् ॥६२२॥
भाषा-नपप्रमाण सुव्याथ विचारता, लास्य पद चौरास्त्री धारता ।
पूर्व प्रत्याहार तु नान्य है, जजूं पाठक गनताराय है ॥६२२॥

ॐ ही प्रत्याहारपूर्वभागकोषाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽथ नि० स्यात् ॥ (१६५)
विद्यालुचादभुवि चन्द्रशुकांतिकाष्टालक्षा पदा यद्विभंजविधिप्रकारः ।
संरोहिणीमृत्तिदीर्घचिदां, प्रबंनस्तं पूजये शुक्लुवांपुजकोमजात ॥६२३॥
भाषा-मंत्र विद्याविधिको साधता, लक्ष दशकोटि पद धारता ।
पूर्व है अलुगाद तुज्ञानका, जजूं पाठक सन्मति दायका ॥६२३॥

ॐ ही विद्यालुगादपूर्वभागकोषाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽथ नि० स्यात् ॥ (१६६)
कल्याणवादनमशुनमंगसुखं, षड्विंशतिमित्तकोटिपदं क्षमये ।
अज्ञास्ति तीर्थकरकाप्रयत्ननिखडि, जन्मोत्सव्यापिनविधिरुत्तमाधना च ॥६२४॥
भाषा-पुरुष ज्ञेयठ लादि महानका, कथन वृत्त सकल कल्याणका ।
कोटि छत्रवत्न पदको धारता, जजूं पाठक अघ सब दारता ॥

ॐ ही कल्याणवादपूर्वभागकोषाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽथ नि० स्यात् ॥ (१६७)
प्राणप्रवादायतां नराणां, विश्वप्रख्यामिषकोटिपदाभियुक्तं ।
काऽऽर्तिभवेतिरघोरभवस्य, चायुर्थदादिसुस्वरसुतं परिपूजयामि ॥६२५॥
भाषा-कथन भेद सुवैद्यक शास्त्रका, कोटि तेरह पद का धारका ।

पूर्व नाम सुपाण प्रवाद है, जजू पाठक सुर नत पाद है । १६८॥

ॐ ही प्राणप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽथ नि० । (१६८)

क्रियाविद्याल नवकोटिपद्यैयुक्तं सुल्लगीतकलाविशिष्टं छन्दोगणाद्यानयाव्यंमंतमध्यापकान्नम्र विधौयजामि ६२६
भाषा-कथल छंदकल। संगीतको, कोटि नद्य पद्य ऋधप्रस रीतको ।

पूर्व नाम सु क्रिया विद्याल है, जजू पाठक कानदताल है ॥६२६॥

ॐ ही क्रियानिखालपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्धं नि० । (१६९)

त्रैलोक्यध्विदौ शिबलरथविद्या, छाज्जी सुकोठी द्विदशप्रसाणाः ।

पदाखिलोकीस्थितिसद्विधानसञ्चार्ये आतिथिमाशनाय ॥६२७॥

भाषा-तीन लोक विधान विचारता, कोटि अर्द्ध स द्वादश धारता ।

पूर्वबिन्दु त्रिलोक विद्याल है, जजू पाठक करत निहाल है ॥६२७॥

ॐ ही त्रैलोक्यध्विदुपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्धं नि० । (१७०)

इत्थं श्रीशुतदेवतां जिनधरां भोधुदृगतागृद्धिभृशुख्यैर्गैथनिबभलाक्षरकृतामालोकयन्तीं त्रयं ।

लोकानां तदवाशिपाठवधियोपाध्यायशुद्धारमनः कुरवाराराधनसद्विधिधुममहाशैर्गेणाक्षये भक्तितः ॥६२८॥

भाषा-अंग इकादश पूर्वदश, चार सुज्ञानक साध । उजू गुरुके चरण दो, यजन सु अवधावाध ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् त्रैलोक्यप्रतिपत्तवर्षाद्विधानेऽख्यपुजाक्षैर्भक्तवर्षोऽनुद्रष्टादङ्गणश्रुतदेवताम्यस्तदाराधकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यश्च ।

पूर्णाधि नि०

आप एक नाथिल बलयसे इडलेके किचारे बखे आगे आठे बलयसे स्थापित साधु परमेष्ठिके २८ गुणोंकी पूजा कानी ।

जीवाजीरद्विरधिकरणव्याप्तदोषवदुहासात्, सुक्ष्मरथूलवद्वहतिहतेः सर्वथात्पयग आयात् ।

सूत्र्यासं अकलधिरति संदधानान्मुनीक्षा-नाहिसारुमत्रपरिश्रुतान् पूजये आपशुद्धया ॥६२९॥

भाषा-नागवन्दे-तजे सु नागद्वेष थाथ शुद्ध भाध धारते, परम स्वरुप आपका समाधिसे विचारते ।

फरै तथा सुषाणि अंतु चर अचर बचाषते, जजो यति मशान प्राणिरक्ष त्रत निभाषते ॥

ॐ ही अहिमामहाव्रतधाराध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्धं निवपामीति स्वाहा ।

मिथया आषामकलविगमात् प्राप्तवाकृशुद्धयुपेतान् स्याद्वादेशान् विविधसनयैर्धर्मसर्गप्रकाशम् ।

भंक्रुर्वाणानातचरणधीदूरगानारमसंभित्-सआड्यस्तानीश्रुपलगणैःपूजयाम्यध्वरेऽस्मिन् ॥६३०॥
 मापा-अस्यैव तयाग वाक सुछता प्रचारते, जिनागलानुहूल तत्र सत्य सत्य धारते ॥६३०॥

अनेक नय प्रकारसे कवन विरंघ टारते, जजो यति मछान सत्त्वत सदा सम्हारते ॥६३०॥
 क ही अनृतपत्य : महाव्रतकारकमाधुमेष्टिभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१७२)

आक्रमणये ध्वनि ? शिष्यपद्युहे रतुकामाः पृथक्त्वं देहात्मीयं करगतमिवाध्यक्षमादर्शयंतः ।
 प्राणशानं तुणनीप पृथक्त्वं त्यजन्मनापतां ह्यं चरणवरिदस्थाप्रशक्तं सुनीद्राः ॥६३१॥

मापा-अस्मिन् ब्रह्मण्ये कौच भाष भावते, जजो यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रमावते ।
 स्यतुप्त हे महाव्रत जज्ञान कौच्य पावते, जजो यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रमावते ॥६३१॥
 क ही भवामि न कृपाधुममेष्टिभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१७३)

निर्धर्मत्वोत्तरगतिजलः शाः स्त्रियः काष्ठ चत्रा-लेप्याश्मान्याश्रित्वचिदुदधिस्थानवस्त्रास्त्रियोगं ।
 राज्ञो जगद्दिशि नाचन्प्यतिष्ठद्राः स्वरंती (?) ये वै शीलं परिहृदभमुस्तान्यजेऽर्धं तिशुद्धया ॥६३२॥

मापा-स ब्रह्मचर्यं व्रतं सङ्गं सार शील पालते, न काष्ठस्य कलत्रं देव मामनो विचारते ।
 यनुदयणा सु पशुनियं कभी न मन रमावते, जजो यती न स्वप्नमाहि शीलको गमावते ॥

क ही ब्रह्मचर्यं कारकमाधुममेष्टिभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा (१७४)
 रागद्वेष आश्रितकृतपरवृत्तयोपांतरंगा ये बाह्यः अप्युदितदशाया ते ह्यकिंचन्यभायात् ।
 नापि रथैर्द्वैदुष्टकशुणाश्राहिणी रवांतसध्ये, ग्रंथा शेषां चरणधरणि पूजयाम्यादरेण ॥६३३॥
 मापा-स शत्रुद्वेष आदि अतंभ संभ धारते, न क्षेत्र आदि बाह्य संभ रंक भी सम्हारते ।
 परे सुसाक्यभाव आद्य पर पृथक् विचारते, जजो यती सम्भ्रह्म हान आभ्यता प्रचारते ॥६३३॥

क ही पांप्रत्यागकारकमाधुममेष्टिभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१७५)
 ईर्ष्यापिशाचिनामन्याचिंतस्तव्यहृष्टिप्रयोगा-मात्राच्छुद्धीयुगतिधरालोक्षनेनापि शेषां ।
 बर्षोकालार्धनिमेषसम्भूजंतुलाति विहाय तर्धेयागुरुनतिवशाद् गच्छतोऽर्धं यतीद्राव ॥६३४॥

मापा-सुचरं शय शृंग अग्र देख पाय धारते, न जं वधात क्षाय यत्न सार मन विचारते ।
 सुचार मास वृष्ट काल एक थल धिराजते, जजुं यती सु सन्मती जो ईर्षी सम्हारते ॥

ॐ ही ईर्ष्यापमतिगणकपाधुपामेष्टिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७६)

लोभक्रोधचरिगणजयाद् भोतिसोऽपमर्दो-निःशल्याद्यान् जिगृह्यचिसुधां कंठपानप्रपुष्टान् ।
 यथातथ्यं शुभनिगमयोर्जीनःप्रदुश्कलुर्वाभिप्राय वचनमभिमित्तिर्वोरकान् पूजयामि ॥ ६३५ ॥
 भाषा-न क्रोध लोभ हास्य भय रुचाय स्वाभ्य धारते, च्चन सुमिष्ट इष्ट जिन प्रजाण ही विचारते ।
 यथार्थं शास्त्र ज्ञायका सुधा सु आत्म पीरते, जजू यनीशा दूढय जाड तत्र च साहि जीवते ॥ ६३५ ॥

ॐ ह्रीं गणामर्घतभाकवाधुपामेष्टिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७७)

पदन्तवारिणोत्तिचागोत्रेऽङ्गत्यागयोगात्, दोषां चातुर्दशमलभुवां क्षापनात्-कायहानि ।
 दशमासीनामष्टनधिवेणारगालांशकृतार्थो (?) मन्थानःस्तेऽशनविरलयः पांतु पादाश्रितंसा ॥ ६३६ ॥
 भाषा-मदान दोष ह्ययालिसो सु दार आश्र लेन है, पड़े जु अन्तराय तुर्तं आस तयाण देत है ।
 अिले जु भोग पुण्यशे उमीमें सब धारते, जजुं यताष कास जीत नागद्वेष दारते ॥

ॐ ह्रीं पणानामर्घमतिधाकवाधुपामेष्टिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७८)

वस्तुग्राहं त्वं परिणामादाननिक्षेपयोगा (?) - भाषः पू-दृढपरिचयाद्विद्यते शुद्ध एवं ।
 पिच्छ कु-डोप्रहणमपि ये रक्षणाचारहेतोः कु-तोऽप्यञ्ज निहिनहशर भान्यजे सत्प्रमित्यै ॥ ६३७ ॥
 भाषा-धरें उठाय वस्तु देख याच खूब लेन है, न जन्तु कोय कुछ पाप इस विचार लेन है ।
 अतः सु सोर पिच्छका सुमार्जिका सुधारते, जजू यता दया निधान जीव दुःख दारते ॥

ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपमर्घमतिधाकवाधुपामेष्टिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७९)

व्युत्सर्गादिषां समितिषधुणां नासिकानेत्रपायू-पस्थस्थानान् मलहर्निचिधौ सूत्रमार्गविकूलं ।
 रक्षन्तोऽन्यानपि स्वदशां पोषणतोऽप्युद्ग्रां, धन्या दातेन्द्रियपारकरा आदंर्दत्तधर्तनां से ॥ ६३८ ॥
 भाषा-धरें जु अङ्ग नेत्र नासिकादि मल सु देखके, न हांय जन्तु घात थान शुद्धता सुपेखके ।
 परम दया विचार मार व्युत्सर्ग साधते, जजुं यनीशा चाल दाह शांति पय बुझावते ॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गमर्घमतिधाकवाधुपामेष्टिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८०)

उष्ण-जीतो मृदुलकठिनौ स्निग्धरूक्षौ गुरुर्गौ, स्तोत्रकः स्पर्शोऽप्यन्य उदितस्पर्शानात् सप्रसादं ।
 रागद्वेषावपि न दधतश्चेतनाचेतनेषु, किं च स्त्राणां चपुषि विषये तान्यजेहं सुनीद्रान् ॥ ६३९ ॥

भाषा-न उषण शीत मृदु कठिन गुरु लघू स्पर्शते, न चीक्रेन क्लृप्तं बस्तुसे निनाप पायते ।
न रागद्वेषको करे स्थान आय धारते, जज्जूं यती हसे लपजं ज्ञान भाप सारते ॥

ॐ ह्रीं शूर्धनेन्द्रियं त्रकारं विरातसाधुपमं पृथग्ऽत्र निर्वापमीति स्वाहा (१८१)

भिष्टस्त्रिचक्रो लयगणकटमाकरल एवं रत्नजाग्रहः, प्रोक्तो रत्नसन्निषयसत्तत्र रागकृशोर्षी ।

त्यःसात्सर्गपञ्चनियतेः पुद्गलस्य हवभाः । संजालन्तो सुनिपरिवृढाः पांतु भागचिन्तारते ॥ ६४० ॥

भाषा-न सिष्ट निजा लीज कटुक आत्म्य स्याद चाहते, काल न रागद्वेष शौच भाषको निवारते ।

सुजानने, सुभाप पुद्गलादि व्यास्य धारते जज्जूं यती शब्दा सु वाह दाहको निवारते ॥

ॐ ह्रीं शूर्धनेन्द्रियं त्रकारं विरातसाधुपमे पृथग्ऽत्र निर्वपामीति स्वाहा । (१८०)

बातद्वेषात्तु द्विभित्तुतैरुष्णतोद्वेष उदभ्य-उवासांगस्य प्रकृतिनियमात् सुप्रसिद्धोऽवतर्क्यः ।

भासपरत्वात्वा व्यसुभसुभगद्वेषगन्धौ विज्ञानन्, वास्तुश्रां संजति सप्ततां तं यतींद्र यजेऽहं ॥ ६४१ ॥

भाषा-सप्तग पक्वाथ पुद्गलादि अल्प सुग न त्यगते, सुगन्ध गन्ध दुःखदाय साधु जहां पायते ।

न रागद्वेष पात्र घ्राणना विषय निवारते, जज्जूं यतींश एक रूप सां यता प्रचारते ॥

ॐ ह्रीं वाणे श्रियधिकारं विरातसाधुपमे पृथग्ऽत्र निर्वपामीति स्वाहा (१८२)

बलाद्दृश्य नयनपिपथे तेषु नेत्र्याःस्रज्जा वे जन्माप्राहि त्रिजगद्विभितश्रकमार्बर्नपातात् ।

कृष्णे पीते हरिडकृष्णगज्जुं दे पौद्गलेक्षणोऽर्थापारोऽमन्निति परिणतः पृथ्वतेऽनौ मयात्र ॥ ६४२ ॥

भाषा-सफेद लाल कृष्ण पान नील रश्मि देखते, स्वरूप आ कुक्ष्य देख वस्तु रूप देखते ।

करं न रागद्वेष तास्य भावको सञ्जहारते, जज्जूं यती महान चक्षु रागको निवारते ॥

ॐ ह्रीं चक्षुर्द्रियविकारं विरातसाधुपमे पृथग्ऽत्र निर्वापमीति स्वाहा । (१८४)

एकः स्तोत्रं चक्षितु सुदा गद्यपद्यानवद्यत्रौनियैरन्यः श्वपच जजनी तेऽद्य भार्या ममेति ।

अत्वा कठं अर्थासि जडतामेत्य तोषं न कोपं, धरो शक्तोऽप्यमरमहिर्नस्य पूजां चिद्धमः ॥ ६४३ ॥

भाषा-करे श्रुती धनाथ एक गद्य पद्य सारते, कहे असभ्य बात एक कूला प्रसारते ।

न शेष तोष धारते पदार्थको विचारते, जज्जूं यता महान कर्णं रागद्वेष टारते ॥

ॐ ह्रीं श्रोत्रेन्द्रियविकारं विरातसाधुपमे पृथग्ऽत्र निर्वापामीति स्वाहा । (१८५)

सामर्थ्यं यस्याः स्फुरन्ति हृदये निर्वर्णलीकं कदाचि, दायातेऽपि भ्रुवमशुभसमयाबद्धपाकावतारे (?)
 घोरापडासदसि वपुसि स्पृष्ट्वाति सन्दधानो, धाहुभ्याम्बुधिमिव तारयेष माधुमयार्च्यः ॥ ६४४ ॥
 भाषा-धरे महान कांनना न रागद्वेष भाषते, चलं नदीं सुयोगसे त्रिगट कष्ट आवते ।
 तरे ससुद्र कनेको जहाज ध्यान खेवते, यजुं यतो भ्वरुा आंहि वैठ तरय बेरते ॥

ॐ हीं सामर्थ्यकावश्यकगुणधारकसाधुगमे षष्ठ्योऽर्थं निर्वपामीति स्यात् ॥ (१८६)
 स्मारं स्मारं प्रकृतिलसितानं तु पंचैश्वर्याणां, मत्यक्षं वा मननत्रिधं बन्दमानस्त्रिकालं ।
 तर्धेप्यूरक्षयणसमर्थं चर्करीरधारसन्तं सुद्वस्कारं नश्यति । शं तं महानं यजामि ॥ ६४५ ॥
 भाषा-करे त्रिकाल बन्दना सुपूज्य लिद्ध साधुको, विचार वार वार आत्म सुद्ध गुण स्थभावको ।
 करे तु नाश कर्म जे नि ओक्षणां रोकते, यजुं यतो महान माथ नाग नाथ ढाकते ॥

ॐ हीं बन्दनादयकगणधारकसाधुगमे षष्ठ्योऽर्थं निर्वपामीति स्यात् (१८७)
 चेतोरक्षप्रनापानिकार्कणो तीर्थनाथ-पादाब्जेषु मतिगुणगणे दत्तचिसो सुनान्द्रः ।
 तेषां स्तोत्रं पठति परमानन्दभारतानुभावं, किं वा सुदं सुमति स तथा प्रथयते गहुणाप्य ॥ ६४६ ॥

भाषा-करे तुमान गुण कथार तीर्थनाथ देणके, मन विनायका घडार स्वात्मभार खेयके ।
 वनाथ सुद्ध भाव माल आर वज्रण्ड डारते, जजुं यथा महान कर्म आठ चूर डारते ॥

ॐ हीं स्वनाशकगुणधारकसाधुगमे षष्ठ्यो अर्थं निर्वपामीति स्यात् (१८८)
 ज्ञोपाभाजोऽपथ । नसिदिशाररनीहारकुले, ज्ञाताज्ञानमज्जदगतो जन्तुभर्गर्तिलः स्यात् ।
 नित्यं तस्य भक्तिव्यतनं वपुरसृजानः संधं यो, कोपबालनशि जुड त तं धारार धजासि ॥ ६४७ ॥
 भाषा-करे विचार दोष तोय नित्य काथं शासते, क्षमा कथप रूपं जन्तु जगति कष्ट पायते ।
 जालोचया सुकुत्तरे सदापको सिदागते, जजुं यथा महान ज्ञान अशुभं नसायते ॥

ॐ हीं प्रतिक्रमणावकासाधुगमे षष्ठ्यो अर्थं निर्वपामीति स्यात् । (१८९)
 नित्यं चेतःकपिरचलतां नेति तं प्रथमं स्वाध्यागर्धेयः प्रगुणनिगर्धैर्धमनांश कद्रे ।
 भागे शुंडयास्तु परिगम्यान्भागसोदापधानो, वृत्ति सुद्धां श्रमति स महान्धयंतेऽर्थयुद्धिः ॥ ६४८ ॥
 भाषा-रखें सुधांध मन कपो महान है जुगट खटा, वनाथ सांकलान शाख गठसं जुटावता ।

धरें स्वभाव शुद्ध नित्य आत्मको रमावते जज्ञं यती उदय महान ज्ञानसूर्य पावते ॥

प्रतिष्ठा-

॥ ६४ ॥

ॐ ह्रीं स्वाहा अथर्वशक्तगुणधामकामाधुरामेष्टिभ्यो अर्धं निर्वाणोति स्वाहा । (१९०)

आमे भाडे कुथिनकुणपे प्राहशा नवग्रहेषु-बुद्धिः कार्यं स्वयन्नियमा वीतरागेभ्यगणां ।
 वयस्कीकर्तुं शिखरिविपिनान्नसन्नोनिर्धमत्वे कायोत्सर्गं रचयति मुनिः श्लोडप्रज्ञां प्रयातु ॥६४९॥
 मापा-तजें ममस्य कायका इसे अनित्य जानते तु कांच खण्ड वृत्तिका सु पिण्ड मम प्रमाणते ।
 खड़े वनी गुफा अहा इवदयान सार धारते, जज्ञं यना महान मोह रागद्वेष टारते ॥

ॐ ह्रीं क्रयोरस्यार्थस्यकृपुगनाकमाधुरामेष्टिभ्यो अर्धं निर्वाणोति स्वाहा । (१९१)

पूत्रे हर्म्ये मणिगणचिनाभेरुपर्येकशार्श्यां, आस्यं घोःस्थलमृगपतित्रयानःगेन्द्रकारे ।
 भूध्रप्रवोपरितन्भुवि सस्यति कचिद्वाल-नद्वो यस्य स्मरणमपि संहन्ति प्रापं स सेऽर्धं ॥६५०॥
 प्राणा-करैः कायन तु श्रुमिर्धं कटा कशुडालको, कभी नहीं विचारते पलंग खाट पालको ।
 सुहृन् एक भी नहीं गमावते कुहींसें, जज्ञं यतोश वांयते सु आत्म तस्य वीदमें ॥

ॐ ह्रीं सूषयर्कानिमयाकामाधुरामेष्टिभ्यो अर्धं निर्वाणोति स्वाहा । (१९२)

क्रांसे रेणूकरविकारणवप्रश्नप्रसर्पद्-धूलिपुंजे मलिनमपुपि त्यक्तमस्कारधीं ।
 अस्मानत्वं द्विजन्मःस्वीर्धंनिधानेऽप येषां तेषां पादांबुजगुणमह पारिजातकइर्चं ॥ ६५१ ॥
 मापा-करैः नहीं नहान सार्धं गग देहका इते एषेव शास्त्रेणें पड़े न नील अम्बु चारते ।
 वनी प्रबल पथिन्न और अन्न शुद्ध धारते जज्ञं यतीका शुद्ध पाद कर्भ मेल टारते ॥

ॐ ह्रीं अरधामनियमयाकामाधुरामेष्टिभ्यो अर्धं निर्वाणोति स्वाहा । (१९३)

वात्कं फालं यस्मन्ननुपसंठप्रामकोपीनस्यण्ड-तान्ना चित्तेऽप्युपधि वमये नैच वांछंनपस्वी ।
 देवंार्थं परसकुशलं जालरूपप्रसुद्ध, अन्वर्थैवं नयति परश्चानन्दधर्त्री तमर्चैः ॥ ६५२ ॥
 मापा-करैः नहीं कन्नूल छाल वस्त्र खण्ड धोदल, द्विगानि बल्ल धार लाज अन्न त्याग रोवती ।
 वने पथिन्न अङ्ग शुद्ध बालसें विचार हैं, जज्ञं यतीका काम जीन शील खडग धार है ॥

ॐ ह्रीं सर्वथावस्रत्यागनियमयाकामाधुरामेष्टिभ्यो अर्धं निर्वाणोति स्वाहा । (१९४)

औरं शस्त्रोजनिपराधीननापात्रमेव (?) जूडा सूधन्यनुश्रुमिदा भूतशीर्षीकृतिस्था ।

दोषार्थैवेति विहितकचोत्पादनो मुष्टिमात्रात्, साक्षान्मोक्षाध्वनिघृतिपदः पूज्यते श्रोतकर्मा ॥ १५३ ॥
भाषा-करै सु केशलौच मुष्टि मुष्टि धैर्य भावते, लखाय जन्म जन्तुका स्व केश ना बढावते ।
ममत्व देहसे नहीं न शस्त्रसे नुचावते, जजूं यती स्थातन्त्रता विहार चित्त रमावते ॥

ॐ ह्रीं कृतकेबलोचननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (१९५)
एकद्वित्रिप्रभृतिदिवसप्रोषधादिप्रकर्तुं-रास्यम्लानिर्भवति नितरां दन्तशुद्धिं विनाऽत्र ।
दौर्गंध्यान्धु वपुषमकृन्स्यैर्यमापन्नितानं, जानन्न योगं मलिनयति नो तं ससर्वे सुनीन्द्रम् ॥६५४॥
भाषा-करै न दन्तवन कभी तजा सिंगार अङ्गका, लहै स्व खानपान एकवार साध्य अङ्गका ।
तथापि दंत कणिका महान ज्योति त्यागती, जजूं यतीश शुद्धता अशुद्धता निवारती ॥

ॐ ह्रीं दन्तधावनवर्जननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽथ निर्वपामीति स्वाहा (१९६)
यांचादैन्योदरविघटनादीगतादीनि येषां, निर्मूलतो मनसि च मनालाभलाभांतराये । (?)
तुल्या दृष्टिसतदपि स्रष्टुदेकाहिसुक्तिप्रमाणं, तेषां धर्म्यावगमस्रुगमत्वाय पादौ यजामि ॥ ६५५ ॥
भाषा-धरै न चाह भोग रोगके समान जानते, शरीर रक्ष काज एकवार भक्त ठानते ।
सकल दिवस सु ध्यान शास्त्र पाठमें वितावते, जजूं यती अलाभ अन्न लाभ सा निभावते ॥

ॐ ह्रीं एकशुक्तनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (१९७)
यावदेह स्थितिघृतिधराशक्तिअङ्गीकरोति, यावत्संघाधलस्रवलतां नोजिहीते मुनित्वे ।
यावत्स्थाप्ये तद्वपगमने भोजनत्याग एवं, सन्ध्यासस्य ग्रहणमिति यद् यस्य नीतिस्तमर्चे ॥६५६॥
भाषा-खड़े रहे सुलेय अन्न देह शक्ति देखते, न होय बल विहार तब अरण समाधि पेशते ।
करै सु आत्म ध्यान भी खड़े खड़े पहाड़ पर, जजूं यती विराजते निजानुभव बदान पर ॥

ॐ ह्रीं आस्थितभोजननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽथ निर्वपामीति स्वाहा (१९८)
अष्टाविंशतिसद्गुणग्रथियसद्गुणयाभूषणं, शीलेशिष्यतनुप्ररक्षितचतुः कामेषुभिर्नोहंत ।
आर्हत्यादिपदस्य बीजमनघं येषां परं पावनं, साधूनां समुदायमुत्तमकुलालंकारमाशाद्महे ॥६५७॥
भाषा-दोहा-अठविंशति गुण धर यती, शील कवच सरदार । रत्नमय भूषण धरें, दारें कर्म प्रहार ॥
ॐ ह्रीं अस्मिन्विग्मप्रतिष्ठोत्सवे मुख्यपूजार्हअष्टमत्रलयोन्मुद्रितसाधुपरमेष्ठिभ्यस्तन्मूलगुणग्रामिभ्यश्च पूर्णार्धं नि० ।

पूर्णाधि देकर एक नारियल काठवें बलयपर या मंडलके किनारे रखे ।

अब नीमें बलयमें स्थित ४८ ऋद्धिधारी मुनीश्वरोकी पूजा करानो ।

त्रैलोक्यवर्तिसकलं गुणपर्यायाढ्यं, यस्मिन्करामलकधत्त प्रतिषस्तुजातं ।

आभासते त्रिसप्तत्यप्रतिषद्धमूर्त्ते, कैवल्यभाद्रुमधिर्षं प्रनिपत्य सूधर्मा ॥ ६५८ ॥

भाषा-दोहा-लोकालोक प्रकाशकर, कैवल्यज्ञान विशाल । जो धारें तिन चरणको, पूजूं नसूं चिज भाल ॥

ॐ ह्रीं सकललोकालोकप्रकाशकरनिरावरणकैवल्यलब्धिधारकेभ्योऽद्य निर्धपामीति स्वाहा । (१९९)

बक्रजुं भाष्यद्वितापरचित्तवर्तिभाषावभालनपरं द्विपुल्लजुभेदात् ।

ज्ञानं मनोऽधिगतपर्ययस्य ज्ञातं तं पूजयासि जलचन्दनपुष्पदीपैः ॥

भाषा-यक्र सरल पर चित्तगत, मनपर्यय जानेय । ऋजु विपुलमति भेद धर, पूजूं साशु सुध्येय ॥

ॐ ह्रीं ऋजुमतिविपुलमतिमनःपर्ययधारकेभ्योऽद्य निर्धपामीति स्वाहा । (२००)

देशावधिं च परमावधिमेव सर्वोवध्यादिभेदमतुलावमदेशपृक्तं ।

ज्ञानं निरूप्य तदवधिसियुतं मुनीन्द्रं संपूज्य चित्तभवसंशयमाहरामि ॥

भाषा-देश परम सर्वा अवधि, क्षेत्र काल मर्याद । द्रव्य भाषको जानता, धारक पूजूं साध ॥

ॐ ह्रीं अवधिधारकेभ्योऽद्य निर्धपामीति स्वाहा । (२०१)

अन्योपदेशमनपेक्ष्य यथा सुकोष्ठे बीजानि तद्गृहपतिर्विनियुज्यमानः ।

ग्रंथाथबीजबहुलान्यनतिक्रमाणि संधारयन्तृषिवरोऽर्च्यत उवस्यमन्त्रैः (१) ॥ ६६१ ॥

भाषा-कोष्ठ धरे बीजानिको, जानत जिम क्रमवार । तिम जानत ग्रन्थार्थको, पूजूं ऋषियुग सार ॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिप्राप्तेभ्यो अद्य निर्धपामीति स्वाहा । (२०२)

एक पदार्थमुपगृह्य सुखातंमध्यस्थानेषु तच्छ्रुतसमस्तपदग्रहोक्तिम् ।

पादानुसारिधिषणाद्यभियोगभाजां संपूज्य तन्मतिधरं तु समर्चयामि ॥ ६६२ ॥

भाषा-ग्रन्थ एक पद ग्रह कहीं, जानत सब पद भाव । बुद्धि पाद अनुसारि धर, जजूं सार धर भाव ॥

ॐ ह्रीं पादानुसारीबुद्धिप्राप्तेभ्योऽद्य निर्धपामीति स्वाहा । (२०३)

कालाि योगम सृत्य यथासमत्र, कोटिप्रदं भवति बीजमनिद्रियादि ।

बीर्थांतरायशमनक्षयहेतवनेकपादावधारणमतीन् परिपूजयामि ॥ ६६३ ॥
भाषा-एक बीज पद जानके, कोटिक पद जानेय । बीज बुद्धि धारी सुनी, पूजूं द्रव्यं सुलेय ॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्ध्याद्विप्रोत्थोऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (२०४)
ये चक्रिसैन्यगजवाजिखरोऽष्टवर्धनानाविधस्वनगणं युगपत् पृथक्त्वात् ।
गृह्णन्ति कर्णपरिणामवशात्सुनीद्रास्तानर्घयामि कृतुभागसमर्पणेन ॥ ६६४ ॥
भाषा-चक्री सेना नर पशु, नाना शब्द करात । पृथक् पृथक् युगपत् सुने, पूजूं यति भय जात ॥

ॐ ह्रीं संधिनश्रोऽक्रुद्धिप्रोत्थोऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (२०५)
दूरस्थितान्यपि सुमेरुविद्युप्रभास्वत्सम्पण्डलानि करपादनखांगुलीभिः ।
संस्पर्शाशक्तिसहितद्विवशात् स्पृशंतस्तान् शक्तियुक्तपरिणामगतान् यजामि ॥ ६६५ ॥
भाषा-गिरि सुमेरु रविचन्द्रको, कर पदसे छू जात । शक्ति महत् धारी यती, पूजूं पाप नशत ॥

ॐ ह्रीं दूरस्पर्शशक्तिऋद्धिप्रोत्थोऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (२०६)
नास्वादयन्नि न च तत्सदने समीहा, तत्रापि शक्तिरभितेति रसग्रहादौ ।
ऋद्धिप्रवृद्धिसहितमगुणान् सुदूरस्वादावभासनपरान् गणपान् यजामि ॥ ६६६ ॥
भाषा-दूरक्षेत्र मिष्टान्न फल, स्वाद लेन बल धार । ना वांछा रस लेनकी, जजूं साधु गणधार ॥

ॐ ह्रीं दूरास्वादनशक्तिऋद्धिप्रोत्थोऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (२०७)
उत्कृष्टनासिनहृषीकगतिं विहाय, तत्स्थोर्ध्वगन्धसमवायनशक्तियुक्तान् ।
उत्कृष्टभागपरिणामविधौ सुदूरगन्धावभासनमतौ नियतान् यजामि ॥ ६६७ ॥
भाषा-घ्राणेन्द्रिय मर्यादसे, अधिक क्षेत्र गन्धान, जान सकत जो साधु हैं, पूजूं ध्यान कृपान ॥

ॐ ह्रीं दूराघ्राणविषयग्राहकशक्तिऋद्धिप्रोत्थोर्ध्व निर्वपामीति स्वाहा । (२०८)
निर्णीतपूर्णनयनोत्थहृषीकवार्तो, चक्रेश्वरस्य नियता तदधिक्यभावात् ।
दूरावलोकनशक्तियुतान् यजामि, देवेन्द्रकधरणींद्रसमर्चितां हि ॥ ६६८ ॥
भाषा-नेत्रैन्द्रियका विषय बल, जो चक्री जानन्त । तातें अधिक सुजानते, जजूं साधु बलवन्त ॥

ॐ ह्रीं दूरावलोकनशक्तिऋद्धिप्रोत्थोऽथ निर्वपामीति स्वाहा । (२०९)

श्रोत्रेन्द्रियस्य नवयोजनशक्तिरिष्टा, नातः परं तदधिकारनिसंस्थशब्दान् ।
भोतुं प्रशक्तिरुदयस्यतिशायिनी च, येषां तु पादजलजाश्रयणं करोमि ॥ ६६९ ॥
भाषा-कर्णेन्द्रिय नवयोजना, शब्द सुनत चक्रोश । तातें अधिक श्रुशक्तिधर, पूजूं चरण सुनीश ॥

ॐ ह्रीं दूरश्रवणशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२१०)

अभ्यासयोगविह्वनाद्यपि यन्सुहृतेमात्रेण पाठयति दिग्प्रमपूर्वसार्थं ।

शब्देन बाधपरिभाजनया श्रुतं तच्छक्तिप्रभूनधियजामि अखस्य सिद्धये ॥ ६७० ॥

भाषा-विन अभ्यास सुहृतेमै, पढ़ जानत दश पूर्वः । अर्थ भाव सव जानते, पूजूं यती अपूर्व ॥

ॐ ह्रीं दशपूर्वित्वकृद्प्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२११)

एवं चतुर्दशसुपूर्वगतश्रुतार्थं शब्देन ये ह्यमितशक्तिसुदाहरन्ति ।

तानत्र शास्त्रपरिलिखिबिधानभूलिसम्पत्तयेऽहमधुनार्हणया धिनोमि ॥ ६७१ ॥

भाषा-चौदह पूर्व सुहृतेमै, पढ़ जानत अविहार । भाव अर्थ समझें सभी, पूजूं साधु चितार ॥

ॐ ह्रीं चतुर्दशपरित्वकृद्प्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२१२)

अन्योपदेशविरहऽप सुसंयमस्य, चारित्रकोटिविधयः स्वयसुदुभवन्ति ।

प्रत्येकबुद्धमतयः खलु ते प्रशस्यास्तेषां मनाक् स्मरणतो मम पापनाशः ॥ ६७२ ॥

भाषा-विन उपदेश सुज्ञान लहि, संयम विधि चालन्त । बुद्धि अमल प्रत्येक धर पूजूं साधु महन्त ॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्धित्वकृद्प्राप्तेभ्योऽद्य निर्वपामीति स्वाहा । (२१३)

न्यायागमस्मृतिपुराणपठित्यभावेऽप्याधिर्भवंति परवाद्बिदारणोद्धाः ।

वादित्वबुद्धय इति भ्रमणाः स्वधर्मं, निर्वाहयति समये खलु तान् यजामि ॥ ६७३ ॥

भाषा-न्याय शास्त्र आगम बहू, पढ़े विना जानन्त । परवादी जीतें अकल, पूजूं साधु महन्त ॥

ॐ ह्रीं वादित्वकृद्प्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२१४)

जंघाग्निहेतिकुसुमच्छदतंतुवीजश्रेणीसमाजगमना इति चारणांकाः ।

ऋद्धिक्रियापरिणता मुनयः स्वशक्तिसंभावितास्त इह पूजनमालभंतु ॥ ६७४ ॥

भाषा-अग्नि पुरुष तंतु चले, जंघा श्रेणी चाल । चारण ऋद्धि महान धर, पूजूं साधु विशाल ॥

ॐ ह्रीं जलंघातंतुषुष्यपत्रवीजश्रेणिवह्न्यादिनिमित्ताश्रयचारणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२१५)
 आकाशयाननिपुणा जिनमंदिरेषु, मेवाद्यकृत्रिमधरासु जिनेशचैत्यान् ।
 बंदंत उत्तमजनानुपदेशोगानुद्धारयंति चरणौ तु नमामि तेषां ॥ ६७५ ॥
 भाषा-नभर्मे उद्दकर जात हैं, मेरु आदि शुभ यान । जिन बन्दत भविबोधते, जजूं साधु सुख स्वान ।

ॐ ह्रीं आकाशगमस्यक्तिकारणद्विप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२१६)
 ऋद्धिः सुविक्रियगता बहुलप्रकारा, तत्र द्विधाविभजनेष्वणिमामादिसिद्धिः ।
 सुखप्राप्तिं तत्परिचयप्रतिपत्तिमन्त्रान् यायन्ति तत्कृतविकारविचर्जितांश्च ॥ ६७६ ॥
 भाषा-अणिमा मद्दिमा आदि बहु, भेद विक्रिया रिद्धि । धरैं करैं न विकारता, जजूं यती समृद्धि ॥
 ॐ ह्रीं अणिमामद्दिमालधिमागरिमाप्राप्तिप्राकाश्वस्त्रित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२१७)
 अन्तर्दधिप्रमुखकामविकीर्णशक्तिर्येषां स्वयं तपस उद्भूभवति प्रकृष्टा ।
 तद्विक्रियाद्वितयभेदसुपागतानां, पादप्रधावनविधिर्मम पातु पाणिं ॥ ६७७ ॥
 भाषा-अंतर्दधि कामेच्छ बहु, ऋद्धि विक्रिया जान । तप प्रभाव उपजे स्वयं, जजूं साधु अवधान ॥

ॐ ह्रीं विक्रियायां अंतर्बानादिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२१८)
 षष्ठाष्टमद्विदशपक्षकमासमात्रानुष्ठेयमुक्तपरिहारमुदीर्य योगं ।
 आसृत्सुगुणतपसा ह्यनिवर्तकास्ते, पांत्वर्धनविधिमिमं परिलम्भयन्तु ॥ ६७८ ॥
 भाषा-मास पक्ष दो चार दिन, करत रईं उपवास । आमरणं तप उग्र धर, जजूं साधु गुणवास ॥

ॐ ह्रीं उग्रतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२१९)
 घोरोपवासकरणेऽपि बलिष्ठयोगान्, दौर्गन्ध्यवित्युतसुखान् महदीशदेहान् ।
 पद्मोत्पलादिसुरभिस्वसयान्मुनीन्द्रान्, यायन्ति दीप्त तपसो हरिचन्दनेन ॥ ६७९ ॥
 भाषा-घोर कठिन उपवास धर, दीप्तमईं तन धार । सुरभि इवास दुर्गंधविन, जजूं यती भय पार ।

ॐ ह्रीं दीप्तऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वापामीति स्वाहा । (२२०)
 वैश्वानरौघपतिर्बुक्केन तुल्यमाहारमाशु विलयं ननु याति येषां ।
 विण्मूत्रभावपरिणाममुदेति नो वा, ते सन्तु तप्ततपसो मम सद्भिर्मृत्यै ॥ १८० ॥

भाषा-अग्नि माहिं जल सम विलय, भोजन पय होजाय । मल कफ सूत्र न परिणमें, जजूं यती उमगाय ॥

ॐ हीं तप्तपक्व द्विप्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वापामीति स्वाहा । (२२१)

हारावलीप्रभृतिघोरतपोऽभियुक्ताः, कर्मप्रमाथनधियो यत उत्सहन्ते ।

ग्रामाटवीष्वशनमप्यतिपातयन्ति, ते खन्तु कर्मणतृणाग्निचयाः प्रशांस्ये ॥ ६८१ ॥

भाषा-सुक्तावली महान तप, कर्मन नाशन हेतु । करत रंहे उत्साहसे, जजूं साधु सुख हेतु ॥

ॐ हीं महातपक्व द्विप्राप्तेभ्योऽर्धं निर्वापामीति स्वाहा । (२२२)

कासउथरादिविधिविधोग्रहजादिसत्त्वेष्वप्यच्युतानशनकायदमान् इमशाने ।

भीमादिगह्वरदरीतटिनीषु दुष्टसंक्लृप्तपाथनसहानहमर्चयामि ॥ ६८२ ॥

भाषा-कास उवर गृसित हो, अनशन तप गिरि साध । दुष्टन कृत उपसर्ग सह, पूजूं साधु अवाध ॥

ॐ हीं घोरतपक्व द्विप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वापामीति स्वाहा । (२२३)

पूर्वोदितासु विधियोगपरपरासु, स्फारीकृतोत्तरगुणेषु विकाशवत्सु ।

येषां पराक्रमहर्तिर्न भवेत्तमर्चं, पादस्थलीमिह सुघोरपराक्रमाणां ॥ ६८३ ॥

भाषा-घोर तप करत भी, होत न बलसे हीन । उत्तर गुण विकसित करें, जजूं साधु निज लीन ॥

ॐ हीं घोरपराक्रमक्व द्विप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वापामीति स्वाहा । (२२४)

दुःखप्रदुर्गतिस्तुर्भतिदौर्भनस्तसुखाः, क्रिया व्रतविघातकृते प्रशस्ताः ।

तासां तपोधिलसनेन समूलकाषं, घातोऽस्ति ते सुरसमर्चितशीलपूज्याः ॥ ६८४ ॥

भाषा-दुष्ट स्वप्न दुर्भति सकल, रहित शाल गुण धार, परमब्रह्म अनुभव करें, जजूं साधु अविकार ॥

ॐ हीं घोरब्रह्मर्च्यगुणक्व द्विप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वापामीति स्वाहा । (२२५)

अन्तर्मुहूर्तसमये सकलश्रुतार्थसंचितनेऽपि पुनरुद्भूतसूत्रपाठाः ।

स्वच्छा मनोऽभिलषिता रुचिरस्ति येषां, कुर्यान्मनोबलिन उत्तममांतरं मे ॥ ६८५ ॥

भाषा-सकल शास्त्र चिन्तन करें, एक मुहूर्त भंडार । घटत न रुचि मन वीरता, जजूं यती भवतार ॥

ॐ हीं मनोबलक्व द्विप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वापामीति स्वाहा । (२२६)

जिह्वाश्रुतावरणवीर्यशमक्षयासावन्तर्मुहूर्तसमयेषु कृतश्रुतार्थाः ।

प्रश्नोत्तरोत्तरचयैरपि शुद्धकण्ठदेशाः सुवाक्यबलिनो मम पांतु यज्ञे ॥ ६८६ ॥
भाषा-सकल शास्त्र पढ़ जात हैं, एक महूर्त मंत्रार । प्रश्नोत्तर कर कण्ठ शुचि, धरत यज्ञ हितकार ॥

प्रतिष्ठा-
॥ ७१ ॥

ॐ ह्रीं वचनबलकृद्धिप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२२७)

मेर्षादिपर्वतगणोद्धरणेषु शक्ता, रक्षःपिशाचशतकोटिबलाधिवीर्याः ।

मासर्तुवत्सरयुगाशनमोचनेऽपि हानिर्न कायबलिनः परिपूजयामि ॥ ६८७ ॥

भाषा-मेरु शिखर राखन थली, मास वर्ष उपवास । बटै न शक्ति शरीरकी, यज्ञ साधु सुखवास ॥

ॐ ह्रीं कायबलकृद्धिप्राप्तेभ्यो अघं निर्वपामीति स्वाहा ॥ (२२८)

स्पर्शात्करांहिजनिताद् गदशांतनं स्यादासर्षजा यष इति प्रतिपत्तिमासान् । (१)

येषां च वायुरपि तत्सृशतां रुजातिनाशाय तन्मुनिवराग्रधरां यजामि ॥ ६८८ ॥

भाषा-अंगुलि आदि सपर्शते, दयाल पवन हू जाय । रोग सकल पीड़ा टले, जज्ञ साधु सुख पाय ॥

ॐ ह्रीं आर्षौधिक्वद्धिप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ॥ (२२९)

निष्ठीचर्चं हि सुखपद्मभवं रुजानां, शांत्यर्थमुत्कटतपोविनियोगभाजां ।

क्ष्वेलौषध्यास्त इह संजनित्वावताराः, कुर्वंतु विघ्ननिचयस्य हतिं जनानां ॥ ६८९ ॥

भाषा-सुखते उपजे राल जिन, शमन रोग करतार । परम तपस्वी वैद्य शुभ, जज्ञ साधु अविकार ॥

ॐ ह्रीं क्ष्वेलौषधिक्रद्धिप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२३०)

स्वेदाथलं वितरजो निचयो हि शेषामुतिक्षुप्य वायु विसरेण यदंगमेति ।

तस्याशु नाशमुपयाति रुजां समूहो, जल्लौषधीशसुनयस्त इमे पुनन्तु ॥ ६९० ॥

भाषा-तन पसेव सह रज उड़े, रोगीजन हू जाय । रोग सकल नाशे सही, जज्ञ साधु उमगाय ॥

ॐ ह्रीं जलौषधिक्रद्धिप्राप्तेभ्यो अघं निर्वपामीति स्वाहा । (२३१)

नासाक्षिरुणरुदनादिभधं अलं यन्नैरोप्यकारि यमनज्वरकारसभाजां ।

तेषां मलौषधसुकीर्तिजुषां मुनीनां, पादाचनेन अघरोगहतिर्नितान्तं ॥ ६९१ ॥

भाषा-नाक आंख कर्णादि मल, तन स्पर्श हो जाय । रोगी रोग शमन करें, जज्ञ साधु सुख पाय ॥

ॐ ह्रीं मलौषविषक्रुद्धिप्राप्तेभ्यो अथ निर्वपामीति स्वाहा । (२३२)

उच्चार एव तदुपाहितवायुरेणू, अंगसृशौ च निहतः किल सर्वरोगान् ।

पादप्रधाधनजले मम मूर्धिनपातं, किं दोषशोषणविधौ न समर्थमस्तु ॥ ६९२ ॥

भाषा-मल निपात पशीं पवन, रजकण अंग लगाय । रोग सकल क्षणमें हरे, जजूं साधु अथ जग्य ॥

ॐ ह्रीं विजोपयिक्रुद्धिप्राप्तेभ्यो अथ निर्वपामीति स्वाहा । (२२३)

प्रत्यंगदन्तनखकेशमलादिरस्य, सर्वो हि तन्मिलितवायुरपि ज्वरादि ।

काष्मापतानचमिशूलभंगदराणां, नाशाय ते हि सविकेन नरेण पूज्याः ॥ ६९३ ॥

भाषा-तन नख केश मलादि पट्टु, अंग लगी पथनादि । हरे सृगी शूलादि बहुत, जजूं साधु भववादि ॥

ॐ ह्रीं सर्वौषधिक्रुद्धिप्राप्तेभ्यो अथ निर्वपामीति स्वाहा । (२३४)

येषां विषाक्तभशनं मुखपद्मयातं, स्यान्निर्विषं खलु तदंहिधरापि येन ।

सृष्टा सुधा ष्मति जन्मजरासृत्युध्वंसो भवेत्किञ्चु पद्माश्रयणे न तेषाम् ॥ ६९४ ॥

भाषा-विष मिश्रित आहार भी, जहू निर्विष होजाय । चरण धरें सू अमृती, जजूं साधु दुःख जाय ॥

ॐ ह्रीं आरुगविषक्रुद्धिप्राप्तेभ्यो अथ निर्वपामीति स्वाहा । (२३५)

येषां सुदूरत्पि दृष्टिसुधानिपातो, यस्योपरिस्खलति तस्य विषं सुतीव्रं ।

अप्याशु नाशमयते नयनाविषारते, कुर्वत्वनुग्रहमभी कृतुमागभाजः ॥ ६९५ ॥

भाषा-पङ्कत दृष्टि जिनकी जहां, सर्वहिं विष टल जाय । आत्म रमी शुचि संयमी, पूजूं ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं दृष्ट्यविषक्रुद्धिप्राप्तेभ्योऽर्थं निर्वपामीति स्वाहा । (२३६)

ये धं ब्रुवन्ति यतयोऽकूपया मिश्रस्व, सद्यो मृतिर्भवति तस्य च शक्तिभावात् ।

येषां कदापि न हि रोषजनिर्घटेत, व्यक्ता तथापि यजतास्यविषान् सुनीद्रान् ॥ ६९६ ॥

भाषा-मरण होय तत्काल यदि, कहें साधु मर जाव ।

तदपि क्रोध करते नहीं, पूजूं बल वरशाव ॥

ॐ ह्रीं आरुगविषक्रुद्धिप्राप्तेभ्यो निर्वपामीति स्वाहा । (२३७)

येषामशातनिचयः स्वयमेव नष्टोऽन्येषां शिषोपचयनात्सुखमावदानाः ।

ते निग्रहाक्तमनसो यदि सम्भवेयुर्दृष्टयश्च हंतुमनिशं प्रभवो यजे तान् ॥ ६९७ ॥
 भाषा—दृष्टि क्रूर देखें यदी, तुर्तं काल वश थाय । निज पर सुखकारी यती, पूज्जं कृत्कि धराय ॥

ॐ ह्रीं दृष्टिविषकृद्धिप्राप्तेभ्योऽथ निर्धपामीति स्वाहा । (२३८)
 क्षीराश्रवद्धिसुनिर्धर्यपदांबुजातद्वंद्वंश्रयाद् विरसभोजनमप्युदश्वित् ।
 हस्तापितं भवति दुग्धरसाक्तवर्णस्याब्दं तदर्चनगुणामृतपानपुष्टाः ॥ ६९८ ॥

भाषा—निरस भोजन कर धरे, क्षीर समान बनाय । क्षीरस्त्रावी ऋद्धि धरे, जज्जूं साशु हरषाय ॥

ॐ ह्रीं क्षीरश्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽथ निर्धपामीति स्वाहा । (२३९)
 येषां वचांसि बहुलातिजुषा नराणां, दुःखप्रधाततयापि च पाणिसंस्था ।
 सुक्तिर्मधुस्वदनश्चत् परिणाम्बकीर्योक्षानर्चयामि मधुसंश्रविणो सुनीद्वान् ॥ ६९९ ॥

भाषा—वचन जास पीडा हरे, बहु भोजन मधुराय । मधुश्रावी वर ऋद्धि धरे, जज्जूं साशु उमगाय ॥

ॐ ह्रीं मधुश्राविकृद्धप्राप्तेभ्योऽथ निर्धपामीति स्वाहा । (२४०)
 रूक्षान्नमर्धिमथो करयोरुतु येषां, सर्पिःस्ववीर्यरसपाकथदाविभ्राति ।
 ते सर्पिराश्रवणिण उत्तमशक्तिभाजः पापाश्रवममथनं रचयन्तु पुंसाम् ॥ ७०० ॥

भाषा—रूक्ष अन्न करलें धरे, घृत्न रस पूरण थाय । घृतश्रावी वर ऋद्धि धर, जज्जूं साशु सुख पाय ॥

ॐ ह्रीं घृतश्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्धपामीति स्वाहा । (२४१)
 पीथूषमाश्रयति यत्करयोर्धुतं सद्, रुक्षं तथाक्कदुकमम्लतरं कुम्भोजयं ।
 येषां वचोऽप्यमृतवत् अवसोर्निर्धत्तं, संतर्पयत्यसुभृतासपि तान् यजामि ॥ ७०१ ॥

भाषा—रूक्ष कदुक भोजन धरे, अमृत स्रष्ट होजाय, अमृत सम बच तुसि कर, जज्जूं साशु भय जाय ॥

ॐ ह्रीं अमृतश्राविकृद्धप्राप्तेभ्यो अर्धं निर्धपामीति स्वाहा । (२४२)
 यद्दत्तशेषमशनं यदि चक्रवर्तिसेनाऽपि भोजयति सा खलु तुसिमिति ।
 तेऽक्षीणशक्तिललिता मुनयो हमाध्वजाता ममाशु वसुकर्महरा भवन्तु ॥ ७०२ ॥

भाषा—दत्त साशु भोजन बचे, चक्री कटक जिमाय । तवपि क्षीण होवे नहीं, जज्जूं साशु हरषाय ॥

ॐ ह्रीं अक्षीणमहानसद्विप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४३)

यत्रोपदेशमरसि प्रसरच्युतेऽपि, तिर्यग्भ्रुव्यविबुधाः क्षतकोटिसंहरणः ।

आगत्य तत्र निवसेयुरवाधक्षानास्तिष्ठन्ति, तान्ब्रुनिवरानहसर्धयसि ॥ ७०६ ॥

भाषा-सकुड़े थानक्रमें यती, फाते वृष उपदेश । बैठे कोटिक नर पशु, जजूं लाशु परसैय ॥

ॐ ह्रीं अक्षीणमहालयक्रुद्धिनारकेभ्यो अघ निर्वपामीति स्वाहा । (२४४)

इत्यं सत्तपसः प्रआवजनिताः सिद्धशृणिसम्पत्तयो, येषां ज्ञानशुधाप्रलीढहृदयाः संसारहेतुच्युताः ।

रोहिण्यादिविधाविदोदितचक्रकारेषु संनिःपुशानो वांछन्ति कदापि तरुणविधिं तानाश्रये सन्तुनीन् ॥ ७०४ ॥

भाषा-या प्रआण क्रुद्धीनको, पवन तप परभाव । चाहे व हू राखत नहीं, जजूं लाशु धर भाव ॥

ॐ ह्रीं मरुत्कृद्धमथनमर्वमुनिभ्यः पूर्णाय निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्रैष चतुर्विंशतितीर्थेणां चतुर्दशशतं मतं । स्रष्ट्रिपंचाशता युक्त गणिनां प्रथमः ॥ ७०५ ॥

भाषा-दोहा-चौदासं त्रेपल सुनी, गर्णा तीर्थ चौदीस । जजूं द्रव्य काठों लिये, भाव नाप जिज शीस ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थेशाग्निमसमारतिरत्रिपंचाश्चतुर्दशशतगणश्रुतिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४५)

सहस्रेवनिधिद्वयप्रखद्यार्कान्मुनं श्वरान् । सप्रसंवेश्वरांस्तीर्थक्षुत्सवानिगरान्वयजे ॥ ७०६ ॥

भाषा-अहतालीस हजार श्वर, उन्निस लक्ष प्रआण । तीर्थकर चौबीस यति, संघ यशु यति प्यान ॥

ॐ ह्रीं वतमानचतुर्विंशतितीर्थकरमासंस्थायि एकोनत्रिंशच्छष्टचत्वारिंशत्सप्तमिमिहमुनीन्द्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति ० (२१७)

इत एतद् नौवे वलयकी पूजा करके एक नारियल लष वलयमें या मंडपके किनारे रखे ।

अत्र चार कोनेमें स्थापित जिजप्रतिमा, मंदिर, शाल व जिनधर्मकी पूजा करनी ।

अकृत्रिमाः श्रीजिनमूचयो नव, संपंचविद्याः उच्छुकोटयस्तथा ।

लक्षास्त्रिपंचामितास्त्रिसुणाः कुरुणाः, सहस्राणि शतं नवानां ॥ ७०७ ॥

भाषा-दोहा-नौसै पचिस कोटि लल, त्रेपल अट्टाबीस । सहस्र जनकर धावता, बिंश प्रकृत नम शीस ॥

ॐ ह्रीं नवशतपंचविंशतिकोटिपंचाश्छष्टसप्तत्रिंशत्सप्तमिहमुनीन्द्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति ० (२१७)

द्विहीनपंचाशदुपात्तसंख्यकाः, प्रणम्य ताः पूजनया महामयहं ।

अष्टौ कोट्यस्तथा लक्षाः षट्पंचाशमितास्तथा, सहस्रं सप्तशततेरे काशीतिश्वतुःशतं ॥ ७०८ ॥

एतसंख्यानं जिनैन्द्राणामकुत्रिमजिनालयान्, अत्राहुय ममाराध्य पूजयाम्यहसवरे ॥ ७०९ ॥
 भाषा-दोहा-आठ कोड़ लख छपने, सत्तानवे हजार । चारि शतक हक अमां जिन, चैत्य अकृत भज सार ॥
 ॐ ह्रीं अष्टकोटशतपचाष्टल्लक्षमनवतिमहस्रचतुःशतएकामीतिसंख्याकृत्रियजिनालयेभ्योऽथ निर्वाणोति स्वाहा ।
 यो मिथ्यात्वमतंगेषु तरुणक्षुन्नुन्नसिहायते, एकांनतपतापितेषु समस्तपीयूषसंघायते ।
 श्वश्राधप्रहिसम्पत्तसु अक्षयं हस्नाथलभ्यायते, स्याद्वादध्वजस्रगमं तमभितः सुश्रुजणसो ययं ॥ ७१० ॥
 भाषा-चौपाई-जय मिथ्यात्व नगणको सिंहा, एक पक्ष जल धरको मेहा ।

नरक कूपते रक्षक जाना, भज जिन आगम तत्त्व खजाना ॥

ॐ ह्रीं स्याद्द्वंद्वं किलजिनागमाऽर्धं निर्वाणोति स्वाहा । (२४९)

जिनैन्द्रोक्तं धर्मं सुदशयुतभेदं त्रिचिधया, स्थितं सम्यक्प्रब्रजयलतिकथाऽपि द्विपिबया ।
 प्रगीत सागारेतरचरणतो ह्यकसनधं, दयारूपं बंधे मखसुचि समास्थापितस्विस ॥ ७११ ॥
 भाषा-सुजंगमयाण छन्द-जिनैन्द्रोक्त धर्मं दयाभाव रूपा, यही द्वैविधा संयधं है अनूपा ।

यही ब्रजय मय क्षमा आदि दशवा, यही स्वातुमय पूजिये ह्वय अठवा ॥
 ॐ ह्रीं दशलक्षणोत्तमादित्रिकक्षणसम्यक्दर्शनज्ञानचारिः रूप तथा मुनिगृहस्थाचारभेदेन द्विद्विर तथा द्वाहात्वेनैक
 रूपजिनवर्माऽय निर्वाणोति स्वाहा ।

यागसण्डलसुदुश्रुता जिनाः सिद्धवीतलक्षणाः श्रुतानि च ।

चैत्यचैतद्गृहधर्मस्रगमं संघजामि सुविशुद्धिपूर्तये ॥ ७१२ ॥

भाषा-दोहा-अहंसिद्धाचार्य गुरु, साधु जिनागम धर्म । चैत्य चैत्य ग्रह देव नव, गज सण्डल कर सम ॥

ॐ ह्रीं धर्मयागमण्डलदेवताभ्यः पूर्णार्धम् । चारो कोनोपर चार नारियल चढावे ।

शांतिः पुष्टिरनाकुलत्वं सुदितं आजिबुनाविष्कृतः, संसाराणीयदुःखदाचशसनं निःश्रेयसोद्भूतिता ।
 सौरालयं मुनिवर्षपादव्रिचस्याप्रकसो नित्यशो, भूयादभ्रशराक्षिनायकमहापूजाप्रभासत्सम ॥ ७१३ ॥
 भाषा अडिछ-सर्व विघ्न क्षय जाय शांति पाढ़े सही, अब्ध पुष्टना लहें क्षोभ उपजे नहीं ।

पञ्च कल्याणक होंय सबहि मङ्गल करा, जासे भवबाध पार लेय शिवधर जिरा ॥

इथाशीवदः-पुष्पांजलि क्षिपेत ।

फिर—आचार्य भक्ति, अर्द्धत भक्ति, चिह्नभक्ति, श्रुतभक्ति, चारित्र्यभक्ति पढ़े जो अन्तमें दी हुई है ।

पश्चात् शांतिपाठ विघर्जन करके यागमण्डलकी पूजा समाप्त करे । जबसे यह मण्डल पूजा शुरू हो तबसे पूर्ण होने तक सब मरुमारियोंको एकत्र हो सुनना चाहिये । जिसको कोई प्रकारकी बाधा मेटनी हो वह शांतिसे जावे, टिकट द्वारा दे देवे, यदि लौटकर आना हो तो एक दूधरे प्रकारका टिकट रखना जावे जो छुट्टीका हो वो दे दिया जावे । जब यह लौटे फिर वह टिकट दे दिया जावे । मण्डल पूर्ण होनेपर सबके टिकट ले लिये जावे । यही क्रम हर एक दिन मण्डलके लिये हो । अब मण्डप चारों तरफसे बंद कर दिया जावे वह वेदीके आगे जो दो चबूतरे हैं वहां तीनों तरफ परदा रहे व पहले चबूतरेके आगे अलग परदा रहे । अब सब परदा बंद कर दिये जावे ।

तीसरा अध्याय ।

श्रीरामकृत्याण्युच्छ ।

यागमण्डलकी पूजा दिनमें समाप्त हो जानेपर यदि तीधरे पहर समय हो तब तो बंध्यासे पहले नीचेकी किरा की जावे । यदि दिनमें समय न हो तो रात्रिकी किरा की जावे ।

(१) इन्द्रकी भवर्गपुरीकी सभा व कुबेरकी आज्ञा—वेदीके आगे जो दो चबूतरे हैं, एकपर यागमण्डल है दूसरा खाली है । यागमण्डल प्रतिष्ठा होने तक रहने दिया जावे । पहले चबूतरेके आगे परदा डालकर दूधरेपर परदेके भीतर पहले सभा लगाई जावे । सोषर्म इन्द्र व इन्द्राणी बिहारासनपर बैठे, कुछ देवता इधर तबरा बैठें, सामने उपदेशी भजन गाजे बाजेके साथ हो रहे हों ऐसा सामान रचकर मण्डपमें टिकटोंके द्वारा नगरी एकत्र हो तब परदा उठाया जावे । परदा लठनेके पहले सूचक पाश सबको यह सूचना करे— इन्द्र अपनी सभामें बैठकर श्री ऋषभदेव तीर्थंकरका जन्म होगा ऐसा स्मरण करते हैं और कुबेरको आज्ञा देते हैं कि वह अयोध्या-नगरीकी रचना करे तथा राजाके आंगनमें रत्नवृष्टि करे तथा कुमारिका देवियोंको आज्ञा करे कि वे माताका गर्भशोषण करें ।

परदा यकायक उठे तब भजन हो रहे हों । कुछ देर भजन होकर इन्द्र—इन्द्राणी बिहारासनसे उठकर खड़े हों तब सभा निवासी और देव भी खड़े हों और नीचे प्रकार श्री जिनैन्द्रकी स्तुति सब मिलाकर साथ जोड़कर करें, भजन गाना बंद हो । यदि बाजेके साथ स्तुति पढ़ी जा सके तो वैसा किया जावे अन्यथा यो ही पढ़ी जाय पर स्पष्ट सुदृष्ट पढ़ी जाय । आचार्य पढ़नेमें मदद दें ।

छन्द त्रिभंगो ।

जय जय जिन स्वामी अन्तर्यामी, परमात्म सन दोष हरे । निज ज्ञान प्रकाशे भ्रमरभ नाशे, सुदातय विभ्राज करे ॥
तुम अनुभव सागर अमृत गागर, जो मरकर निज कण्ठ धरे । सो मुख निज पावे क्षीय मिटावे, कर्मबन्धका नाश करे ॥

चौपाई ।

सार सं०

जय जय मोह महात्म मारी, नाशन तुम मूर्ख अविकारी । जय जय मिथ्यातम निश्चिनाशी, अशि अविकार महान प्रकाशी ॥
 जय जय भव्य अमर हुल्लासी, चरणकमल शम गन्ध सुवासी । जय जय श्रान्ति भाव प्रगटावन, धर्म सरोवर शमत्रल धारण ॥
 जय जय कर्म महागिरि चूरण, तुम्हीं वज्र अद्भुत बल पूरण । अय जय चाह दाह प्रशमावन, तुम हि मेवत्रल सुन्दर पावन ॥
 जय जय काम अशु सिरमावन, ब्रह्मवर्ष असिधार शकावन । जय जय क्रीव पिशाच विनाशन, क्षमा वज्रवर इन्द्र प्रकाशन ॥
 जय जय मान नाग क्षयकारी, सिंह प्रबल मार्दव गुणचारी, जय जय माया लता उखाड़न, आर्जन ब्रह्म चार अति पावन ॥
 जय जय लोम कालिगाटारन, शीचमृत शुचि गुणविस्तारन । जय जय अविरति पन्थ हटावन, संयम संशुक्र अति पावन ॥
 जय जय योग चलन थिरकारी, शुक्र ध्याम दृढ़ भित्ति करारी । हे जिननाथ पाप हम टालो, भक्ति आपनी देय सम्हालो ॥
 भवसागरसे नाथ उबारो, कर्म आसन छिद्र निवारो । सुखसागरमें नाव डुगाओ, समता मल विकार हटाओ ॥

रुति पढ़कर सब बैठ जावे । कुछ मिनट पीछे इन्द्र आज्ञा करे—

वनद कुवेर—(ऐसा कहते ही सभामें बठा कुवेर हाथ जोड़ खड़ा होजाता है) तुम्हें सुखद बात सुनाता हूँ । इस बातके कहनेसे ही पुण्य कमाता हूँ ।

कुछ काल पीछे चर्वायचिद्धिका वज्रनाभि अहमिन्द्र चयेगा और नाभिराय मरुदेवीके पवित्र गर्भमें अवतरेगा । तुम शीघ्र अयोध्या नगरकी रचना करके शोभा करो, रमणीक मनोहर नेत्रप्रिय रत्नोंकी आभा करो, सुन्दर अद्वितीय राज्य महल बनाओ ।

नाभिराजा मरुदेवीको पवित्र जलसे स्नान कराओ । परम पुनीत बलाभूषणोंसे सज्जिन करो और मनोहर सिंहासनपर बिठा लोकके सर्व आसनको लज्जिन करो । कुवेर ! श्री ऋषभनाथ प्रथम तीर्थंकरका उदय होगा । जगतका मोह मिथ्यात्व अन्धकार सब क्षय होगा । छ माघ पूर्वसे नौ माघ गभे तक रत्नवृष्टि करो । राजाका महल मनोज्ञ रत्नोंकी वर्षासे पूर्ण करो । कुमारिका देवियोंको आज्ञा करो कि—

ये माताकी सेवामें आएँ, गर्भकी शोचना कर पुण्य कमाएँ ।

कुवेर सुनकर आनंदित होता है और उत्तर देता है—“धन्य ! धन्य ! महाराज ! जगतका पुण्योदय हुआ है जो तीर्थंकरका जन्म होनेवाला है । इस बन्धादको जानकर जो आनन्द हुआ है वह वचन अगोचर है । कृपानायने जो आज्ञा की है उसे बना जाऊँगा । तीर्थंकरके माता-पिताकी सेवा करके पुण्य कमाऊँगा । महाराज, आज मेरा जन्म धन्य हुआ जो मुझे यह परम कल्याणमय कार्य कर-नेका सौभाग्य प्राप्त हुआ । तब इन्द्र-इन्द्राणीके विधाय अन्य सब सभके देव उठकर यह छन्द मिलकर पढ़ते हैं—

गीता छन्द—सम धन्य सुरका आज ही, सन्वाद सुखर हम सुना । श्री तीर्थंकरका जन्म होगा, पुण्य हो यासे बना ॥
 भवि जीवन शिवकी राह पवेंगे मिटा मिथ्यातको । हम भी पियें अमृत महा, जिन तराका भव वातको ॥

अब परदा गिर जावे ।

(२) नगर, रामहलकी रचना, माता पिताकी भक्ति व रत्नवृष्टि—फिर परदेके भीतर जो मूठ वेदीकी दाहिनी ओर वेदी है वशा राजमहलकी रचना दर्शनीय यथायोग्य कारनी चाहिये । दूबरे चबूतरे पर राजा रानीकी समा बनानी चाहिये । कुछ लोग समा-सद बैठे हों, सामने भजन उमदेशी होता हो । ऊपरसे रत्नवृष्टि करनेका प्रबन्ध ऐसा किया जावि कि मडामका कुछ हिरना खोल दिया जावे, वहाँ बाघपर दो देव दूर दूर बैठ रत्नवृष्टि करें या ऊपरका भाग न खुल सके तो एक मजबूत बाघ या बल्ली ऐसी बन्धी हो जिसपर दो इन्द्र या देव चढ़कर बैठ जावें और रत्नवृष्टि करें । जिस तरह हो आकाशसे रत्नवृष्टि होनेका प्रबन्ध किया जावे ।

रत्नवृष्टियें—कुछ पत्र, कुछ नोलम, कुछ लाख, कुछ पुखराज तथा बहूनसे चांशी सोनेके बने तारे खितारे तथा फूठ इनने भेड़े जावें कि दशकोंको दिखे कि रत्नवृष्टि देवगण का रहे हैं । पुग भी मिठा सकते हैं । माता-पिता बैठे हों, सामने भजन सुन रहे हो ऐसी स्थितिमें परदा लठे । परदा लठनेके पहले सूचक पात्र यह बना दें कि श्री नाभिराज और मरुदेशीके राजमहलमें रत्नवृष्टि होगी तथा देविया गर्भशोधनके लिये पधारंगी । परदा उठते ही कुछ ही देर बाद आचार्य यह मन्त्र पढ़े—

“ॐ ही वनाधितये अर्हत्तानि नैवे रत्नवृष्टि मुन्ननु मुन्ननु स्रवाह ।” ऐशान्तोन वार पढ़े । पढ़नेका समाप्त होते ही ऊपरसे रत्नवृष्टि हो तत्र षष्ठ दर्शकगण जय जय शब्द कहे और मण्डपके बाहर गम्भीर बाजे बजे । धारे २ दो तौन मिनट तक वृष्टि होनी चाहिये ।

फिर कुवेर कुछ देवोंके बाध राज-समामें आवे, साथमें दो थाल लवे, एकमें बल रमणीक हों, एकमें आभूषण हों ।

(नोट—बल सदा शुद्ध देशी यथासम्भव सायके बने रंभोन गोटे आदिसे बजाना हों)—विनय कर्ता हुआ आकर उन दोनो थालोंको सामने टेबुलपर रखकर नत मस्तक हो हाथ जोड़ स्तुति पढ़े—

पद्मरी छन्द

जय नाभिराय छलकर महाम, चौरस गनु मनुगोंमें प्रथाम । जब करवावृत्त मय नष्ट थाय, तत्र नरनारी तुम पास आय ॥
कर दीन वचन सुखमें उवाह, जीवें कैसे हम है लाचार । तत्र खानपान विधि सब बाधाय, तिरका जीवन जासौ टिकाय ॥
जय धन्य धन्य स्वामी दगाल, तुम प्रना रक्ष मय कर निहाल । तुम पुग रानी खारं जान, हम कर्ता पूजा नुन महामान ॥
जय देवी मरुदेशी लडान, तुम जगत पूज्य हो नील थान । तुम सुन्दर पुणने सोभान, तुम मम नहि माता जान जान ॥
तुमसे जगका उदार मान, आए तुरे टिप कान मान । यह भेद इन्द्र भेरी आर कोजे कबूठ हो जान चार ॥

फिर मस्तक जमा नमन करे । राजा बैठनेकी आज्ञा करे, उन थालोंको कोई मुनहा धोर ले जावें पश्चत् १०-१२ मई । गरीब दशामें राजसमामें आवे और लेवे—

धन्य धन्य प्रजानाथ । आपके दर्शनसे हम हुए सनाथ ॥

हम निर्धन आपकी शरण आये हैं। आपसे आशाकी पूर्ति जान आपसे मन लगाए हैं। आर दिनोंके क्लेश निवारक हैं, आप अशरणोंको शरण धारक हैं। ऐसा कह मत्तक नमाका एक तरफ खड़े हो जात्रे। तब नाभिराय एक मुवाहवकी आज्ञा करें। इन धाय-कोंको तुम करो, इन रत्नोंको जिन्दे घनदने बरबाया है इनको देकर इनकी आशा पूरो करो, ये बड़ी आश लगा कर आए हैं। इनको निर्धनसे घनवान करो, अपने समान करो, रंग दे इनका सम्मान करो। तब दो मुवाहव उठते हैं। बिलखे हुए रत्नोंको बटाकर उनको वाट देते हैं। वे उनको अपनी झोलीमें छेते हुए कहते है—

पड़री छन्द-जय हो जय हो नाभिराज, हम दीन किये धनवान आज।

तुम धन्य धन्य दानी विशाल, तुम खम जगमें नहिं कोई कृपाल ॥

ऐसा कह जय कहते हुए लौट जाते है। फिर राजा नामीराय और रानी मरुदेवी भीतर चले जाते हैं, बधा लगी रहनी है। फिर आठ कुमारिका देविधे (कन्याए) कुम कलश प्राशुक जलसे भरा, नारियलसे ढका, पुष्पमालासे सुशोभित मत्तकपर या दोनों हाथोंपर लिये हुई आती है, और सामने खड़ी हाजाती है। कुबेर उठते है और कहते है—इन्द्रकी आज्ञा है—हे कुमारिकादेवियों! श्री मरुदेवीके गर्भकी शोचना करो, माता मरुदेवी जगतजननी हैं उनकी सेवा करो, उनके मनको प्रबन्ध रक्खा, उनको आज्ञामें अपना चित्त लवलीन रक्खो।

(१) तब आचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढ़ कर कन्याको पूर्व दिशामें स्थापित करे। उधर पुष्प क्षेपण करे “ॐ महति महसा श्रीदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं नित्य स्व सं ह्रीं इीं स्वा ला ज्ञो तीर्थकारबत्रिं स्नापय २ गर्भशुद्धि कुरु व म ह स त प श्रीदेव्यै स्वाहा।”

(२) फिर दूररी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ आग्नेयदिशामें स्थापित करे। उधर पुष्प क्षेपण करे। “ॐ महति महसा ही देवी महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नै स्व सं ह्रीं इीं स्वा ला ज्ञो तीर्थकार बत्रिं स्नापय स्नापय गर्भशुद्धि कुरु २ व म ह सं प हीदेव्यै स्वाहा।”

(३) फिर तीथरी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प क्षेपण कर दक्षिणदिशामें स्थापित करे। “ॐ महति महसा श्रुतिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नित्यै स्व सं ह्रीं इीं स्वा ला ज्ञो तीर्थकारबत्रिं स्नापय २ गर्भशुद्धि कुरु २ व म ह सं तं प श्रुति देव्यै स्वाहा।

(४) फिर चौथी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प क्षेपण कर नैऋत्य दिशामें स्थापित करे। “ॐ महति महसा कीर्तिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नित्यै स्व सं ह्रीं इीं स्वा ला ज्ञो तीर्थकारबत्रिं स्नापय २ गर्भशुद्धि कुरु २ व म ह स त प कीर्तिदेव्यै स्वाहा।

(५) फिर पाचमी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प क्षेपण कर पश्चिमदिशामें स्थापित करे। “ॐ महति महसा बुद्धिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं बुद्धि नित्यै स्व सं ह्रीं इीं स्वां ला ज्ञो तीर्थकारबत्रिं स्नापय २ गर्भशुद्धि कुरु वं म ह सं तं प बुद्धिदेव्यै स्वाहा।”

(६) फिर छठी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ वायव्यदिशामें पुष्पक्षेपण स्थापित करे। “ॐ महति महसा लक्ष्मीदेवी महादेवि ऐं

हीं श्री हैं लक्ष्मी नि ये स्वं सं क्लीं इत्रीं स्वां लां झ्रौं तीर्थं करबत्रित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं सं तं पं लक्ष्मी देव्यै स्वाहा ।”

(७) फिर घातमी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुण क्षेत्रण कर उत्तरदिशामें स्थापिन करे । “ॐ महति महता शांतिदेवि महादेवि ऐं हीं श्रीं हे शांति नित्ये स्वं सं क्लीं इत्रीं स्वां लां झ्रौं तीर्थं करबत्रित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु २ वं मं हं सं तं पं शांति देव्यै स्वाहा ।”

(८) फिर आठमी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ उषपर पुणक्षेपण कर ईशानदिशामें स्थापन करे । “ॐ महति महतां पुष्टिदेवि महादेवि ऐं हीं श्रीं हे पुष्टि नित्ये स्वं सं क्लीं इत्रीं स्वां लां झ्रौं तीर्थं करबत्रित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु २ वं मं हं सं तं पं पुष्टि देव्यै स्वाहा ।”

इप्रतरह श्री, ही, वृत्ति, कीर्ति, बुद्धि, शांति और पुष्टि इन आठ दिक् कुमारी देवियोंको आठ दिशामें स्थापिन करे फिर आचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढे और उन सबर पुणक्षेपण कर कहे “ॐ दिक्कुनायौ जिनमातामुत्पेस्य परिचरतपरिचरत स्वाहा ।”

दोहा—श्री जिनम्नाता सेव नित, करत रहो सुख पाय । पुण्यलाभ हो जाससे, पातक जाय पलाय ।

फिर कुन्नेरादि चले जावे, मात्र देवियां खड़ी रह जावे, परदा पड़ जावे ।

(३) पांच भिनिके भीतर उसी दूबरे चबूतरेपर ऐसी रचना करे कि एक लेटने लायक बिहासन सुन्दर रफेद बल्लोंसे रज्जित बिछावे । एक ऊची टेबुलपर आठ मगल द्रव्य स्थापिन करे तथा एक मंजूषा स्फटिकमणिकी व काचकी इतनी बड़ी बनवि जिबमें बह प्रतिमा जिबकी प्रतिष्ठाकी विधि करनी हो सीधी आसके बैठे या खडे । अब जिन माता उभ्र बिहासनपर बैठी हो । इन आठ कन्याओंके कलश दूधरी टेबुलपर रख दिये जावे । परदेके भीतर माताको ये देवियां किधी बडे घालमें बिठाकर थोडे कुम्भके जलसे स्नान करावें, नए शुद्ध वस्त्र पहनावें । कुछ आभूषण रहने दिया जावे, माता बल्लसे रज्जकर बिहासनपर बैठी हो, मंजूषा पाबमें रक्खी हो । इन देवियोंमेंसे कोई हाथोंमें कडे पहनाती हो, कोई गलेमें हार पहनानेको हार लिये खड़ी हो, कोई तिलक देनेको चन्दन लिये खड़ी हो, एक देवीके हाथमें दर्पण हो, एक पुष्पकी माला लिये हो, एक अतरदान लिये खड़ी हो, एकके हाथमें सुन्दर झरी जलसे भरी एक घालमें रक्खी हो, एकके हाथमें पंखा हो । इप्र तरह देविया कायदेसे खड़ी हों, तब परदा उठे । सब लोग कहें—श्री जिनमाताकी जय, उषर वाजे बजते हों, इषर देवी खडे पहनाकर गलेमें हार डाले, पुष्पमाला डाले, तिलक करे, अतर सुँघावें, दर्पण दिखावे, माता हाथमें अतर लेकर बल्लोंमें लगावे । फिर झारीसे घालमें ही हाथ घोवे । दो देवियां उष मंजूषाके भीतर चन्दनसे लेप करके एक घालमें रख कर घोवें फिर भीतर मध्यमें व सब ओर चन्दनसे बाधिया बनावे । फिर सब देविया खड़ी हो यह स्तुति पढ़े—

**छन्द—मात तोहि सेवके सुतृषिता हमें भई, रागद्वेष टार वीतराग बुद्धि परिणई ।
तू ही लोकमाहि श्रेष्ठ भार्या सुभाग है, इन्द्र तोरी भक्तिमें प्रवीण किये राग है ॥**

धन्य धन्य हस्त यह सफल भए सु आज हों, अङ्ग २ धन्य है कृतार्थ भए आज हों ।
धन्य धन्य देवि पुण्य आत्मा विशाल हो, पुत्रका सुलाभ हो सुधर्मका प्रचार हो ॥ इतनेमें परदा गिर जावे ।

(४) माता रातको यहीं घोवे, देवियां भी यहीं रहे, उनके आरामका भी यहीं प्रबन्ध हो । इप्र तरह आज दिन रातकी क्रिया समाप्त

की जावे । फिर यदि समय हो तो शमोपदेश दिया जावे । दूसरे दिन बड़े बड़ेसे गर्भ कल्याणककी विशेष विधि की जावे ।

(४) माताका स्वप्न देखना—रात्रिको आचार्य प्रतिष्ठायोग्य प्रतिमाओंकी जांच कर घेदीमें स्थापित करे । उनको स्वच्छ करके विराजमान करे तथा जिबकी प्रतिष्ठा विधि करनी हो उसके केशर चन्दनसे छेपकर मंजूषा (बंदूक)में विराजमान करे, शेषमें श्री केशर चंदन छेपे तथा हरएक बिम्बको बखसे ढक देवे, मंजूषाके ऊपर भी बख ढक देवे, प्रतिमाको मंजूषामें रखते हुए न चे लिखा श्लोक व मन्त्र पढ़े—

यो गंगां सुतरानपुष्पकृतभूपस्कारमिन्द्रासन, इवक्षुं प्रमदाकुलीकुनजगद्गर्भं प्रविश्योसमे
लभे नामतिरञ्जयन् रचिरिह प्राची परानुग्रह-ग्राहोषट्कृतिषड्वैतेस सुदृशां सोऽय जिनसन्मुदे ॥२८॥

ॐ णमोर्हते केवल्लिने परमयोगिने शुक्लध्यानान्निर्दिग्धकर्मन्वनाय सौभाग्य शान्ताय शरदाय अष्टादशदोषविभजिताय स्वाहा ।
फिर सर्व प्रतिमापर पुष्प क्षेपे ।

बड़े सूर्योदय पढ़ले मण्डपमें नरनारी टिकटोंसे एकत्र होते रहें तब मंगलीक बाजे मण्डपके बाहर बजें । इधर दूसरे खनूतरेपर शायपर जिनमाता छेटी रहे । सबके पास गोदके यहाँ प्रतिमाबद्धित मंजूषा रखी रहे जो अभी कपड़ेसे ढकी रहे । देवियां आठों अदेलीमें (सेवामें) बड़ी हों, मगळद्वय एक तरफ रखे हों तथा १६ श्मोंकी मूर्तियां या चित्र एक मेजपर जो कुछ नीचे हो सुन्दरतासे रखे जाय जिनको सब कोई देख सकें । बाजा कुछ देर बज चुके तब परदा उठाय जावे, उस समय वे देवियां नीचे भांति मंगळगीत पढ़ें—

गीताछन्द—अरहत सिद्धाचार्य पाठक साधु पद वन्दन करूं, निमल निजातम गुण मगन कर पाप ताप सब शमल करूं ।

अब रात्रि तम विपटा सकल ह्यां प्राप्त होत सुकाल है, मानु उदयाचलपे आया नभ किया सब लाल है ॥

पक्षी मनोहर छन्द बोलें गन्ध पवन चलाव है, चहुं ओर है भगवान सुधरन वृक्ष प्रफुलित पात है ।

बाजे बजें रमणीक साता गीत मंगल हो रहे, तजिये शयन उठ जगत् ध्यारी वीरती हस कर रहे ।

है समय सामायिक मनोहर ध्याम आतम कीजिये, है कर्म नाशक समय सुन्दर काण निज सुख लीजिये ।

इतने हीमें माता आलें मळती बैठ जाती है, मंजूषा पाठमें रखी है और बैठ ही वैसे स्तुति पढ़ती है—

* गीता—बन्दों परम आहन्त सिद्ध सु साधु समय गुण धरे, अधिकार परमातप निजातम सुख मनोहर संचरे ।

धन धन प्रभात प्रकाश पया जनो सभ्यकृता पणी, अब रात्रि तम मिथ्यात जों सन विवट मानु कला जगी ॥

इतना कह हाय जोड़ मस्तक झुकाकर नमन करे फिर कुछ देर ठहरकर कहे—

* यद्यपि जिनभर्मका प्रचार ऋषभदेवके ज्ञान होने बाद हुआ था, तथापि यहाँ प्रतिष्ठाका भाग घताना है इससे यथायोग्य कार्य ऋषभ-
देवके भित्तिसे दिखाना गया है ।

नीत—भैने देखे लसी सोलह सुपने, सोलह सुपने, भैने देखे सखी सोलह सुपने ॥ टेक ॥

शुद्ध सु गज ऐरावत देखो, मेघ समान सु गरज वने । द्वितीय छफेद वैल दढ़ देखा, उन्नत फन्धा शब्द भने ॥ भैने० ॥
 तीजे सिंह पचल शुभ देखा, कंधे लाल सुवर्ण वने । सिंहासम थित थपल लक्ष्मी देखी, माण सुंड षट न्यून सने ॥ भैने० ॥
 पाँचें फूल माल द्य भंजिय, अमर मणत गुणनाथ वने । छंटे मणि पूण लागण, अमृत धारवा जणत वने ॥ भैने० ॥
 ससम सूर्य निष्ठातम हारी, पूर्ण दिशासे उदाव ठने । पुष्पण फलक्ष दीप लल पू ण, फलपत्रसे टंकित वने ॥ भैने० ॥
 नीमें मीन युगल सर रमते, देखे चंचल भाव जने । दूवें अंश रमनशुभ सागर, अमृत कण्ठ ठने ॥ भैने० ॥
 सागर दर्पण सम निर्मल लख, उठव तरंगनि हंसव वने । पाण लिखसु सुवरणमय, विंशति वने ॥ भैने० ॥
 तेरम स्वर्ण विमान रतन मय, येन्नत सुर अनुगाण घने । चौदम साणसुवन थ उठता, वः कांति अपार जने ॥ भैने० ॥
 पन्द्रह रत्न-राशि श्रुति पूरण, दुख दरिद्र संसार एने । सोलह धूम रणित अश्रु शब्द, कर्णमंत्र जलजाप घने ॥ भैने० ॥
 सप्त बुधम सुवरणमय आयो, सुख प्रवेष्ट करवा अपने, ऐसे स्वप्न कवहि नहि देखे, अचरज होत हृदय अपने ॥ भैने० ॥

इतना जब पद चुके तब परदा गिर जाधि । तब जाब घण्टेकी छुट्टी हो जाधि ।

(५) निस्य पूजा होम—फिर आचार्य प इन्द्र आदि स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहनकर आर्वे, दूधरा चतूरा खाली होजाधि । वेदीमें रित्त मूल पूण्य प्रतिमाका अभिषेक पूजन व होम करे । प्रथम ही आचार्य तथा इन्द्र (वे दो व्यष्टय हों) व अन्य बैठकर अङ्गशुद्धि व ककलीकरण करें—जो पहले अध्ययमें कहे गए हैं इनमेंसे थोड़ी थिधि करे अर्थात् नं० (१) (२) (३) (४) व (६) इनसे स्नान कर घोती, दुपटा' मुकुट आदिकी शुद्धि करे । फिर अंगरक्षाके लिये नं० (१) अं णमो अरहंताण... से नं० (११) तक पढ़कर रक्षा करे—अर्थात् हाथोंकी मस्तकादिकी व पगोंकी रक्षा करे । फिर जो अभिषेककी विधि षष्ठेपमें यागमण्डलकी पूजामें कह चुके हैं उक्त तरह अभिषेक करके नित्य देव शाख गुरु पूजा व शिद्ध पूजा करे । फिर तीनों कुण्डोंमें दो दो इन्द्र बैठकर होम करे । १०८ आहुति नीचे लिखा मंत्र पढ़कर ढालें । “ॐ हाँ हाँ हूँ हूँ हः अ धि आ उ आ सर्वशक्तिगुरु श्याहा” फिर शांतिपाठ विवर्जन करे । इष्टको बच नरनारी देखें । फिर पर्दा दोनों चतूरोंपर व सर्व तरफसे पड़ जाधि ।

परदेके बाहर सूत्रक पात्र एक भित्तर लिये घूमता हुआ भजन गाता रहे जनतक तैयारी न हो । जब तैयारी होजाये तब यह कहे—जब राजा नाभिरायकी समा कगती है इसमें माता मरुदेवी आकर स्वप्नोंका फल पूछेगी जिबको श्री नाभिराय बतायेंगे । आपको और अपनी अर्द्धांगिनी तथा समानिवासी जनोको आनन्दित करेंगे ।

(६) राजाकी समामें स्वप्नोंका फल—दूधरे चतूरे पर राजा नाभि समापटो रहित बैठे हों, आगे एक उपदेशी भजन होरहा हो, इतनेमें परदा छे । भजन होचुके तब माता मरुदेवी आठ देवियोंके साथ वस्त्राभूषणसे अजित आधि । देवियोंके हाथोंमें

बढग आदि नामाप्रकारके सुन्दर शब्द हों। देवीको आते देखकर राजा कहे-प्रिय! आर्ये, विराजिये, अर्ध विहासनपर सुशोभित हूजिये, यह बसा आपके पधारनेसे प्रफुल्लित होरही है। रानी मरुदेवी बाईतरफ बैठकवि और नीचे खिले गीतमें वर्णन करें-

छन्द गीता ।

हे नाथ ! पिछली रातमें हम सुपन सोला देखिया, गज बैल सिंह सुदेवि कमला न्हवन कारतहि देखिया ॥
 ब्रय पुष्पमाल सु बन्द्र पूरण सूर्य सुषरण कलश दो, युग मीन सरवर कमल युग सागर सु सिंहासन भलो ॥
 रमणीक सुर्ग विमान उतारत नाग भवन सु आबतो, सुरतन राशि सुक्रांति पूरण अगनि धूम न पावतो ।
 तब अन्तमें एक वृषभ मेरे सुख प्रवेशा करत अथा । इनको सुफल सुहिये प्रभू सुश्र कीनपर करके क्या ॥

महाराज कुछ देर विचारते हैं और तब अन्धविज्ञानसे सब हाल जानकर इधरह कहते हैं-

गीता छन्द ।

गज देखनेसे देखि तेरे पुत्र उतम होयगा । बर वृषभका है फल यही वह जगत गुरु भी होयगा ॥ १ ॥
 बर सिंह दर्शनसे अपूरव शक्ति धारी हो यगा । पुष्पमालासे वह उतम तीर्थ करता होयगा ॥ २ ॥
 कमला न्हवनका फल यही सुरगिरि न्हवन सुरपति करें । अर पूर्ण शशिके देखनेसे जगत जन सब सुख करें ॥ ३ ॥
 बर धर्यसे वह हो प्रतापी कुंभ युगसे निधिपति । सर देखनेसे सुभग लक्षण धार होवे जिनपती ॥ ४ ॥
 युग मीन खेलत देखनेसे हे प्रिये चित धर सुनो । होवे सहा आनन्दमय वह पुत्र अनुपम गुण सनो ॥ ४ अ ॥
 सागर निरखते जगतका गुरु सर्वज्ञानी होयगा । बर सिंह आसन देखनेसे राज्य स्वाभी होयगा ॥ ५ ॥
 अर सुर विमान सुफल यही वह स्वर्गसे ब्य होयगा । नागेंद्र भवन विशालसे वह अर्धविज्ञानी होयगा ॥ ६ ॥
 बहुरत्न-राशि दिखावसे वह गुण खजाना होयगा । बर धूम रहित जु अग्निले वह कर्म ध्वंसक होयगा ॥ ७ ॥
 बर वृषभ मुख परवेशा फल श्री वृषभ तुम वपु अवतरे । हे देखि तू पुण्यातमा आनन्द मगल नित भरे ॥ ८ ॥

माताका मन इस फलका सुनकर प्रफुल्लित होगया तब सब देखिया मिल्कर जो भवतक विनयसे खड़ी थी मंगलगान करने लगी-

गीत छन्द धोदका-हम जिनराज जनम सुन पाये । हर्ष भयो नहीं अंग समाए ॥

धन्य नाथ तुम जगत पिता हो । धन्य मात तुम सुखदाता हो ॥

धन्य सक्रय यह परम सुहाबन । आज भए हम जन एब पावन ॥

आज जगतका भाग्य सुराया । वृषभनाथ सम्पाद सुनाया ॥

या युगके तीर्थंकर प्रथमा । प्रगट होगये तारण अधमां ॥

इस बन्दन कर सुख नशाबे । भव आनाप सफल प्रशासावे ॥

अन्य नाथ तुम वीन बधाला । करहु कृपा हम होथ निशाला ॥ अन्तमें परदा यह जावे । तत्र मूचक पात्र पादेके बाहर धित र वमाता हुआ कुछ गाता हुआ, कुछ देर पछे सूचित करे कि तीर्थंकरके गर्भमें आनेका बन्धाद जानकर इन्द्रादिक देव श्वम राजाके गृहमें जायेगे और भक्ति करके अपना जन्म सफल मनाएंगे ।

(७) इन्द्रोका आकर गर्भकल्पाणक करना—तब परदेके भीतर यह रचना की जाय । दूसरे चतुरेपर तीर्थंकरकी प्रतिमा जिष मंजूषामें है उसको जंचे रथानपर विराजमान करे, बल ऊपरसे निकाल देवे जिषसे प्रतिमा शीशेके भीतरसे दिख सके । पास ही एक चौकीपर प्रतिमाकी मंजूषासे कुछ ही नीचे माता बैठे हो तथा पास ही वित्त बैठे हो, देवियां विनय छदित खड़ी हो, मंगल द्रव्य आठों एक तरफ रखे हो और एक सण्डल २४ कोठोका सुन्दर एक छोटी चौकीपर मांडा जावे, वह प्रतिमाके आगे विराजमान किया जावे । कुछ बभासद भी कायदेसे बैठे हो, आगे उपदेशी भजन होते हो तब परदा उठाया जाय । तब इन्द्र इन्द्राणी व अनेक इन्द्र—बम्ह बाला बनाते हुए व नीचे लिखा मंगलगीत गाते हुए मंडपकी तीन प्रदक्षिणा देकर राजसभामें प्रवेश करें ।

गीत—जय तीर्थंकर जय जगतनाथ, अबतरे आज हम हैं खनाथ ।

धन भाग महारानी सुहाग, जो उर आए जिन सुरग त्याग ॥ १ ॥

इस भक्ति करन उभगे अपार, आए आनन्द धर राज्यद्वार ।

इस अंग सफल अपना करेंय, जिन मात पिता सेवा करेंय ॥ २ ॥

यह जगत ताल यह जगत मात, यह मंगलकारी जगचिह्यात ।

इनकी महिमा नहिं कही जाय, इन आत्म निश्चय मोक्ष पाय ॥ ३ ॥

जिनराज जगत उद्धार कार, त्रय जगत पूज्य अघ चूरकार ।

तिनके प्रगटावनहार नाथ, हम आए तुम घर नाय माय ॥ ४ ॥

ऐसा गीत गाते हुए राजसभामें आकर मात पिताको देखकर आनंदित हो मस्तक नत हो भूमिपर दण्डवत् कारते हैं और दो हाक बनाभूषणसे बलित हो जिनको देश प्राय कावे, उनको उन माता पिताके आगे एक टेबुल हो तबपर रख भेट कारते हुए नीचे लिखा गान पढ़ते हैं । यहाँपर इन्द्र नृत्य व गान कर सकते हैं ।

गान इन्द्रका—तुम देखे वरश सुख पाये नयना । सुख पाये नयना, सुख पाये नयना ॥ तुम ० ॥ टेक ॥

तुम जग ताता तुम जग माता, तुम बन्दनसे भव भय ना ॥ तुम ० ॥ १ ॥

तुम गृह तीर्थकर प्रभु आए, तुम देखे सोलह सुपना ॥ तुम० ॥ २ ॥
 तुम भव त्यागी मन वैरागी, समयकृष्टि शुचि वयना ॥ तुम० ॥ ३ ॥
 तुम सुत अतुपम ज्ञान विराजे, तीन ज्ञानधारी सुजना ॥ तुम० ॥ ४ ॥
 तुम सुत राज्य करै सुरनरपे, नीति निपुण दुःख उद्धरना ॥ तुम० ॥ ५ ॥
 तुम सुत साधु होय बन विशरे, तप साधत कर्मन हरना ॥ तुम० ॥ ६ ॥
 तुम सुत केवल ज्ञान प्रकाशे, जग मिथ्यातम सब हरना ॥ तुम० ॥ ७ ॥
 तुम सुत धर्म तत्त्व सब भाषे, भवि अनेक भवसे तरना ॥ तुम० ॥ ८ ॥
 कर्म बन्ध हर शिवपुर पढ़ेचे, फिर कबहू नहिं अवतरना ॥ तुम० ॥ ९ ॥
 इम सब भाज जन्म फल आनो, गर्भोत्पन्न कर अघ दहना ॥ तुम० ॥ १० ॥

फिर इन्द्र इन्द्राणी मिळकर खड़े हो मण्डककी पूजा करें, सब बैठ जावे। यहां २४ तीर्थकरोकी माताओंकी पूजाकरनी है—

प्रथम-स्तुति सहित स्थापना ।

वैशक्षायिष्णव्कुम्भिक्षुधिषां योस्मिन्नन्ननासभू-द्ये चेक्ष्वाकुकुरुप्रनाथहरियुग्ंधशाः पुरोवैधसा ।
 आधानाक्षिविधिप्रबन्धमहिषाः सृष्टास्तदुत्थार्थभृ-भर्तृस्वाभिकजीबिता सुकुलजा जैन्यो जयत्यंबिकाः ॥ १० ॥
 सृत्यादिप्रथहरिषदुद्धयद्युगचित्सत्कर्मणोआगम-द्रव्यो गोतमगोत्रभागभिजनो नेमिस्तथा सुव्रतः ।
 तद्वत्काश्यपगोत्रिणस्तदितरे णोकर्मनो आगम-द्रव्योद्येस्यसबन् स्वयं यदुदरेष्वंषाः प्रसीदंतु ताः ॥ ११ ॥
 मरुदेवीं धृषस्यंथा विजयासजितस्य च । सुषेणां संभयेन्नस्य सिद्धार्थी नंदनप्रभोः ॥ १२ ॥
 सुमंगलाहां सुमतेः सुसीमां पद्मरोचिषः । यलुंबगं सुपार्श्वस्य लक्ष्मणां चन्द्रलक्ष्मणः ॥ १३ ॥
 रामां क्षीपुपर्वतस्य सुनन्दां शीतलार्हतः । विष्णुधियं श्रेयसश्च वासुपुत्र्यसभोजयाम् ॥ १४ ॥
 सुशर्मलक्ष्मीं विमलापैतोऽभंगस्य सुव्रताम् । ऐरिणीं धर्मज्ञाथस्य कमलां कांत्यधीशिनः ॥ १५ ॥
 सुमित्रां कुंथुनाथस्य अरभर्तुः प्रभाबतीम् । लल्लेः पद्मावतीं वषां सुव्रतस्य सुनीशिनः ॥ १६ ॥
 धिनतां नमिनाथस्य शिवां भेमिजिनेशिनः । देवदत्तां च पार्श्वस्य वीरस्य प्रियकारिणीम् ॥ १७ ॥
 चतुर्धिशतिसय्येतः स्वधित्रीस्तीर्थकारिणाम् । स्थापयामीह तद्गर्भपवित्रिजगत्याः ॥ १८ ॥

माया-दीहा-श्री जिन चौबिस मात शुभ, तीर्थकर उपजाय कियो जगात करुपाण प्रह, पूजो ब्रह्म मंगाय ॥
 ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातरोऽत्रावतर २ संवीपद् आह्वानम् । वन विष्ट २ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम
 समिद्धिती मय २ षपद् सगि धिक्षणम् ।
 छन्द वाली-भरि गंगा-जल अविकारी, सुनि चित्त सप्त सुचिता धारी ।

जिन मात जजूं सुखदाई, जिन धर्म प्रभाव सहार्ह ॥
 ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातृभ्यो वलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 वसि केशर चन्दन लाऊं, अब ताप सकल प्रयासाऊं ।
 जिन मात जजूं सुखदाई, जिन धर्म प्रभाव सहार्ह ॥
 ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातृभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 शुभ अक्षत दीर्घ अखण्डे, तृष्णा पर्वत निज खण्डे ।
 जिन मात जजूं सुखदाई, जिन धर्म प्रभाव सहार्ह ॥
 ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातृभ्यो अर्धतं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुवराण मय पावन फूला, चित्त काम व्यथा निर्मूला ।
 जिन मात जजूं सुखदाई, जिन धर्म प्रभाव सहार्ह ॥
 ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातृभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ताजा पकवान बनाऊं, आसे शुभ रोग नशाऊं ।
 जिन मात जजूं सुखदाई, जिन धर्म प्रभाव सहार्ह ॥
 ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातृभ्यो चक्रं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दीपक रत्नन मय लाऊं, सब दर्शनमोह हटाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिन धर्म प्रभाव सहार्ह ॥
 ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातृभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 धूपायन धूप जलाऊं, कर्मनका वंश मिटाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिन धर्म प्रभाव सहार्ह ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल उत्तम उत्तम लार्क, शिष फल उद्देश बनाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुचि आठों द्रव्य मिलार्क, गुण गाकर मन हरषार्क । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गर्भकल्याणक तिथिका प्रत्येक अर्घं ।

गीताछन्द-सर्वार्थसिद्धि विमानसे जिन ऋषभ त्वय आए यहाँ, मरुदेवी माता गरम शोभै होय उत्सव शुभतहा ।

आषाढ यदि दुनिया दिना सब इन्द्र पूजे आयके, हमहूँ करै पूजा सुमाता गुण अपूरष ध्यायके ॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णा द्वितीयायां श्री वृषभनाथजिनेन्द्र गर्भधारिकाय याता मरुदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

दोहा-जेठ अमावस सार दिन, गर्भ आय अजितेश । विजया माता हम जेजे, भेटै सर्व कलेश ॥

ॐ ह्रीं जेठकृष्णामावास्यां श्री अजितजिनेन्द्रगर्भधारिकाय श्री विजयादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

संकाछन्द-फागुन असित सित अष्टमीको गर्भ आए नाथ, धन पुण्य मात सुसैनका संभव धरे सुख साथ ।

उपकार जगका जो भया सूर गुरु कथन थक जाय, हम तयायके शुभ अर्घ पूजे विघ्न सब टल जाय ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णाष्टम्यां श्री संभवतीर्थकरगर्भधारिकाय माता सुसैन्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

गाथाछन्द-गर्भस्थिति अभिनन्दा, बैसाख सित अष्टमी दिना सारा ।

सिद्धार्थो शुभ माता पूजूं चरण सुजान उपकारा ॥

ॐ ह्रीं बैसाख शुक्लाष्टम्यां श्री अभिनन्दननाथं श्री सिद्धार्थादेव्यै अथ निर्वपामीति स्वाहा (४)

सोरठा-श्रावण सित पख आप, आत मंगलः उर पखे । श्री सुमतीश जिनाय, पूजूं माता भावसों ॥

ॐ ह्रीं श्री श्रावण शुक्ला द्वितीयायां श्री सुमति जिनेन्द्रं गर्भे धारिकाय श्री भंगलादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

छन्द शिखरणी-बही पछी जानो सुभग महिना माघ सुदिना, सुसीमा आताके गर्भ तिष्ठै पक्ष सु जिना ।

जजों लैके अर्घं मात देवी द्वन्द चरणा, कटै जासे हमरे सकल कर्म लेहु शरणा ॥

ॐ ह्रीं श्री माघ कृष्ण पञ्चांशी पक्षप्रभु जिनेन्द्रं गर्भे धारिकाय श्री सुसीमादेव्यै अथ निर्वपामीति स्वाहा । (६)

छंद षोडश-भाद्र शुक्ल छठी तिथि जानी, गर्भ धरे पृथ्वी महारानी ।

श्री सुपार्श्व जिननाथ पधारे, जजूं मात दुख टाल हमारे ॥

ॐ ह्रीं भाद्र शुक्लाष्टम्यां श्री सुपार्श्व जिनेन्द्रं गर्भधारिकाय श्री पृथ्वीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)
छंद शिलरणी-सुभग चैतर महिना असित पखमें पांचम दिना, सुलखना साताने गर्भ धारे चन्द्र सु जिना ॥

जजों लेके अर्घं सात जिनके छुछ चरणा, कटै जासे हसरे सफल कर्म लेहु शरणा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण पंचम्यां श्री चन्द्रप्रभुजिनेन्द्रं गर्भ धारिकाय श्री सुलक्षणदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)
सोराठा-पुष्यदंत अगधान, सात रमाके अचतरे । फागुन नौमि महान, जजों सातके चरण जुग ॥

ॐ ह्रीं फागुनकृष्णवसम्यां पुष्यदंतजिनेन्द्रं गर्भ धारिकाय रमादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)
चाली-वदि चैत रानी छठ जानी, खीतल प्रभु उपजे ज्ञानी । नंदा साता हरखानी, पूजूं देवी उर आनी ॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्ण अष्टम्यां श्री खीतल जिनं गर्भ धारिकाय श्री मन्दादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)
चाली-वदी जेठ तनी छठि जानी, विष्णुश्री सात धखानी । श्रयांसनाथ उपजाए, पूजूं सांता गुण गाए ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्ण पष्टमां श्री श्रयांसनाथं गर्भ धारिकाय श्री विष्णुश्रीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)
चाली-आषाढ़ वही छठि गाई, श्री वासुपुष्य जिनराई । सु जया साता हरखानी, पूजूं ता पद उर आनी ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णाषट्वां श्री वासपुष्यजिनं गर्भ धारिकाय श्री जयादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)
छंद मालती-जेठ वदी वसमी गणिये शुभ, सात सुदयामा गर्भ पधारे,

नाथ विसल आकुलता हारी, तीन ज्ञानधर धर्म प्रचारे ।

ता माताका धन्य भाग हैं, पूजत हैं हम अर्घं सुधारे,

मंगल पावें विघ्न नशावें, बीतरागता भाव सम्हारे ।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णादशम्यां श्री विमलनाथं गर्भ धारिकाय श्री श्यामादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

अडिछ-एकत्र कातिक कृष्ण गर्भमें आयके, नाथ अनन्त सु सुरजा माता पायके ।

पूजूं देवी सार धन्य तिस भाग है, जासे विघ्न पलाय उदय सौभाग है ॥

ॐ ह्रीं कातिककृष्णा एकादशे श्री अनंतनाथं गर्भ धारिकाय श्री सुरजादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अडिछ-मात सुवता धर्म जिन उर धारियो, तेरसि सुदि वैशाख सु सुख संधारियो ।

पूजूं माता ध्याय धर्म उद्धारणी, शिवश्रद्ध जासे होय सुमंगल कारिणी ॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल त्रयोदश्यां श्री गर्भे जिन गर्भे धारिकाय श्री सुव्रतादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)
बिखानी-महा ऐरादेवी परम जननी शांति जिनका, सुदा सातें भादों करत पूजा इन्द्र तिनकी ।

जजूं मैं ले अर्घं धान जिनके दून्द चरणा, भजे मम अथ सारे नमत अथ है जास शरणा ॥
ॐ ह्रीं भादो शुक्लः सप्तम्यां श्री शारिजिनं गर्भे धारिकाय श्री ऐरादेव्यै अथ निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

चाली-सावन दशमः अन्विधारी, जिन गर्भं गृहे सुखकारी ।

प्रभु कुंथु श्रावतो माता, पूजूं जासों लहुं साता ॥

ॐ ह्रीं श्रावण कृष्ण दशम्यां श्री कुन्थ जिनं गर्भे धारिकाय श्रीमती देव्यै अथ निर्वपामीति स्वाहा । (१७)
छन्द मालती-है गुण शोल तनी सरिता, अरनाथ तना जनना सुख खानी ।

मित्रा नाम धसिद्ध जगतमें, सेष करत देवी हरखानी ॥

सुखि होनको यहा धारत है, सभ्यक् रत्नअथ पहवानी ।

फागुनका सित तीज दिना अर, गर्भ धरे जजि हों महरानी ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्ला तृतीयायां श्री अरनाथं गर्भे धारिकाय श्री मित्रादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)
दोहा-चैत्र शुक्ल पञ्चिमा वसे, अल्लिनाथ जिनदेव । प्रजापतीके गर्भमें, जजूं मात कर सेव ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल एकं श्री अल्लिचिन गर्भे धारिकाय श्री प्रजापतीदेव्यै अथ निर्वपामीति स्वाहा । (१९)

अडिछ—आवण षोडि दुतिया दिन, सुव्रतिनाथ जू श्यामा उरमें बसे ज्ञान अथ साथजू ।

ता आताके चरणकमल पूजे खदा, मंगल होय महान धिम जाधे बिदा ॥

ॐ ह्रीं आवणकृष्णा द्वितीयाया श्री मुनिसुव्रतजिनं गर्भे धारिकाय श्यामादेव्यै अथ निर्वपामीति स्वाहा । (२०)

सोना-नसिनाथ अणवान, बिपुला माता उर बसे । कार बदी हुज जान, ता देवी पूजूं सुदा ॥

ॐ ह्रीं भास्विन कृष्ण द्वितीयायां भोगमिनाथं गर्भे धारिकाय विपुलादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

मालती-धार्तिक मास सुदी ऋठिके दिन, श्री जिन नेम प्रभू सुखकारी ।

मात शिवाके गर्भ पधारे, सुदित भए जगके नरनारी ॥

धन्य मात शिव-पथ अनुगामी, मोक्ष नगरकी है अधिकारी ।

पूजं द्रव्य श्राठ श्रुत लेके, सिटन कालिमा कर्म अपारी ॥

ॐ हीं कार्तिक शुक्ल पत्न्यां धीने मेजिनं गम धारिकाय शिवादेव्यै अथ निर्वापीति स्महा । (२२)

चालीछंद-वैशाख वदी तुज जाना, श्रीपार्श्वनाथ अगधाना । घासादेवी डर आए, पूजरा हस आच लगाए ॥

ॐ हीं वैशाख कृष्णा द्वितीयायां श्रीपार्श्वजिनं गर्भे पारिकाम नामादेव्यै गर्भे निर्वापीति स्महा । (२३)

छंदमालती-सास्र अपाढ़ सुदी छठिके दिन, श्री जिन बीर प्रभू गुणधारी ।

त्रिशला माता गर्भ पधारे. सकल लोकको संकलकारी ॥

मोक्षमहलकी है अधिकारी, सांग सुधाकी ओगनहारी ।

जजूं सालके चरण युगलको, हरूं विघ्न होऊं अधिकारी ॥

ॐ हीं नापाढ़ शुक्ला पश्यां श्री गौ प्रभुं गर्भे धारिकाम श्री त्रिशलादेव्यै अथ निर्वापीति स्महा । (२४)

जयमाल ।

छंद श्रगेणी-धन्य हैं धास जिननाथकी, उन्नद देवी करै अस्ति आर्षां अकी ।

पूजि हों द्रव्य ले पित्र सारे दले, गर्भ कल्याण पूजन सकल अथ दले ॥ १ ॥

रूपकी खान हैं शीलकी खान हैं, धर्मकी खान हैं ज्ञानकी खान हैं ।

पुण्यकी खान हैं, सुखकी खान हैं, तीर्थजननी महा धार्मिकी खान हैं ॥ २ ॥

भेद विज्ञानसं आप पर जानतीं, जैन भिदुंगका गर्भ पहचानतीं ।

आत्म-विज्ञानसे मोहकी हानतीं, सत्य चारित्रसे मोह पथ जानतीं ॥ ३ ॥

ऐत आहार बीहार नहिं धारतीं, धीर्थ अद्युपम महा देव विस्तारतीं ।

गर्भ धारण क्रिये दुःख सय टालतीं, स्वको ज्ञानको वृद्धि कर छालतीं ॥ ४ ॥

मात चौबिल महामाश्र अकारिणा, पुत्र जननी जिन्हें मोक्षमें धारिणा ।

गर्भ कल्याणमें पूजते आपको, हो सकल यज्ञ यह छांड अन्नापको ॥ ५ ॥

वसा त्रिभंगीउन्द-जय संकलकारी मात हमारी बाधाहारं कर्म हरां,

म गुण विधारी ॥

इस पूजे धर्षवे मंगल पावे, शक्ति बढ़ावे शृष पाके,

जिन यज्ञ मनोहर शांत सुधाकर, सफल करें तब गुण गाके ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विधिति जिन मातृभ्यः अर्धं निर्धपामीति स्वाहा ।

फिर इन्द्र व अन्य जो यज्ञके पात्र वहां हो माता पिता सब खड़े, हा विद्मभक्ति, चारित्रभक्ति व शक्तिभक्ति करें (जो पाठके अन्तमें हैं) और कायोत्सर्ग रूपमें १०८ ढफेणमोकारमन्त्र जपकर मन्त्रापर पुष्प क्षेपण करें तथा अन्य प्रतिमाओंपर जो प्रतिष्ठाके लिये हो पुष्प क्षेपण करें-विषर्जन पढ इध समयकी पूजा समाप्त करें ।

(८) देवियोंका माताकी सेवा व प्रशोत्तर करणा—तीर्थे पहे, या रात्रिको जब अषडर हो तब फिर मण्डप बनारियोंसे भरा जावे । परदेके भीतर दूधरे चबूतरेपर इध भाति दर्शनीय रचना रची जावे—एक विहाइनपर माता बैठो हो, मबूबा रससे लकी पाधमें विभजित हो । गठ कुमारिका देवियें तरह २ सेना कर रही हो, आठ मंगल द्रव्य एक और भस्त्रे हो, एक देवी तलवार लिये पीछे खड़ी हो, दा देविया दोनों आर अंग कर रही हो एक देवी पसा लिये धीरे २ पञ्चा कर रही हो, एक अतादाभ लिये हो, एक फूलोंका गुलदस्ता, एक पानीकी शारी, एक माताके नारण दावती हो । ऐसी दशामें परदा लठे । पहले ही सूचन पास गइ बभयाको कहे कि दिक्कुमारियां माताकी सेवा कर रही हैं तथा ताड २ के पञ्चेत करके माताको प्रमन्न कर रही हैं । जग पगडा लठ जाने तब दो मिगट पछे दो चमार १ तलवार व १ पल्लेखली इन चारको छोड़कर शेष चार देवियां जाने हाथकी वस्तु एक एक और रखकर बैठ जावे और नमस्कार या कपवार मातासे प्रशोत्ता करे ।

प्रश्न १—दाहा—अरल उच्च छत्राया लोह्यत, पृथु नाम क्या तोय । कौन मनोहर शृष मय, एक शब्द क्या होय ॥

उत्तर—माता—पालकानन—अर्थात् दाहा—स्यल बुद्ध धन और सुन, केश अहिम सुस अंग ।

पालकानन वक्ष्यमें, उभय अर्थका संग ॥

प्रश्न (२)—कः सुपिजरे में रहे, कः निष्ठुरा धाणि । कः आधार जीवजा, कः अक्षर सुत जाणि ॥

इस दोहेको पूरा कीजिये ।

माया उ०—शुनः सुपिजरे में रहे, काक निष्ठुरा धाणि । कः अक्षर जीवजा, श्लोक अक्षर सुत जाणि ॥

प्रश्न (३)—कौन गर्भमें आपके, कौन नहीं तुझ पास । कौन हते सूत्रा मनुष उररका अरदाज ॥

उ० माता—तुक् अर्थात् पुत्र, शुक् अर्थात् शोक; रुक् अर्थात् रोग । दोहा—पुत्र देखि सप गर्भमें, शोक नहीं सुझ पास ।

रोग हते सूत्रा मनुष, यही पात है खास ॥

प्रश्न (४)—कचिकर भोजन कौन है, गहराको जल थान । कौन नाथ है आपका, उरर कीजे जान ॥

उत्तर-रूप, धूप, अर्घ्य-रुचिकर भोजन बाल है, गरारा रूप प्रज्ञान । सूर्य नाथ भेरा लक्ष्मी, बेबी उत्तर जान ॥
 प्रश्न (५)-नाम जिनन्द्र बलानिये, हाथी लक्षण जीर । एक पापयत्ने अर्थ दो, काह दीजे बुधि कोल ॥
 उत्तर-सुरावद अर्थात्-देवों को घर देत है. प्रभु सुखारव प्रज्ञान । सुन्दर शब्द सुभातदो, धारक नाग प्रमाण ॥

- प्रश्न (६)-तुमसी त्रिया कौन जग जान । उत्तर माता-तीर्थकार सुन जैन समाज ।
 प्रश्न (७)-जगमें सुअट कौनसे साध । उत्तर-जे नर जीतें विषय कषाय ।
 प्रश्न (८)-कौन कहावे कायर कौन कीन । उत्तर-इन्द्रीयह भेटन बल हीन ।
 प्रश्न (९)-कौन सतपुरुष नर अन्न धार । उत्तर-जो साधें पुरुषारथ धार ।
 प्रश्न (१०)-कौन कापुरुष कहिये सम । उत्तर-जो ठाठ साध न जाने धर्म ।
 प्रश्न (११)-धिक किनका कहिये अर्थग उत्तर-जे नर करें प्रतिष्ठा भङ्ग ।
 प्रश्न (१२)-कहे कौन नर नित्य पवित्र उत्तर-जो ब्रह्मचर्य धरो दिव्य चित्त ।
 प्रश्न (१३)-कौन पशु सानुष आकार । उत्तर-जिनके हिरदे नाहिं विचार ।
 प्रश्न (१४)-धधिर कौनसे उत्तर देख । उत्तर-जैन सिद्धान्त सुनै नहिं जेह ।
 प्रश्न (१५)-मूक नाम नर कैसे लहे । उत्तर-जा हित साध वचन नहिं कहे ।
 प्रश्न (१६)-लक्ष्मी भुजा कौन कर हीन । उत्तर-जिन पूजा सुनि वान न कीन ।
 प्रश्न (१७)-कौन पांगले पाव समेन । उत्तर-जे तीरथ परसे न अथेत ।
 प्रश्न (१८)-कौन कुरूप जननि कहु एह । उत्तर-शोल शिगार विना नर जेह ।
 प्रश्न (१९) बेग कहा करिये बड़ भाग । उत्तर-दिशा प्रहण जगतको त्याग ।
 प्रश्न (२०)-जियको कौन शरण है माय । उत्तर-पंथ परम गुरु सदा सहाय ।
 प्रश्न (२१)-कौन तपस्वी मन्-दुःख भरे । उत्तर-आत्म अनुभव बिन तप करे ।
 प्रश्न (२२)-जगमें कौन रतन है सार । उत्तर-सम्पददर्शन रतन अपार ।
 प्रश्न (२३)-को बिन नर यह पशु समान । उत्तर-बिद्या बिन नर पशु समान ।
 प्रश्न (२४)-उत्तर-कौन हते अय जग बधा होय । उत्तर-मोह हते अय जग बधा होय ।
 प्रश्न (२५)-धया बिन गृहधारी दुख पाय । उत्तर-पैसे बिन नित ही दुख पाय ।

- प्रश्न (२६)-नाम पुरुष कैसे सफलाय । उत्तर-जो पुरुषारथ करे बनाय ।
 प्रश्न (२७)-कौन पुत्र है मृतक समान । उत्तर-बिष्ठा विनय हीन सुत जान ।
 प्रश्न (२८)-काफी भक्ति करे सुख होय । उत्तर-श्री लिनराज भक्ति सुख होय ।
 प्रश्न (२९)-कासे नर जग उन्नति करे । उत्तर-वृथा समय नहिं खोबे करे ।
 प्रश्न (३०)-पात प्रथम क्या करिये माय । उत्तर-सामायिक शुभ ध्यान लगाय ।
 प्रश्न (३१)-कन्या कैसे मार गनाय । उत्तर-जो बिष्ठा पढ़ विनय कराय ।
 प्रश्न (३२)-कौन समय कन्या बर जोग । उत्तर-जब युवति हड़ हो सुत जोग ।
 प्रश्न (३३)-कैसा बर कन्या बर जोग । उत्तर-उद्योगो युवान हड़ योग ।
 प्रश्न (३४)-कौन नार ग्रह सुमति यहाय । उत्तर-मिष्ट बचन भाषी सुखदाय ।
 प्रश्न (३५)-कौन काज उत्तम है माय । उत्तर-आत्म ध्यान परम सुखदाय ।
 प्रश्न (३६)-कौन कथासे पाप नशाय । उत्तर-धर्म कथासे पाप नशाय ।
 प्रश्न (३७)-को व्यवहार धर्म सुखदाय । उत्तर-धर्म अहिंसा जग सुखदाय ।
 प्रश्न (३८)-कौन धनी जगमें सुख पाय । उत्तर-मन्तोषी दानी सुखदाय ।
 प्रश्न (३९)-कौन माय जगको बश करे । उत्तर-हितमित मिष्ट बचन उच्चरे ।
 प्रश्न (४०)-कौन उपाये मन बद्लाय । उत्तर-हितमित धर्म उपदेश सुनाय ।
 प्रश्न (४१)-कौन भांति प्रय लोक जिताय । उत्तर-शुक्लध्यान जो धरे स्वभाय ।
 प्रश्न (४२)-कौन करे अधिरतिका नाश । उत्तर-सम दम सहित समय अभ्यास ।
 प्रश्न (४३)-कौन उतारे कर्मन भार । उत्तर-जो द्वादश तप करे सम्भार ।
 प्रश्न (४४)-कौन ग्रही मनमें सुख पाय । उत्तर-न्याय मार्गें धन जो कमाय ।
 प्रश्न (४५)-मात कौन रोगी नई होय । उत्तर-जो विवेकसे भोगी होय ।
 प्रश्न (४६)-संकट समय कौन सहकार । उत्तर-धैर्य धर्म मत तत्त्व विचार ।
 प्रश्न (४७)-मरण समय क्या करिये काम । उत्तर-समता भाव शीत परिणाम ।
 प्रश्न (४८)-मिथ कौन है जग दितकार । उत्तर-जो कुमार्गसे लेय निकार ।

प्रम. (४९)-कष्ट कौन है, मान घताय । उत्तर-धर्म छुड़ाय-कुपथ ले जाय ।

प्रम. (५०)-शरण कौनकी है सुखकार । उत्तर-आत्म-निज तीर्थकर भार ।

इसी तरह और भी उपयोगी वस्तुएं हो सकती हैं । पीछे पंखवाली जोरसे पखा करे, पुष्पवाली-फूल बुंदावे, अत्तावाली अत्तर बुंदावे, व कपडोंमें लगावे, चमरोवाली जोगसे नम्रा करे । इतनेमें बाले बाहर बजे । इस ऊपरसे पहलेकी तरह, रतनकी वर्षा हो । यदि रत्न या धितारे या चादी सोनेके फूल कम हों तो रंगे हुए पाँके, चावल बाथमें मिलाके । दो मिगट तक खून वर्षा हो तब प्रव लोग जयजयकार कहे । पश्च व देविया माताके नामने खड़ी हो स्तुति पढ़ें—

चौभाई-जय जय मात परम अधिकारी, देखन इसको सुख है भारी ।

तुम सेवातें पुण कषाया, अपना सुर अब सफल कराया ॥ १ ॥

धन तीर्थतर तीर्थ प्रचारें, मिथय-दृष्टो जीव उबारें ।

आप तरें औरनको तरें, धर्म जुहाज जगन विस्तारें ॥ २ ॥

निजको जनने हारी माता, यातें जग उद्दारी माना ।

तीन लोक सिरताजा माता, नमन करन तोकुं जगभाता ॥ ३ ॥

तू है श्री जिन गुर सुखकारी, जिन तीर्थकर उरमें धारी ।

यातें परम पूज्य सुखदाई, नमन करत पुन पुन हे माई ॥ ४ ॥

तुम शिवगामी उत्तम नारी, नीलाश्रुषण, उत्तम धारी ।

श्री जिनसात कृपा अब करिये, सेवकके सब पालक हरिये ॥ ५ ॥

इस तरह देवियां गाती रहें, परदा गिर जावे । यहातक गर्भ-ध्याणकी विधि पूर्ण हुई ।



अध्याय चौथा ।

जन्मकल्याणक

गर्भकल्याणकसे दूधरे दिन धवरे जन्मकल्याणककी क्रिया करानी उचित है ।

(१) प्रसुका जन्म होना व इन्द्रका आना—बड़े सवेरे ही धन लेंगोंको आमत्रण किया जावे, टिठ्टों द्वारा मंडपमें बैठे । प्रतिष्ठाके पात्र शत्रु ही वेदीके निःशुद्ध आवे । खाद्य कर आचार्य व इन्द्र तथा पिता आकर गर्भकल्याणकमें कही हुई विधिके अनुषार जैषा न० (५) में कहा है अगशुद्धि, व फफलीकरण करे, अंगरक्षा करे व अभिषेक करके नित्यपूजा व सिद्धपूजा करे । फिर उम्मी प्रमाण तीनों कुण्डोंमें होम उम्मी तरह कहे हुए प्रमाण हो जावे । यह सब काम हो चुकनेपर फिर आगेकी क्रिया बताते हैं ।

अति प्रातःकालसे यह काम शुरू हो क्योंकि जबतक जन्मकल्याणक पूर्ण न हो तबतक सब पात्रोंको व दर्शकोंको यथाशक्ति भोजन न करना योग्य है । तब सब इन्द्र इन्द्राणी वहासे चले जावे, आचार्य व माता पिता आदि रहे । आगे पढ़ा पड़ जावे । परदेके भीतर विहासनपर माता बैठे हो, पाषमें पतिमा अहित भूषा विराजमान हो व आठ मगलद्रव्य रखे हो व आठों देविया सेवामें ह्राजिर हो । ऐसा प्रबन्ध किया जावे कि बाहर खूब बाने बजे, घण्टा घडियालमें नजनेका प्रबन्ध हो तथा बाहर इन्द्र अगनी सेना तैयार करे । भवनवादीके दण, व्यन्तरके आठ, कल्पवासीके बाह व उद्योतिषिके एक ऐसे कुल इन्द्र ३१ हैं । ३१ सब इन्द्र जरूर बने जो शुद्ध धोती दुपट्टा पंखा पहने हो, मुकुट लगाए हो । यदि ३१ प्रत्येन्द्र आर हो सके तो वे भी बन जावें । २७ इन्द्रोंके व प्रत्येन्द्रोंके मुकुटोंपर उनके जातिवाचक नाम अंकित हो सके तो कारण जावे । इनका प्रयोजन ऐसा कि दर्शकोंका शोभनिक विदित हो । वे नाम ऐसे रहे—(१) असुरेन्द्र (२) नागेन्द्र (३) विद्युतेन्द्र (४) सूर्येन्द्र (५) अग्निन्द्र (६) वातेन्द्र (७) स्तनितेन्द्र (८) उदधीन्द्र (९) द्वीपेन्द्र (१०) दिगिन्द्र (११) किन्नरेन्द्र (१२) कि पुरुषेन्द्र (१३) महारगेन्द्र (१४) गन्धर्वेन्द्र (१५) यक्षेन्द्र (१६) राक्षसेन्द्र (१७) भूरेन्द्र (१८) पिशाचेन्द्र (१९) चन्द्रेन्द्र (२०) बौधमेन्द्र (२१) ईशानेन्द्र (२२) चानत्कुमारेन्द्र (२३) माहेन्द्रेन्द्र (२४) ब्रह्मेन्द्र (२५) खान्तिन्द्र (२६) शुकेन्द्र (२७) शनारेन्द्र (२८) आततेन्द्र (२९) प्राणतेन्द्र (३०) वाग्नेन्द्र (३१) अब्युतेन्द्र । यदि प्रत्येन्द्र बने तो इन्द्रके स्थानमें हरएकके आगे प्रत्येन्द्र जोड़ा जावे जैसे असुर प्रत्येन्द्र, चन्द्र ना प्रत्येन्द्र सूत्र्य है ।

ऐरावत हाथीके समान हाथीपर इंद्राणी अक्षित सौधर्म, ईशान, अनंतकुमार, माहेन्द्र ये चार इन्द्र बैठे हो । अन्य इन्द्र दूसरे बाहनोपर बैठ सकते हैं, जैसे घोड़े बैल आदि पर सब बजे हुए हो । इन्द्रकी सेना ७ प्रकारकी होती है—हाथी, घोड़े, रथ, गंधर्व, नृत्य-कारिणी, अप्सराएं, गंधर्व और वृषभ । यथासम्भव ये सामान एकत्र किया जाय । मण्डपकी कुछ दूरीसे यह जुलुष निकल चुके व बाजे गालेके साथ मण्डपकी तरफ आ रहा हो, साथमें नरनारी भी हो, इधर मण्डपमें दूसरे चबूतरे पर नित्य पूजा व होमके पंछे जब परदेके भीतर सब सामान एकत्र हो जावे और बाजे बजते हो, घण्टा घडियाल बजते हो और सब पात्र अपने-अपने हाथोंमें पुष्प ले लेवे, तथा भगवानके विराजमान करनेका एक भद्रासन ऊंचा विराजमान हो जहासे भगवान सबको दीख सके । इस वासनको नीचे लिखा

मन्त्र पढ़ पवित्र करें। “ॐ हां हीं हूं हो हः नमो ह्रिते भगवते श्रीमते पवित्रजलेन श्री पीठप्रक्षालन करोमि स्वाहा” जलके छींटे देवे। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ उच्च पर श्री लिखे—“ॐ हीं श्रीं हीं श्रीं श्रोत्रेलेन करोमि स्वाहा।” ध्वज परदा उठावा जावे तत्र यन्त्रायक आचार्य कायोत्सर्ग ध्यान कर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ प्रतिमाकी भद्रासन पर विराजमान करे।

“ॐ हीं त्रलोक्योद्धारणधीर जिनेन्द्र मद्रासने उवत्रैश्यामि स्वाहा।” इत समय सब नरनारी चारों तरफ जय जय नंद नद शब्द करें व खुन्न बाजे बजे। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प प्रतिमा पर क्षेपे। “ॐ हां हीं हूं हों हः श्री विद्वच्चक्राधिपतये अष्टगुणसमृदाय फट् स्वाहा।” तथा यदि और प्रतिमा प्रतिष्ठाकी हों तो उनपर भी क्षेपण करें। फिर आचार्य नीचेके श्लोक पढ़े—

देव स्वययथा जाते त्रिशुबजजखिलं चाथ जातं सनाथं ।

जातो सूतोद्य धर्मः कुमलसद्वृत्तमो ष्वस्तमथैव जातम् ॥

स्वमोक्षदाः कपाटं कुटमिह निःशृचं चाथ पुण्याहसाशी ।

जातं लोकाग्रचक्षुर्जय जय भगवज्जीव धर्धश्च नंद ॥ ७ ॥

तथा भाषामें स्तुति पढ़ें।

चौपाई-धन्य नाथ तुम आज प्रकाशे । तीन भवन जन अथ हुल्लासे ॥

धर्म तीर्थ मानो उपजाया । कुमति मार्गीका ध्वंश कराया ॥

मोक्ष द्वार पट अथ उघड़ाए । जीवो वर्धारे नाथ स्वभाए ॥

इतना पढ़ फिर मूळ प्रतिमापर व अन्य पर पुष्प पर १५। इधर मंगल पाठ पढ़ा जाता हो कि इन्द्रकी सेना आकर पड़ुंसे तथा मण्डपकी तीन प्रदक्षिणा देवे। पूर्व समाल बाहर खड़ा हो—(जो इन्द्र बने हों उनको विशेष टिकट दिया जावे) बिना टिकट कोई भीतर प्रवेश न कर सके। तत्र इन्द्र इन्द्राणी हाथीसे उतरे और इन्द्र इन्द्राणीसे कहे—

दोहा-देवी जाहु प्रस्तुति घर, लावो तीर्थ कुमार । साता कष्ट न होय कछु, राखो यही विचार ।

मात्र इन्द्राणी भीतर चबूतरेपर आवे, इन्द्र बाहर रहे। प्रतिमाजीके पाप उच समय माता हो व देविया हों व आचार्य हो तथा और कोई न हो। इन्द्राणी विनय बहिन जाकर पहले कुछ देर तीर्थकर व माताका दर्शन करे फिर तीर्थकरकी मूर्तिकी व माताकी तीन प्रदक्षिणा देकर पहले मूर्तिको नमस्कार करे फिर सामने खड़ी होकर स्तुति पढ़े।

चौपाई-वन धन सात परम सुखकारी, तीन लोक जननी हितकारी ।

मंगलकारी पुण्यवती तू, पुत्रवती शुचि ज्ञानमनी तू ॥

तप दर्शनते हम सुख पाए, हर्ष हृदयमें नाहिं समाए ।

धन्य जन्म माता हम जाना, देख तुझे अर श्री भगवाना ॥

रुति कारनेके पीछे कुछ देर विनयसे खड़ी रहे । इतनेमें माताको नौदसी आज्ञावि तब एक नारियलको कपड़ेसे ढका हुआ जो बहा रक्खा है पहलेसे ही तबको उस भद्र-पुनपर रखकर और भगवानको दोनों हाथोंसे उठाके और बार २ देखकर प्रमत्त हो और अपना मस्तक नमावे, तब आठों देविया आठ मंगल द्रव्य हाथमें लेकर आगे र चले—(मंगल द्रव्य—छत्र, ध्वजा, कलश, चमरा, ठोना (सुप्रतिष्ठ), झारी, दर्पण, पंखा (ताड़का) । माता बड़ी विनयसे भगवानको ले जा रही ह, सब नरनारी खड़े हो जाते हैं और चांदी सोनेके पुष्प या रंगे हुए चावलोंकी वृष्टि प्रसुप्त करते हैं जो नरनारियोंको अपने पाष पहलेसे रखने चाहिये । मंडपके बाहर सब इन्द्रोंके आगे शीघ्रम इन्द्र राह देख रहा है । इन्द्राणी जाकर इन्द्रके दोनों हाथोंकी हथेलीपर भगवानको विराजमान कर देती है, तब इन्द्र बड़े भावसे भगवानका स्वरूप देखता है । जिस समय इन्द्राणी प्रतिमाजीको ले जावे तब समय आचार्य अन्य प्रतिष्ठायोग्य मूर्तियोंपर भी पुष्प क्षेपण करे । फिर इन्द्र नीचे प्रकार रूति पढ़ता है, सब भ्रमाज चुप है । मण्डपसे नरनारी भी धोरेर आ जाते हैं और जलधर्म शरीक होजाते हैं ।

पढ़ड़ी छन्द—तुम जगत् ज्योति तुम जगत् ईश, तुम जगत् गुरु जग नमत्त शीश ॥

तुम ज्ञेयलज्ञान प्रकाशकार, तुम ही सूरज तप्त मोहहार ।
तुम देखे भव्य कमल कुचाय, अथ अमर तुरत तर्से पलाय ॥ १ ॥
जय महा गुरु जय विश्वज्ञान, जय गुणसमुद्र करुणानिधान ॥ २ ॥
जो चरण कमल साथे धराय, वह भव्य तुरत सदृज्ञान पाथ ।
हे नाथ ! सुक्ति लक्ष्मी अधार, तुमको देखत है प्रेम धार ॥ ३ ॥
कृतकृत्य अप हम दर्श पाय, हम हर्ष नहीं चित्तमें सखाय ।
हम जन्म सफल मानो अधार, तुमको परशो हे भव उधार ॥ ४ ॥

इम तरह स्तुति पढ़के मस्तक नमावे तब सर्व इन्द्रादिक देव जय जय शब्द करे थ मस्तक नमावे, तब इद तच्च स्थरसे आज्ञा करे, हाथ ऊँचा कर कहे—“हे देवगणों ! श्री तीर्थंकर महाराजकी भक्तिमें आनन्द मनाते हुए, जय जयकार शब्द कहते हुए, मंगल गीत गाते हुए, भगवानके गुणोंमें अचुरागी होते हुए, भाव क्रम व नियमसे चलते हुए शीघ्र ही सुमेरु पर्वतपर पवारो और क्षीरसागरके पवित्र जलसे प्रमुक्ता पाण्डु-शिलापर अभिषेक करके अपने जन्मको सुवारो ।” इतना कह इद इन्द्राणी ऐरावत हाथीपर चढ़ जाते हैं । भगवान् शीघ्रम इन्द्रकी गोदमें हैं, ईशान इंद पीछे बैठे छत्र भफेद किये हुए हैं । प्रनतकुमार और माहेन्द्र इद दोनों ओर खड़े होकर चमरा डार रहे हैं । इस तरह सुख बड़े नियमके साथ १ घण्टेके भीतर सुमेरु पर्वतपर पहुंच जावे ।

(२) सुमेरु पर्वतकी, क्षीर लसुद्रकी तथा मंडपकी रचना—सुख्य मंडपसे उत्तरदिशाकी ओर किसी एकांत स्थानमें जो पवित्र हो, सुमेरु पर्वत बनाया जावे। जो तीन कटनीदार सुन्दर हो उसको सुवर्णमें पीतरंगसे पोता जावे। ऊपर जानेके लिये दो तरफ सीढ़ियाँ हो। ऊपर बीचमें ऐसा एक गड्ढा किया जावे कि भगवानके न्हवनका जल भीतरसे जाकर जमीनके भीतर ही चला जावे, ऊपरसे ही गिरकर बहे नहीं कि पैरोंमें आवे। सबके ऊपर पाहुकशिला अर्धचन्द्राकार बनाई जावे जो षफेद रंगसे पुती हो, स्फटिकके समान चपकती हो। इसके ऊपर कमलाकार विहासन बने जो पीतरंगका हो। उसके इधर उधर इन्द्रोंके खड़े होनेके दो कुल ऊचे आसन हो जो विहासनसे नीचे हों। सीढियोंको छोड़कर कटनीके षत तरफ छोटे २ वृक्षोंके नादे सुन्दरताके लिये रखे जावें व १६ मंदिरोंके स्थानमें १६ मंदिरोंके आकार ४ नीचे भूमिपर चारों ओर, चार चार चारों ओर तीन कटनीके बहा बना दिये जावें। यह विचित्र रंगोंसे पुते हुए हो जिनसे प्रगट हो कि मेरुके चारों वनोंमें १६ मंदिर हैं। इष पर्वतसे इतनी दूर जितनी दूर दो पंक्तियोंसे इन्द्र या देव खड़े होकर दायेंबायें कलश लावके, एक नहर क्षीरसुद्रके स्थापनमें बनाई जावे, जिसमें न्हवन होनेके पहले शुद्ध दूधसे मिला हुआ पानी भर दिया जावे जिसमें लहरे आती हों व पानी दूध समान दीखे। धूपके बचाव आदिके निमित्त षण्डप ऊपर छा दिया जावे ताकि षन प्रमूह षण्डपके भीतर आजावे। पर्वत भी उसीके नीचे रहे। १०८ कलश व १ कलश गन्धोदकका ऐसे १०९ सुवर्ण, चांदी वा अन्य धातुके एकसे तैयार रहे। यदि धातुके न हों तो मिट्टीके ही लिये जावे। ये षन कलश धोकर षण्डपके दो तरफ ५४, ५४ रख दिये जावें, तनमें षाथिया किया जावे, ढकनेको कमलका पुष्प हो या कोई पत्ता हो या नारियल हो या सुन्दर रकाबी हों। कलशोंके स्थापनके समय “ॐ ह्रीं स्वस्त्यै कलशस्थापन करोमि स्वाहा।” यह मंत्र पढ़े। गन्धोदकके कलशमें चन्दन, केशर, लगर आदि सुगन्धित द्रव्योंसे मिला हुआ जल भरा जावे। ये १०८ कलश खाली रखे रहे। षामग्री तैयार की जावे तथा एक छोटी चौकी या तख-तपर २४ कोठोंका षण्डक तैयार किया जावे। भगवानके पहुचनेके पहले ही आचार्य ‘नीरजसे नमः’ इष मंत्रसे सर्व भूमिको शुद्ध कर आवे। यहांपर दर्शकोंके बैठनेका स्थान नियत किया जावे। पूजा व अभिषेकका स्थाग अलगर किया जावे। पर्वतसे नहर तकका मार्ग जानेका साफ रक्खा जावे। बैठनेवाले इषसे हट कर बैठे। चारों तरफ पर्वतके कुल भूमि छोड़कर दर्शक बैठे।

(३) तीर्थंकर भगवानका अभिषेक—अभिषेकके समय आठ दिक्पाल—अग्नि, यम, नैऋत्य, वरुण, पवन, बुधेर, ईशान और वरुण आठ दिशाओंमें सुन्दर लड़ी लिये हुए षण्डपमें खड़े रहे, इन पर भी मुकुट हो। ऐरावत हाथी ब्रह्मित सर्व षमूह पहले इष पर्वतकी तीन प्रदक्षिणा देवे। जिन विहासन पर भगवान विराजमान होंगे उसको नीचे लिये मंत्रसे जलके छीटे देकर पवित्र करे। “ॐ हा ह्रीं हूं ही हः नमोर्हसे भगवते श्रीमते पवित्रजलेन पीठप्रच्छालन करोमि स्वाहा” फिर षण्डप नीचे लिखा मंत्र पढ़ श्री लिखें। “ॐ ह्रीं श्री अहं श्रीलेखनं करोमि स्वाहा।” तीन प्रदक्षिणा देनेके पीछे श्री भगवानको हाथीसे उतार कर इंद्र नीचे लिखा मंत्र पढ़ कर विहासन पर विराजमान करे, षन जय जय शब्द बहे।

“ॐ ह्रीं ह्रीं श्री षर्मतीर्याधिगायभगवन्निष्पाहुकशिलापंठे तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा।” फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ प्रतिमाको स्पर्श करे।

अं उपहाय दिव्यदेहाय सलोजादाय महष्पणाय अणंतचट्टयाय परमसुहृदैष्ट्याय णिम्लाय ध्यंमुधे अजरापरपरमपदपताय परमपदाय मम इद्यवि मण्डिदाय स्वाहा । फिर सौधर्म व ईशान इन्द्र प्रतिमाके दोनों तरफ खड़े हो जावे और ऊपर कोई न रहे, आचार्य भी नीचे आ जावे । क्षीर घमुद्र तक दोनों ओर पंक्तिबन्ध सीढ़ीसे लेकर इन्द्रगण एक एक इतनेर दूर खड़े हों कि कलशको हाथोहाय दे सके । नहरक पास ५४-५४ कलश रखे हों, एक एक कलश भरके व डकके एकर दूबरेको देता जावे । कलश दोनों इन्द्रोके हाथमें आवे तब मंगलीक मनोहर वाजे बजने लगे, स्त्रिया मंगल पढ़ने लगे । जय जय शब्द होवे । ऊंचा हाथ करके सौधर्म व ईशान इन्द्र न्हवन करे । न्हवनका जल नीचे न आवे, शिशाबनसे नीचे जाकर मेरुके भीतर चला जावे । एक दो वर्तन पात्र रख दिये जावे । जो भरते जावे । न्हवन शुरू करनेके पहले आचार्य नीचे खड़े हुए यह मन्त्र पढ़े—

“ॐ क्षीरघमुद्रवारिपूरितेन मणिप्रयमगलकलशेन भगवदहंव प्रतिकृति र्नापयामः ॐ श्रीं ह्रीं ह्र व म ह स त पं श्र्नीं क्ष्नीं ह्र षः नमोहृते स्वाहा ।” यह मंत्र बराबर पढ़ता रहे जब तक १०८ कलशका न्हवन न हो जावे । दोनों इन्द्र बराबर न्हवन कराके एक एक भाई नीचेकी कटनीपर दोनों ओर खड़ा रहे जो खाली कलशोंको इन्द्रोके हाथसे लेकर नचे रखवाता जावे । लक्ष्मीको वह नारियल व डकना भी इन्द्र न्हवन करनेके पहले दे दे-जितने इन्द्र पक्ति वाघकर नहर तक खड़े हों । जब वहाके घब कलश लठाकर एक एक क्षी हरएकके हाथमें रह जावे तब सौधर्म ईशान इन्द्र नीचे आ जावे और बारो बारीसे एकर इन्द्र चट्टकर र्नाजान करावे और नीचे आ जावे । इस तरह १०८ कलशका र्नाजान पूर्ण हो जावे । जिस समय अभिषेक हो उस समय बड़े धूरायनमें धूप भो खेई जाती हो जिसकी सुगन्ध सब ओर फैले । फिर सौधर्म इन्द्र ऊपर जाता है और गन्धोदकके कलशसे अभिषेक करता है । उस समय आचार्य वही मन्त्र पढ़ते है परन्तु “क्षीरसमुद्रवारिपरिपूरितेन” के स्थानमें गन्धोदकपुरितेन इतना बदल देते है । फिर इन्द्र भगवानके ऊपर खच्छ र्नाजानकी धारा डालता है तब शांतिपाठ सब इन्द्र पढ़ते हैं—

दोषकवृत्तम्-स्नान्तिचिन्मं क्षुशिनिर्भलवदन्त्रं क्षीलगुणत्रवसंयजपात्रम् । अष्टशतार्चिनालक्षणभात्रं नौमि जिनोत्तममस्तुजनेत्रम् ॥
पञ्चमधीप्सतचक्रवराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणेश्व । शान्तिकरं गणेशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिदुन्दुभिरासन्नभोजनघोषी । आतापवारणचाभरशुभे यस्य विश्रान्ति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥
तं जगद्विचित्रान्तिजिनेन्द्र शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि । सर्वगणाय तु यच्छतु शान्ति महामरं पठते परमां च ॥४॥

नसन्ततिलका—येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहारस्त्रैः, सुक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतयाप्रपञ्चाः ।

ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थकाराः सततशान्तिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

इन्द्रजना-संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यप्रपोधनानाम् ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥

त्तारावृत्तम्—क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु पल्लवात् धार्मिको भूमिपालः ।

काले काले च सस्यगर्धतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरसारी क्षणमपि जगतां, मासभूजीषलोके ।

जेनेद्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, स्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप—प्रध्वस्तघातिक्ष्मणः केषलज्ञानभास्कराः कुर्वन्तु जगतः शान्तिं वृषभाद्याः जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक आचार्य पढ़े ।

‘यो नैर्ऋतप्रगुणादिभूषिततनुर्दीप्त्या बलेनोर्जसा । युक्तश्चानपवत्यकायुगनिशं सतश्च सुक्तिश्रिया ॥

नार्यस्तस्य जगत्प्रभोः स्वानतः किं त्वाप्नुमेमानुगुणा । निन्द्राचैरभिषिक्त एष भगवान्पापघटपायाजिनः ॥

शान्तिं च शान्तिं विजयं विभूतिं तुष्टिं च पुष्टिं सकलस्य जन्तो ।

दीर्घायुरोग्यमनीष्टसिद्धिं कुर्याज्जिनस्त्वानजलमवासः ।

यह मंत्र पढ़कर मस्तकपर लगाने ।

निर्वलं निर्मलीकरणं पापनं पापनाशनं, जिनगन्धोदकं चन्दे, अष्टकर्मेयिनाशकम् ॥

अथवा नीचे का श्लोक पढ़ गन्धोदक लगावे ।

वानिवात्तविघारजागविपुलश्रीकेवलउद्योतिषो । देवस्यारय पथिभ्रमगङ्गाकलनात्पुं श्रिं भंगलं

कुर्गाद् स्वगमघातिदावशसनं स्वसोक्षलक्ष्मीफल- । प्रोद्यद्दुर्मलगाभिवर्धनसिद्धं सद्गन्धमन्धोदकम् ॥ ७ ॥

फिर २ गड़े ग्लासोंमें गन्धोदक भरा जाय । दो ग्लास प्राशुक जलसे भरे हों । एक गन्धोदक व एक पानीका ग्लास बियोंमें किसी कन्या द्वारा व १ गन्धोदक व १ पानीका ग्लास पुरुषोंमें किसी पुरुष द्वारा भेजा जावे । ऊपरसे थोड़ासा गन्धोदक ऊँकर नीचे आचार्य आदि भ्रम इन्द्र पूजाके पात्र लगाकर जन्म शफल करे । इन्द्र नीचे बाजावे और इद्राणी जाकर पहले भगवानके अंगमें केशर चन्दनका लेप करे, मस्तकमें मुकुट धारे, तिलक लगावे, कर्णोंमें कुण्डल, गलेमें हार, मुगामें बाजूबन्द, हाथोंमें कड़े, कमरमें करबन्नी, चरणोंमें मूयुलं, शुद्ध सुन्दर धोती व कपड़े पहनावे । (पहले ही एक देवी इन ब्रह्माभूषणोंको लिये हुए इद्राणीके पास पढ़ेंगे ।) अन्य वष इन्द्रादि बैठ जावे । इद्राणी भी नीचे बाजावे—बैठ जावे, मात्र सौधमें इद्र खड़े होकर नीचेकी स्तुति पढ़े—

स्तुति ।

स्वं देव ! धीतरागोऽसि नार्थः स्ताननन्दने । तथापि भक्तिबशगः सतबीमि कतिचिरपदैः ॥ ७७४ ॥

मङ्गलं शरण लोकोत्तमोऽर्हन् जिनराइ जिनः । सिद्ध आचार्यसम्पूज्यः साधुः साधुपितामहः ॥ ७७५ ॥

प्राश्यः पापहरोऽधीशो निःकषायो गुणाग्रणी । पावनं परमं ज्योतिः परमेष्ठी सनातनः ॥ ७७६ ॥
 अव्यक्तो व्यक्तमूर्तिसमलक्ष्यो लक्षणातिगः । सुलक्ष्म्यो लक्षणज्ञेय पापशत्रुरुदारधीः ॥ ७७७ ॥
 प्रणीतार्थः प्रमाणात्मा सुनयो नयतत्त्वचित् । प्रणधिः प्रणवो नाद्यो ज्ञानदर्शननायकः ॥ ७७८ ॥
 पुराणपुरुषोऽहायरूपो रूपातिगो महात् । कामहा कमनो कान्यः कामगामी कलानिधिः ॥ ७७९ ॥
 कर्मः कामयिथा कान्तः कामनातीतकामुकः । कालुष्यहंता कामारिः कोपावेकहरो हरः ॥ ७८० ॥
 स्वयंभूर्विनिस्तरसाधधीरः सुकृतभावनः । स्रष्टा भूतपतिः साक्षी त्रैलोक्यपरमेश्वरः ॥ ७८१ ॥
 प्रभूष्णुरधिदेवात्मः विश्वराड् विश्वतोमुखः । विश्वयोनिर्जिष्णुरीशः संवदः पुण्यनायकः ॥ ७८२ ॥
 धर्मावुजासौ धर्मज्ञो वेदविद् वदतांशर । भव्यभानुर्मखल्वेष्येष्ठश्च हि ब्रह्मपदेश्वरः ॥ ७८३ ॥
 भूष्णुः स्थानरः स्थाणुःचलो विमलो विशुः । महीयान् जातिसंस्कारः कृतकृत्यो बहस्पतिः ॥ ७८४ ॥
 व्यागमी वाचस्पतिः प्राज्ञो गुणरत्नाकरो निधिः । शास्ता सर्वज्ञ ईशानः आशः सर्वत्रलोचनः ॥ ७८५ ॥
 कूटस्थो निधिकारोऽस्तिभारत्थवाच्यगिरांपतिः । स्याद्वादानायको नेता मोक्षमार्गोऽदेशकः ॥ ७८६ ॥
 निरीहः सुगतो भास्वान् लोकालोकविभाषसुः । अनन्तगुणभ्रंपूज्यो नित्ययज्ञोऽसि विश्वराड् ॥ ७८७ ॥
 एवमष्टोत्तरशातं नाम्नां पातु मां भवबन्धनात् । सोचय स्वात्मसंभूतिं देहि देहि महेश्वर ॥ ७८८ ॥

फिर भाषामें स्तुति पढ़े—

पढ़री छन्द—जग वीतराग हत राग दोष, रासत दर्शन क्षायिक अदोष ।

तुम पाप हरण हो निःकषाय, पावन परमेष्ठी गुण निकाय ॥ १ ॥

तुम नय प्रमाण ज्ञाता अशेष, श्रुतज्ञान सकल जानो विशोष ।

तुम अधधिज्ञान धारी विशाल, सति ज्ञान धरण सुखकर कुपाल ॥ २ ॥

तुम काम रहित हो काम जीत, तुम विद्यानिधि हो कर्म जीत ।

तुम शांत श्रमावी स्वयं बुद्ध, तुम करुणानिधि धर्मी अक्रुद्ध ॥ ३ ॥

तुम वदतांवर कृतकृन ईश. वाचस्पति गुणनिधि गिरा ईश ।

तुम मोक्षमार्ग उपदेशकार, सहिमा तुमरो को लहे पार ॥ ४ ॥

दोहा—नाम लिये श्रुतिके किये, पातक सर्व पलाय । भंगल होवे लोकमें, स्वात्मभूति प्रगटाय ॥

फिर इन्द्र मण्डलकी पूजा करे । पहले नीचे प्रमाण करे—

यस्योदारद्वयस्य जन्महरतो, जन्माभिवेक्तोत्सवं । चारौ श्रेष्ठसहीधरस्य शिखरे दुर्गैस्तुदुर्गधोदवेः ॥
चक्रे शक्तगणो जहाशुननिधेः शीपादपद्मद्वयं । तस्यैकादशशः सहेन महतस्माराधयस्माराधये ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीपद्मनिनेन्द्र शत्रात्रतर २ संवीषट् आह्वानन । अत्र तिष्ठ २ ठः थापनम् । अत्र मम वन्निहितो भवमव वषट् षनिधिकरणम् ।
यत्रगाधविशालनिर्मलगुणे लोकग्रथं सर्वदा । आलोकं प्रतिबिम्बितां प्रविद्यतां नित्यमृगानन्दनम् ॥
सर्वाब्जानिमिषारपदं स्मृतिगतं तापापदं धीमना - सर्वस्वीर्धमपूर्ध्वभक्षयन्निदं वाधरथा धारये ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं परमत्राणे अनन्तानन्दज्ञानरुक्तये वरुं निर्वपामीति स्वाहा ॥

गन्धशान्दगन्धवन्धुत्तरौ यद्विबग्देशोद्भवो, गन्धर्षीद्यपरस्तुनो विजयतो गन्धारारं स्वर्गतः ।
गन्धादीनखिद्याननैति विभक्तं गन्धादिस्तुतोऽपि य-स्तं गन्धाद्यगन्धसाम्राज्यतथै गन्धेन संपूजये ॥

ॐ ह्रीं परममजमौगन्धयवधुगाय गन्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

इन्द्रादीन्द्रसमर्थितेणसुपमंदिव्यैर्नलक्षाक्षतैः, यस्य शी पद्मस्रखेन्दुपविधे लक्षत्रजालायितम् ।
ज्ञानं यस्य लक्ष्मक्षसक्षरमश्रुदीर्यं सुखं दर्शनम्, याम्पडमक्षरसम्पदे जिनमिदं सुहृत्साक्षरैरक्षतैः ॥

ॐ ह्रीं परमत्राणे अक्षयफलप्रदाय अक्षरं निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्य द्वादशयोजने सदसि अद्गन्धाभिः श्वोपपा-अप्यर्थान्मुसुमनो गणान्मुसुमनसो वषति विषवदसदा ।
यः शिद्धिं सुमतः सुखं सुमनसां र्थं धयायतामायष्टे - तं देवं सुमनोसुखैश्च सुमनोभेदः समस्यर्चये ॥

ॐ ह्रीं परमत्राणे सुमनःसुखप्रदाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

गह्वयापाधविवर्जितं निरुपक्षं स्यात्सोत्थमत्पूजितं, नित्यानन्दसुखेन तेन लभते यस्तुशिवात्थंतिकीम् ।
यं चाराधय सुधाशिनो ननु सुधास्वादं लभंते चिरम्, तस्योद्यद्द्रसचारुणैव चरुणा श्रीपादसाराधये ॥

ॐ ह्रीं परमत्राणे अनन्तानन्दसुखसंप्रदाय वरुं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वस्थान्यस्य सहप्रकाशविधौ दीपोपमोऽप्यन्वहं, यः सर्वं उबलघनन्तकिरणैस्त्रैलोक्यदीपोस्तथतः ।
येनोद्दीपितधर्मतीर्थभवत्सत्थं विभोस्तस्य स-हीप्स्यादीपितदिङ्मुखस्य चरणौ दीपैः समुद्दीपये ॥

ॐ ह्रीं परमत्राणे अनन्तदर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

येनेदं भुवनत्रयं चिरमभूदुद्भूतित सोप्यहो, मोहो येन सुधूपितो निजमहोद्ययानामिना निर्दयम् ।

यस्यास्थानपदस्थधूपघटजैर्धर्मैर्जगद्वेषितम्, धूपैश्चतस्र जगद्रशीकरणमद्रूपैः पदं धूपये ॥

ॐ ह्रीं पद्मब्रह्मणे वस्त्रीकृतत्रलोकनाथाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

यद्रूपतया फलदायि पुण्यमुद्धित पुण्यं नचं वध्यते, पापं नैव फलप्रदं किमपि नो पापं नचं प्राप्यते ।
आर्हन्त्यं फलवद्भुनं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते, पादौ तस्य फलोत्तमादिमुफलैः श्रयः पदायार्चये ॥

ॐ ह्रीं पद्मब्रह्मणे अर्षोष्टकप्रदाय फले निर्वपामीति स्वाहा ।

मंगं लाति मलं च गालयनि यन्मुख्यं ततो मंगलं, देवो हेन्वृषमंगलोऽभिविद्युतैस्तेभंगलैः साधुभिः ।
चञ्चच्चाप्सरतालवृन्तसुखैर्मुख्येनरेभंगले-मुख्यं मङ्गलमिच्छुगुणान्स्वप्नप्लुसारार्ध्यते ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ऐं अं वाँ इत इदं अरुलमंगलद्रव्याजेनं गृह्णोर्ध्वं नमः परम मंगलेभ्यः स्वाहा ।

यदा मंगलद्रव्योर्भेसे किञ्चको लेभर उतारे व रक्खे ।

उच्चलितमकलौकालोकलोकोत्तरश्री-कलितललितभूर्ते कीर्तितेन्द्रैर्जुनीन्द्रैः ।

जिनवर तथा पादोपासनतः पातयाश्रः, अबद्वशमनार्थार्थार्थनतः शांतिधायाम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं ह्रीं ऐं अं वाँ इत इदं शांतिधारा गृह्णीध्वं २ अहं नमः भद्रं भवतु जगता शांतिधारां निःपातयामि शांतिकरभ्यः स्वाहा ।

यदा जलकी तोन धारा देने ।

पुष्पेबोरिषचो वधं पुनरिष्ट पुष्पेषु निःशेषकम्, निषपीतानि मधुत्रनैर्घशिटं निषयापरशैस्त्रिणाम् ।

इत्यालोच्य नमस्कृत्यपरस्य अर्द्धमित्याजाकयनीकृते, निषपीत। खिलनत्यपादकमले पुष्पाणि निःपातये ॥

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ऐं अं वाँ इत इदं पुष्पाजलि रार्चनं गृह्णीध्वं २ नमोऽइन्द्रेभ्यो ध्यातृभिर्भोग्घतकन्देभ्यः स्वाहा ।

यदा पुष्पोकी ३ झली देवे । फिर मण्डकमे स्थापित २ ५ जन्म तिथियोंको स्मरण कर २ ४ तीर्थकाकी पूजा करे ।

स्थापना गीताछन्द ।

जिन नाथ चौदिस चरण पूजा करत ह्य रसगाय, जग जन्म लेके जग उधारी जजै ह्य चित लाय ।
तिल जन्म कल्याणक सु उतनच उन्द्र आय सुकीन, एत हूँ सुभर ता अन्नको पूजन किये शुनि कीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीं ऋषभादि महावीरपर्यत चतुर्विंशतितीर्थकराः जन्मकल्याणकप्राप्ताः अत्र भवत २ ध्रौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम चनिहितो भव भव वषट् चनिधोकरणम् ।

छन्द वाली-जल निर्मल धार कटोरी, पूजूं जिन निज करजोड़ी । पद पूजन करहुँ धनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यतचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो जन्मजामृद्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

- मन्दन केशरमय लाजं, भवकी आताप शमाजं । पद पूजन करहुँ बनार्है, जासै भवजल तरजार्है ॥
 ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रप्तेभ्यो संभारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
 नक्षत्र शुभ भोकर लाजं, अक्षय गुणको झलकाज । पद पूजन करहुँ बनार्है, जासै भवजल तर जार्है ॥
 ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रप्तेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अश्वत्थं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सुन्दर सुन्दरि तुनि लाजं, निज काम व्यथा हटवाजं । पद पूजन करहुँ बनार्है, जासै भवजल तर जार्है ॥
 ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रप्तेभ्यो कामवाणविध्वशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
 परवान मधुर शुचि लाजं हनि रोग क्षुधा सुख पाजं । पद पूजन करहुँ बनार्है, जासै भवजल तर जार्है ॥
 ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रप्तेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय चरु निर्वपामीति स्वाहा ।
 दीपक नन्दे उजियारा, निज मोह निमिर निवार । पद पूजन करहुँ बनार्है, जासै भवजल तर जार्है ॥
 ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रप्तेभ्यो महा-धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 धूपचन धूप खिवाजं, निज अष्ट फारख जलवाजं । पद पूजन करहुँ बनार्है, जासै भवजल तर जार्है ॥
 ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रप्तेभ्यो अष्ट-अमृतहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 फल उत्तम उत्तम लाजं, शिवफल जासै उपजाजं । पद पूजन करहुँ बनार्है, जासै भवजल तर जार्है ॥
 ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रप्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 सब आठों द्रव्य भिलाजं, में आठों गुण झलकाजं । पद पूजन करहुँ बनार्है, जासै भवजल तर जार्है ॥
 ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्रप्तेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येकके २४ अर्घ ।

- बदि चैन नपसि शुभ गार्है, अरुदेवि जने हरषार्है । श्री रिष अनाथ युग आदी । पूजूं भव मेठ अनादी ॥
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण नवम्यां श्री वृषप्रनाथजिनेद्राय जन्मकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वप माति स्वाहा । (१)
 दसमी शुभ साध बदीकी, विजया माता जिनजीकी । उपजे श्री अजित जिनेशा, पूजूं मेठो सब क्लेशा ।
 ॐ ह्रीं माघवती दशम्यां श्री अजितनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२)
 कातिक सुदि पुरणमाली, माता सुसैन हुल्लासी । श्री सम्भवनाथ प्रकाशे, पूजत आया पर माशे ॥
 ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ला पूर्णमास्यां श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (३)
 शुभ चौदस माघ सुदीकी, अभिनन्दननाथ विवेकी । उपजे सिद्धार्थी माता, पूजूं पाजं सुख साता ॥

- ॐ हीं माघशुक्ला चतुर्दश्यां श्री अभिरामन्दननाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (४)
 ग्यारस है चैत सुदीकी, मंगला माता जिनजीकी । श्री सुमति जने सुखदाई, पूजूं मैं अर्घं बढ़ाई ।
 ॐ हीं चैत्र शुक्ला एकादश्यां श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (५)
 कातिक बदि तेरसि जानो, श्री पद्मप्रभू उपजानो । हे मात सुसीमा ताकी, पूजूं ले रुचि समताकी ॥
 ॐ हीं कार्तिक कृष्णा त्रयोदश्यां श्री पद्मप्रभूजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६)
 शुचि द्वादश जेठ सुदीकी, पृथ्वी माता जिनजीकी, जिननाथ सुपारस जाए, पूजूं हम मन हरबाए ॥
 ॐ हीं वषेष्ठ शुक्ला द्वादश्यां श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (७)
 शुभ पूस बदी ग्यारसको, है जन्म चन्द्रप्रभु जिनको । धन्य मात सुलखनारैषी, पूजूं जिनको मुनिसेषी ॥
 ॐ हीं पौष कृष्णा एकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (८)
 अगहन सुदि एरुम जाना, जिन मात रमा सुख खाना । श्री पुष्पवंत उपजाए, पूजतहुं ध्यान लगाए ॥
 ॐ हीं अगहनशुक्ला एक श्रीपुष्पवंत जिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (९)
 द्वादश बदि माघ सुहानी, नंदा माता सुखदानी । श्री शीतल जिन उपजाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥
 ॐ हीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा (१०)
 फाल्गुन बदि ग्यारस नीकी, जननी विमला जिनजीकी । श्रेयांसनाथ उपजाए, हम पूजत हीं सुख पाए ॥
 ॐ हीं फाल्गुनकृष्णा दशम्यां श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (११)
 बदि फाल्गुन चौबसि जाना, विजया माता सुख खाना । श्री वासुपुत्र्य भगवाना, पूजूं पारुं जिन ज्ञाना ॥
 ॐ हीं फाल्गुन कृष्णा चतुर्दश्यां श्रीवासुपुत्र्यजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)
 शुभ द्वादश माघ बदीकी, श्यामा माता जिनजीकी । श्री विमलनाथ उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए ॥
 ॐ हीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा (१३)
 द्वादशि बदि जेठ प्रमाणी, सुरजा माता सुखदानी । जिननाथ अनन्त सुजाए, पूजत हम नारिं अघाए ॥
 ॐ हीं वषेष्ठ कृष्णा द्वादश्यां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)
 तेरसि सुदि माघ महीना, श्रीधर्मनाथ अघ छीना । माया सुव्रता उपजाये, हम पूजत ज्ञान बढ़ाए ॥
 ॐ हीं माघ शुक्ला त्रयोदश्यां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रसाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)
 बदि चौबस जेठ सुहानी, पराषैषी गुन खानी, श्रीशांति जने सुख पाए, हम पूजत प्रेम बढ़ाए ॥

- ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्दश्या श्रीशालिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)
 पद्मिनी वैशाख सुदीकी, छद्मदीपति माता नीकी । श्रीकुन्धनाथ उपजाए, पूजत हम अर्घं बढ़ाए ॥
 ॐ ह्रीं वैशाख शुक्रा एकं श्रीकुन्धनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)
 अगहन सुदि चौदस मानी, मित्रादेवी हरषानी । अरि तीर्थर उपजाए, पूजे हम मन बध काए ॥
 ॐ ह्रीं अगहन शुक्रा चतुर्दश्या श्रीअरितीर्थकाराय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)
 अगहन सुदि ग्यारस आए, श्रीमल्लिनाथ उपजाए । है मात प्रजापति प्यारी, पूजत अघ बिनशै भारी ॥
 ॐ ह्रीं अगहन शुक्रा एकादश्या श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अघ निवपामीति स्वाहा । (१९)
 दशमी वैसाख वदीकी, श्यामा माता जिनजीकी । सुनिसुव्रत जिन उपजाए, हम पूजत पाप नशाए ॥
 ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा दशम्या श्रीसुव्रतजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)
 दशमी आषाढ वदीकी, विपुला माता जिनजीका । नमि तीर्थर उपजाए पूजत हम ध्यान लगाए ॥
 ॐ ह्रीं आषाढ कृष्णा दशम्या श्रीनमिजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)
 आषण शुक्ला छठि जानो, उपजे जिननेमि प्रमाणो । जननी सु शिवा जिनजीकी, हम पूजत है थल शिवकी ॥
 ॐ ह्रीं आषण शुक्रा षष्ठ्या श्रीनेमनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)
 षदि पूष चतुर्दशि जानी, वामादेवी हरषानी । जिन पार्थ्व जने गुणखानी, पूजे हम नाग निशानी ॥
 ॐ ह्रीं पूष कृष्णा चतुर्दश्या श्रीपार्थ्वजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)
 शुभ चैत्र प्रयोदश शुक्ला, माता गुणखानी त्रिशला । श्रीवर्द्धमान जिन जाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥
 ॐ ह्रीं चैत्र शुक्रा त्रयोदश्या श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्रदाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

जयमाल ।

मुञ्जप्रयात—नमो जै नमो जै जिनेशा, तुम्हीं ज्ञान सूरज तुम्हीं शिव प्रवेशा ।
 तुम्हें दर्श करके महामोह भाजे, तुम्हें पर्श करके सकल ताप भाजे ॥ १ ॥
 तुम्हें ध्यानमें धारते जो गिराई, परम आत्म अनुभव छटा सार पाई ।
 तुम्हें पूजते नित्य इन्द्रादि देवा, लई पुण्य अद्भुत परम ज्ञान मेवा ॥ २ ॥
 तुम्हारी जनम तीन भू कुल निवारी, महामोह मिथ्यात हियसे निकारी ।

तुम्ही तीन बोध धरे, जन्महीसे, तुम्हें दर्शनं क्षायिकं जन्महीसे ॥ ३ ॥
 तुम्हें आत्मदर्शन रहे जन्महीसे, तुम्हें तत्त्व बोधं रहे जन्महीसे ।
 तुम्हारा महापुण्य आश्चर्यकारी, सु महिमा तुम्हारी सदा पापहारी ॥ ४ ॥
 करा शुभ न्हवन क्षीरसागर सु जलसे, मिठी कालिमा पापकी अंग परसे ।
 दुष्ठा जन्म सफलं करी सेव सेवा, लहूँ पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ॥ ५ ॥

दोहा—भीजिन चौबीस जन्मकी, महिमा उरमें धार । पूज करत पातक टलें, बड़े ज्ञान अधिकार ।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनेभ्यो जन्मकल्याणकप्रप्तिभ्यो महाअर्घं निर्वपामीति स्वाहा । फिर इन्द्र ऊर जाता है और भगवानका नाम व चिह्न प्रगट करता है । चरणको स्पर्शकर यह मंत्र पढ़कर पुण्य भगवानपर क्षेपण करता है—

ॐ ह्रीं इक्ष्वाकुले नामिभूपतेर्मरुदेव्यामुपनस्रस्यादिदेववुरुषस्य ऋषभदेवस्वामिनोऽन्नविम्बे वृषभांकित्वात् तद्गुणस्थापनं तेजोमयं करोमि स्वाहा । ॐ अयं महानुभावः परमेश्वरो वृषभेश्वरो भवतु ।

फिर नीचे बिल्वे मंत्रको पढ़ते हुए इन्द्र अंग स्पर्श व पुष्प प्रसुर डाले । (मंत्रको आचार्य पढ़ सकता है नीचेसे ।)

ॐ ऋषभादिदिव्यदेहाय षडोजाताय महाप्राज्ञाय अनन्तचतुष्टयाय परमसुख प्रतिष्ठिताय निर्मलाय स्वयंभुषे अजरामरपदप्राप्ताय चतुर्मुखापरमेष्ठिनेऽर्हते त्रैलोक्यनाथाय त्रलोक्यपूज्याय अष्टदिव्यनागप्रपूजिताय देवाधिदेवाय परमार्थबंनिहितोऽचि स्वाहा ।

(१) ॐ अस्मिन्विम्बे निःस्वदेत्स्वगुणो विलसतु स्वाहा । (२) ॐ अस्मिन्विम्बे मकरहितस्वगुणो विलसतु स्वाहा । (३) ॐ अस्मिन्विम्बे क्षीरवर्णरुधिरतस्वगुणो विलसतु स्वाहा । (४) ॐ अस्मिन्विम्बे समचतुरत्रसंस्थानगुणो विलसतु स्वाहा । (५) ॐ अस्मिन्विम्बे वप्रवृषभनाराचगुणो विलसतु स्वाहा । (६) ॐ अस्मिन्विम्बे अद्भुतरूपगुणो विलसतु स्वाहा । (७) ॐ अस्मिन्विम्बे सुगंधशरीरगुणो विलसतु स्वाहा । (८) ॐ अस्मिन्विम्बे अष्टोत्तरसहस्रलक्षणव्यजनस्वगुण। विलसतु स्वाहा । (९) ॐ अस्मिन्विम्बे अतुलवीर्यस्वगुणो विलसतु स्वाहा । (१०) ॐ अस्मिन्विम्बे हितमितप्रियवचनस्वगुणो विलसतु स्वाहा ।

यहां आचार्य जबको कहे कि नाम व चिह्न यह प्रगट किया गया व दश अतिशय जन्म सम्बन्धी समझाये व कहे कि इनका स्थापन इन्हीं विंश किया गया । फिर आचार्य नीचेके मंत्रोंको पढता जाधि । इन्द्र अंग स्पर्श व पुष्प मूर्तिपर क्षेपे ।

(१) ॐ अर्हद्भ्यो नमः, (२) ॐ नवकेवळविम्बो नमः, (३) ॐ क्षीरस्वादुल्लविम्बो नमः, (४) ॐ मधुरस्वादुल्लविम्बो नमः, (५) ॐ धूम्रिश्रोतुभ्यो नमः, (६) ॐ पादानुषारिभ्यो नमः, (७) ॐ कोष्ठद्वेभ्यो नमः, (८) ॐ बीजद्विभ्यो नमः, (९) ॐ पृथिवीभ्यो नमः, (१०) ॐ परमावधिभ्यो नमः, (११) ॐ ह्रीं वरुणवल्गुनिवल्गुश्रवणे (१२) ॐ ऋषभादिबधेमानतिभ्यो ऋषद्रूषट् स्वाहा । (१३) ॐ णमोभयवदो बहुमाणस्व रिषहस्व जस्व चक जलत गच्छई आयाव पायाल लोयाणं भूयाणं जूप वा विवादे वा रंगयणे वा घाभणे वा माहणे वा षव्यजीवत्ताणं अपराजिदो भवदुःखकस्व स्वाहा ।

ऊपर लिखित वर्तमान मंत्र कहलयाता है। इसप्रकार आकाराशुद्धि करे। व नीचे प्रकार श्लोक पढ़कर विघर्जन करें।

शाननोऽज्ञानतो वापि, शास्त्रोक्तं न कुतं मया। तत्सर्वं पूर्णसिवास्तु, तत्सत्त्वात्वाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥

आह्वानं नैव जानामि, नैव जानामि पूजनम्। तिस्रर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥

अंत्रहीनं क्रियाहीनं, द्रव्यहीनं तथैव च। तत्सर्वं क्षम्यतां देव, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥

आह्वाना ये पूरा देवा लक्ष्मणा यथाक्रमम्। ते जयाशुप्रचिता अन्तर्या सुर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥४॥

फिर जाज्ञा करे—हे इन्द्रादिदेवो! जिनतरह श्री तीर्थंकर महाराजको लाए थे उसी तरह छेजाकर मातापिताकी गोदमें अर्पण कर व उन्हें भक्तिद्वारा प्रह्नकर हम वचको पुण्य कमाना योग्य है। आज्ञा कानेके पीछे आचार्य व इंद्रादि पूजा समयके पात्र मेरुकी तीन प्रदक्षिणा कोई स्तुति पढ़ते हुए देवें। फिर भगवानको इन्द्र उठाये। पूर्वके समान ऐरावत हाथीपर इन्द्रादि बैठें और जय जय शब्द हों और बाले वें। जुलूस १ घंटेके भीतर भीतर मंडपमें आजावें।

(४) राज्यांगणमें भगवानका पधारना और मात पिताको अर्पण व नृत्य—मंडपमें बैठनेका अक्षेप ठिकठोद्वारा रहे। जुलूस पट्टनेपर इन्द्र इन्द्राणी थोड़ेसे और इन्द्रो व देवोंके साथ मंडपमें आवें। इसके पछे ही दूरे चतुरेपर महाराज नाभिराज एक बिहारा-वनपर बैठे हों। दूरे एक बिहारावनपर माता मरुदेवी निद्रित दशमें बहारेसे बैठी हो, पात्रमें बखसे लिपटा नारियल रक्सा हो, कुछ बभाषद भी हो तथा माता पिताके बीचमें ऊंचा बिहारावन भगवानके बैठनेका हो, परदा उठे। इन्द्र गोदमें तीर्थंकर भगवानको लिये हुए आवे और बिहारावनपर विराजमान करे तब यह मंत्र पढ़े—

ॐ नमोऽर्हते केवलिते परमयोगिने अनंतविशुद्धपरिणामपरिसुरच्छुद्ध्यानाग्निनिर्दग्धकर्मवीजाय प्रासानंतचतुष्टयाय बौभाग्यशंताय मंगलाय वरदाय अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा।

तब सब बैठ जावें। इन्द्राणी उठकर माताके पात्र आवे और हाथ फेरदे, मायामयी निद्रा हटाये, तब नारियलको उठाके। तब माता आभयमें बठ खड़ी हो। माता पिता दोनों खड़े हो तीर्थंकरकी छबिको देख देखकर प्रबन्ध हों और फिर बैठ जावें। तब इन्द्र उठे और माता पिताके आगे बजाभूषणकी भेट रक्खे। दो पात्र उठ व समय आजावें। एक पात्र माताके व १ पिताके आगे रक्खे और पुण्योकी सुगंधित माळा पिताके गलेमें पहराये और उसकी स्तुति करे—

चौपाई—धन्य धन्य तुम लोक मंत्रारा, तुमरो सफल जन्म संसारा।
तीन जगत गुरु तुम उपजाये, यातें जगत पूज्य ठहराए ॥ १ ॥
तुम उदयावल पर्वत मानो, पूर्वदिशा देवी मरु जानो।
भानु समान प्रभू प्रगटाए, मोह स्वांत हर लोक मिटाए ॥ २ ॥

प्रह तुमरा जिनमंदिर सारा, पूष्यनीय त्रिसुवन सुखकारा ।

तुम दोनों हो शिष अधिकारी, यातें पूजनीय हरबारी ॥ ३ ॥

ऐसी स्तुति करके इन्द्र भगवानको उठाकर माताकी गोदमें देता है, माता उठकर उठती है और विनय सहित बैठ जाती है और बारबार प्रभुको निरखती है । उषर प्रतिष्ठाचार्य अन्य प्रतिमाओंको थोड़े जलसे अभिषेक कर पोलकर केशर चन्दनका लेप करके यह कहते जाते हैं—“ अस्मिन् विन्वे जन्मकल्याणकं आरोपयामि स्वाहा ” और हरएकको ब्रह्माभूषणोंसे वज्रित करते हैं । हरएक मूर्तिके लिये अलग-२ ब्रह्माभूषण होने चाहिये और फिर “ दश अतिशयाकार शुद्धि नाम (यहाँ जो नामका चिह्न हो वह उकेर) आदिकम् आरोपयामि स्वाहा ” ऐसा कहकर हरएक मूर्तिपर पुष्प डाले । और नमस्कार करे । इषर इन्द्र फिर ठठे और किष तरह मेरुपर न्हवन हुआ था उसे कहे तथा भगवानके पूर्वजन्मके ९ भवोंका रक्षेपसे वर्णन करे वो रतुतिरूप गानके साथ बड़े भावसे कहे—

चौपाई—इम देवन सह मेरु पधारे, पांडुकवनमें आन सिधारे ।

पांडुक शिला महा शुचि रूपा, थाप्यो प्रभुको आनन्द रूपा ॥ १ ॥

क्षीरोदधिसे कलश मंगाए, स्वर्णमई जल भर सुर लाए ।

श्रीजिनेन्द्र अभिषेक सु कीना, जन्म सफल हमने कर लीना ॥ २ ॥

शाची ब्रह्म आभूषण धारे, पूज प्रभुको यहां पधारे ।

धन्य जीव श्रीआदि जिनेशा, सुक्तिनाथ तीर्थकर भेषा ॥ ३ ॥

यह संसार महान् अपारा, आदि अन्त विन रहत करारा ।

यामें जीव कर्मवश घूमें, विन सम्यक्त स्वधर्म न चूमें ॥ ४ ॥

भव अनंत यह जीव धरे है, अमल अमल नहिं अंत करे है ।

जीव नाथका अमण करे था, पुण्य उदयसे दुःख हरे था ॥ ५ ॥

इक भय लिया विदेह संझारा, विद्याधर नृप पुत्र कुलारा ।

नाम सहायल राज्य सु कोना, जैनधर्ममें हठ चित बोना ॥ ६ ॥

अंत समाधि धार तन त्यागा, द्वितिय स्वर्ग उपजा शुभ आंगा ।

देव नाम ललितान्ग सुपाया, स्वयंभवादेवी जन भाया ॥ ७ ॥

राष्ट्रते चय विदेह उपजाया, वज्रजंघ नृप हो सुख पाया ।

स्वयंप्रभा भी तहं उपजाई, नारि श्रीमती नृपके भाई ॥ ८ ॥

दोनोनि सुनि दान सु दीना, उत्तम भोगभूमि सुख लीना ।
 तहं चारन सुनि आ उपदेशा, धर्म जिनेश्वर हत रति द्वेषा ॥ ९ ॥
 सुनत ग्रहण दोनोनि कीना, सम्यग्रहणी हुए प्रबीणा ।
 द्वितीय स्वर्गमें श्रीधर देवा, द्वितीय स्वयंप्रभ अद्भुत देवा ॥ १० ॥
 श्रीधर धर्मध्यान तहं कीना, चयकर जन्म विदेह सु लीना ।
 राजपुत्र हो सुविधि दयाला, आषक ग्यारह प्रतिमा पाला ॥ ११ ॥
 अंतिम साधु महाव्रत धारे, और समाधिमरण सुखकारे ।
 प्राणत्याग सोलम दिवि आए, अच्युतेंद्र होकर सुख पाए ॥ १२ ॥
 तहंसे चय विदेह उपजाये, बज्रनाभि सम्राट सुहाए ।
 चक्रवर्ति सावे छः खंडा, राज्य कियो सु न्याय घृष खंडा ॥ १३ ॥
 धारे सुनिव्रत तप बहू कीना, आत्म ध्यान कर्म कृष कीना ।
 सोलहकारण भाब सुध्याए, तीर्थकर शुभ कर्म बंधाए ॥ १४ ॥
 उपशमश्रेणीसे तन त्यागा, चौथे गुणथानकमें लागा ।
 सर्षारथसिद्धी उपजाए, तेलिस सागर आयू पाए ॥ १५ ॥
 तहं भी धर्म भाव चित लाए, पुण्य उदय या नगरी आए ।
 धन श्री रिषभ वृषभ शुभ अंका, तुम टालत भव भ्रम आंतका ॥ १६ ॥
 हम दर्शनसे जो सुख पाया, बचन अगोचर जात न गाया ।
 धन्य पिताश्री नाभि सुराजा, मरुदेवी माता हित काजा ॥ १७ ॥
 देव जनम हम अब सफलाया, तुम सेवन कर पाप हटाया ।
 चिर जीवो श्री आदि कुमारा, धमतीर्थका करहु प्रचारा ॥ १८ ॥

इषतरह स्तुति पढ़े । यदि इन्द्र नृत्य जानता हो तो करे अन्यथा ब्रह्ममें कोई इन्द्र प्रमान नृत्य व भजन १५ मिनटके लिये करे,
 एव वभा सुने, इन्द्र भी बैठ जावे । फिा इन्द्र बैठे । उनी समय कामसे काम पांच देव मुकुटधारी छोटी वयके बालक ८-९ भावे ।

इन्द्र भगवानके अंगूठेमें अमृत समान दूध लगावे और यह मंत्र पढ़े “ ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकारांगुष्ठे अमृतं स्थापयामि स्वाहा ” और उन पांच देवोंको आज्ञा करे—“ हे देवों ! तुम तीर्थंकारकी बलीभक्ति सेवा करना और पुण्य कमाकर जन्म प्रफल करना । तब वे देव कहें—हम आपकी आपकी आज्ञा बना लाएंगे, प्रसुकी सेवाकर पुण्य कमाएंगे । फिर इन्द्र भगवानको उठाता है तब सब सभा खड़ी हो जाती है, माता पिता भी खड़े हो जाते हैं और सब कोई पुण्योंकी व चांदी सोनेके झूलोंकी वर्षा प्रसुके ऊपर करते हैं । पहले चबूतरेके बाहर जो परदा पड़ा था वह उठता है, इधर उधरके परदे उठ जाते हैं तथा मूलवेदीके बगलमें जो राज्यमहल बना था वहां बिहावनपर प्रसुकी विराजमान कर देता है । उस समय इन्द्र पहले लिखा मंत्र पढ़ता है—“ ॐ नमः ऽइते अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा ” नमस्कार करता है और लौटने लगता है, इतनेमें बाहरका परदा गिरता है । जन्मकल्याणको सब पूर्ण होता है, सब अपने-अपने स्थानपर जाते हैं, आहार पान करते हैं । यद्यत्क क्रिया पूर्ण करके ही भोजन करना उचित है । इस सब क्रियाको लगातार ही करना चाहिये । सबेरेसे दो बजे दोपहर तक हो सकती है ।



अध्याय पांचवां

गृही जीवन ।

(१) दौलतारूप क्रीड़ाका उत्सव—रात्रिको मंडपमें दौलना क्रीड़ा की जावे । दूबरे चबूतरेपर झूठा सुन्दर लगाया जावे उसमें हिंदोलो बंजोया जावे, उसपर प्रसुको बखामूषण बहित, मुकुट बहित विराजमान किया जावे । आठ देवियां हाजिर हों आठ दिशाओंमें खड़ी हों । उनमेंसे पीछेके कोनेकी दो दोनों तरफ चमर ढारे । पांच कुमारदेवोंको जिनको इन्द्रने नियत किया था हिंडोलके पीछे खड़ा कर दिया जावे । माता खड़ी २ भगवानको झुकाती हो, सामने एक टेबुलपर रुपयोंकी भेटके लिये बड़ा थाल रखा हो, कोनेमें एक भाई दातारोंके नाम लिखनेवाला बैठा हो । सब सामान सज जावे तथा परदा उठाया जावे । उस समय जयजयकार शब्द हो । प्रथम ही इन्द्राणी कई देवियोंके साथ दो थालोंमें बत्ताभूषणादि बनाकर लावे व हाथमें अशरफी व रुपया लावे और सभामें आकर वे दोनों थाल भेटरूप बगलमें रखे तथा प्रणाम करके स्तुति पढ़ें—

चौपाई—जय जय नाथ दरश तुम पाए, तुम सहिमा धरणी नहिं जाए ।

तुम अपार सुन्दरता धारी, काम जीत जगजन मनहारी ॥ १ ॥

तुम त्रिशानधारी परशेशा, देखत तुम्ह मिटे भव क्लेशा ।

हम आतुर अहंणति संसारा, तुमहि दुःख भेटन शक्तिकारा ॥ २ ॥

तुम जग मोह तिमिर निर्धारो, सब हम यमसे सब अघ टारो ।

धन्य मात तुझ पुण्य अपारा, तीर्थंकर सुत तब जगप्यारा ॥ ३ ॥

ऐसी स्तुतिकर मोहर या रूपया रत्न भेटरूप थालमें डारकर हिंदोला हिलावे और फिर नमस्कार कर विनय सहित देवियोंके साथ लौट आवे । नोट-इस समय जो आमदनी थालमें आवे वह सब प्रतिष्ठाके खर्चमें लगाई जावे ।

फिर नर नारियां आकर भगवानकी सुलावे । इसका प्रबन्ध ऐसा किया जावे कि १० टिकट खास बनाए जावें । १ दफे पांच पुरुष नम्बरवार फिर पांच स्त्रियां नम्बरवार छोड़ी जावें । ये नम्बरवार जावें । रुपया आदि थालमें भेटकर प्रभुको सुलावे । नमस्कार कर लौट आवें । आधी मिनटसे अधिक कोई न सुलावे, जब पाच लौट आवे व टिकट वापिस आजाने तब फिर पांचको भेना जावे । इसतरह नम्बरवार स्त्री-पुरुष दोनों आते जाते रहे । मंडपमें बैठे लोग जय जय शब्द कहें तथा धामने भगवानके धामने भजन गान नृत्य मनोहर होता रहे । जब सब भेट देखेंके व अपना मनभर भगवानकी सुला चुके तब परदा ढाल दिया जावे । भीतर भगवानको राज्यमहलकी धेदीपर बस सहित विराजमान किया जावे ।

(२) तीर्थंकरको राज्याभियेक—जन्मकल्याणकके दूबरे दिन सबेरे आचार्य इन्द्र आदि सहित सबेरे ही मंडपमें जन्मकल्याणकके दिनकी भांति एकलीकरण, अभियेक व नित्यपूजा सिद्धपूजा तथा होम करे । फिर पहले चबूतरे पर परदा डाला जावे । दूबरे चबूतरे पर राजधमाकी रचना की जावे । बीचमें बैठनेका आसन हो । उसके पाष ही नाभिराजाका आसन हो, कुछ सभापद कायदेसे बैठे हों । अभियेक व पूजाका प्रबन्ध हो व भगवानकी राजयोग बल व खड्ग आदि शस्त्र देनेका प्रबन्ध हो । परदा लठे तब सब इन्द्र प्रत्येन्द्र व आचार्य आवें, आठ मंगलद्रव्य स्थापित हों । इन्द्र महाराज नाभिकी मस्तक झुकाकर नमन करे व स्तुति करे ।

दोहा—श्री तीर्थंकर राज्यपद, देनेका उत्साह । किया आपने नाभिजी, है यह उत्तम राह ।
प्रभु समर्थ पालन प्रजा, न्याय मार्गमें धाज । राज्यार्पणकी सकल विधि, करना है सुखसाज ।

तब नाभिराज कहते हैं—

दोहा—राज्यतिलक धर्पण विधि, कीजे हे दिविराज । होय सुखी सारी प्रजा, होय अटल यह राज ।

आज्ञा पाते ही इन्द्र भीतर जाकर प्रभुको राज्यमहलसे लाते हैं तब सब खड़े होते हैं, जयजयकार शब्द होते हैं, पुष्पोंकी वर्षा होती है । बीचमें न्हवनका आसन विराजमान कर उसपर प्रभुको स्थापित करता है । ब्रह्माभूषण अलग उतारकर रखता है । इतनेहीमें दूबरे इन्द्र तथा आठ देवीकन्याएं सुन्दर कलशोंकी जलसे भरे हुए पुष्पमालासे शोभित व कमल या नारियलसे ढंके हुए व केशरका धारिया बना हुआ अपने दोनों हाथोंपर धरे हुए लाते हैं । धामने गीत व नृत्य होता है । बाहर खूब बाजे बजते हैं । ये सब इन्द्र और देवियां एक साथ गाती हैं—

गीताहंद—शचिनाथ हम जल शुद्ध लाए, क्षीरसागरसे भला ।

गंगा महा नद सिंधु आदी, कुंड गंगासे भला ।

शुचि दीप नन्दी वापिका सागर स्वयंभूसे भला ।

अभियेक कारण राजपट हो तीर्थनायकके भला ॥

प्रथम ही इन्द्र दाय उप्त करके अभियेक करे । अभियेक जयतक होता रहे आचार्य पढ़ते रहे ' अंहीं श्री तीर्थराजस्य राज्याभियेक करोमि स्वाहा " फिर दूसरे इन्द्र अभियेक वारी वारी करे । फिर नाभिराजा अभियेक करे । फिर दूसरे कुल राजा जो प्रथममें ये अभियेक करें, फिर इन्द्र कैशरादि द्रव्योंसे मिश्रित गंधजलसे अभियेक करे, फिर पुष्पोत्ती वर्षा करे, फिर स्पृच्छ जलसे अभियेक करके भगवानका शरीर पौछकर इन्द्र राज्य आचरण विराजमान करे । गंधोदक प्रथको पूर्ववत् पट्टुवाया जाय तब गंगकआरती मन पात्र मिलकर पढ़ें तथा इन्द्र कपूरदि अलाकर इन्द्रप्रहार आरती करता है—

चौगाई—जय जय तीर्थकर अविकारी । जय जय मुक्तिवधू वर भारी ॥ टेक ॥

जय जय प्रजा न्याय विस्तारी । जय जय अनुपम बल अधिकारी ॥ जय० ॥

जय जय शस्त्र शास्त्रगुण धारी । जय जय धिया-निपुण अपारी ॥ जय० ॥

जय जय पदद्वयें मनु भारी । जय जय जगत करन उद्धारि ॥ जय० ॥

जय जय कर्मभूमि निस्तारी । जय जय धामि जिन भवतारी ॥ जय० ॥

आरती करके फिर इन्द्र वज्र व शस्त्र खड्ग आदिसे गजिन करे । कंठों गुण व रत्नमाला जालें व अस्य आभूषण पहनाने । इतनेहीमें नाभिराज धरते हैं और इसभांति कहकर अपनी गुण्ड धतारकर प्रभूके गस्तकार पारण करते हैं—

दोहा—सर्व राज महाराजके, पालक दीनबन्धाल । तुम ही हो जग पूज्य प्रभु, धृषभदेव जगपाल ॥

फिर इन्द्रने गस्तकार पहनंग भी किया तब मन नेठ जाते हैं । प्रभोंमें नृत्य व गान १५ मिनट तक होता है । तब इन्द्र व देव गिनय बहिन चले जाते हैं । अष्ट देवियां गद्य जाती हैं जो पशुके पीछे खड़ी रहती हैं उनमें दो देवियां जमसे चिह्नाचरण प्रभु नेठे तबहीसे नगर कर रही हैं । अब अनेक राजालोग आकर प्रभुको नेठ पध्दाकर भयङ्कार कर प्रभोंमें नेठ जाते हैं—प्राइके राजा हरि, फिर राजा अकम्पन, फिर काश्यप फिर सोमप्रभ आते हैं । इनके पीछे अनेक राजा जिनके स्थानके नाम आचार्य कहते जाते हैं और भेट धरकर प्रभोंमें नेठते हैं । नोट—जो रुपया भेटमें आते सो प्रतिष्ठाकार्यमें खर्च हो । कुल नाम यहाँ दिये जाते हैं—

(१) जंगदेश, (२) जंगदेश, (३) कलिगदेश, (४) तुलुगदेश, (५) कर्णाटकदेश, (६) पार्यादेश, (७) तंजोरदेश, (८) सिंधुदेश, (९) कन्नड़देश, (१०) गुजरातदेश, (११) मन्नारारदेश, (१२) पंजालदेश, (१३) मालवादेश, (१४) राजपूताना, (१५) नेपालदेश, (१६) भूतानदेश, (१७) मध्यप्रदेश, (१८) सानदेश, (१९) नीगाइदेश, (२०) आसामदेश, (२१) मसदेश, (२२) तिब्बत,

२३) चीनदेश, (२४) श्याम, (२५) जापान, (२६) लष, (२७) प्रौढदेश, (२८) लूमदेश (२९) फारसदेश, (३०) मरुदेश,
 ३१) गीतारदेश, (३२) मिश्रदेश । इत्यादि,

फिर सब जब बैठ जावें तब भगवानकी ओरसे राखनीतिका उपदेश आचार्य व ग्रन्थ काई विद्वान जमाने प्रभाव पड़े
 प तरह कहे—

राजा हरि ! (इतना कहनेपर राजा लड़ा होजावे) आपको भगवान हरिवंशका नायक स्थापित करते हैं । यह हाथ जोड़
 मरतक नशा बैठ जाता है ।

राजा सोमप्रस ! (बह भी उठता है) आपको भगवान कुरुवंशका शिखामणि स्थापित करते हैं । उसी तरह बह भी नमन कर
 बैठ जाता है ।

राजा संकंपस ! (बह भी उठता है) आपको भगवान नाथवंशका अधिपति नियत करते हैं । उसी तरह नमन कर बैठता है ।
 राजा काश्यप ! (बह भी उठता है) आपको भगवान उप्रवंशका शिरोमणि नियत करते हैं । उसी तरह नमस्कार कर बैठता है ।

आजसे भगवान यह नियम करते हैं कि लो शल वारणकर अपने बाहुनलसे प्रजाका रक्षा करनेक वर्ण हैं वे क्षत्रीयवंशी व
 क्षत्रियवर्णवारी कह्छापंगे । जो थक व जलद्वारा अनेक देशोंमें यात्रा करके व्यापार करनेयोग्य हैं वे वैश्यवंशी या वैश्यवर्णवारी कह्छापंगे ।
 जो इन दोनों प्रकारकी योग्यता नहीं रखते हैं तथा सेवा आदि करके व आज्ञा पावन काके आजीविका कानेयोग्य हैं उनको रद्र कहा
 जायगा । भगवान आज तीन वर्णोंकी स्थापना करते हैं । भगवान अधिकर्मके द्वारा क्षत्रियोंके; मधि कृषि, वाणिज्यद्वारा वैश्योंको व
 शिल्प तथा विधाकला द्वारा शूद्रोंको आजीविका कानेजा अधिकार नियत करते हैं तथा यह भी नियम बनाते हैं कि हरएक वर्णवाके
 अपनी २ आजीविका करें तथा विवाहका यह नियम करते हैं कि प्रत्येक वर्णवाके अपने अपने वर्णमें विवाह करें, काम पड़े क्षत्रिय वैश्य
 तथा शूद्रकी और वैश्य शूद्रकी कन्याको विवाह कर सकता है । भगवान अपने आधीन राजाओंको यह आज्ञा करते हैं—

चौपाई—है कृतयुग यह तुम जानो । निज निज कृत्य करो सुख मानो ॥
 आलसभाव न चितमें राखो । परिश्रमी बन सुख अभिलाखो ॥ १ ॥
 सज्जन दुर्जन जन दो भेदा । सज्जन पालहु खल कर सेवा ॥
 प्रजा काहू रक्षा कचि लाई । दुर्जनको नित वण्ड विलाई ॥ २ ॥
 शास्त्र धरण उदेश यही है । प्रजा सुखी हो तसब यही है ॥
 दुष्टनका निग्रह जहं नारी । सुख सन्तोष होय तहं नारी ॥ ३ ॥

गृही नहीं करतव निज पाले । दुखी होय विपता बहु झाले ॥
 दया दुष्टजन नहि अधिकारी । दण्ड विना नहि हों समधारी ॥ ४ ॥
 पृथ्वी यह यह धान्य उपार्थे । वस्तु अनेक और उपजावै ॥
 गोधन कुषि कारण उपकारी । दुग्ध देय पोषन कर भारी ॥ ५ ॥
 धन कण्ठी रक्षा करना है । सर्वदेश तिरपत रखना है ॥
 कर इतना ही लेन विचारी । प्रजा कभी दुखमें नहिं धारो ॥ ६ ॥
 प्रजा सुखी तह राज्य सुखी है । राज्य बही जह कोई न दुखी है ॥
 कर ग्रह विद्या करहु प्रचारा । विद्याधिन नर जगम धरारा ॥ ७ ॥
 पुत्री पुत्र उभय अधिकारी । विद्या कला देहु अति भारी ॥
 करहु स्वाभ्यर्क्षा जगजनकी । रोग शोग नहिं बाधा तनकी ॥ ८ ॥
 प्रजा पुत्रसम पालहु ज्ञाता । दीन अनाथ करहु नित साता ।
 सदा ध्यान रखिये भूराजा । प्रजा होय सुख शान्ति समाजा ॥ ९ ॥
 शिल्प कलासे वस्तु बनाओ । देश देश भेजो धन लाओ ॥
 जहाँ वाण्ड्य तहाँ धन आवै । धन जिस देश वही सुख पावै ॥ १० ॥
 जीवन सादा शुद्ध विनाओ । विषय मोहमें तन न गझाओ ॥
 इन्द्रियभोग न्यायसे कीजे । जासे बल तन हुति नहिं छीजे ॥ ११ ॥
 है सन्तोष परम सुखकारी । परधनकी इच्छा दुखकारा ॥
 निज तिय सम्पतिमें सुख मानो । पर तिय पर सम्पति पर जानो ॥ १२ ॥
 सन्नया वृथा कबहीं नहिं डालो । समय असूत्य जान तन पालो ॥
 होय सुखी नर नारि सदा ही । यह प्रयत्न करिये गुणग्राही ॥ १३ ॥
 फिर धन खड़े होजावे (नाभिराजा तो राज्य देकर पहेले ही चले गए थे) और 'तुति पदे । परदा गिरे-
 छन्द—जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी । धन्य यह समय मदान सुख निधान साधजी ॥
 दीनबंधु हो दयालु जगत पाल कीजिये । दुःख ह्वेश शोग भेट तुपत नाथ कीजिये ॥ १ ॥

राज्य गृह महान आपका परम प्रकाश हो। यद्य अपार विस्तर अन्यायका विनाश हो ॥
 मन्य मन्य नाथ तुम्हीं ज्ञानमें प्रधान हो। राखिये कृपा जिनेन्द्र लोतमें गहान हो ॥
 जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी। धन्य यए ससय महान सुखनिधान नाथजी ॥२॥
 आचार्य प्रतिमाको राज्यमहलमें विराजमान करते हैं तथा प्रतिमाओंको मुकुट व शल देकर “ अस्मिन् बिम्बे राज्यभिषेकं
 आरोपयामि स्थाहा ” ऐसा कहकर पुण्य क्षेपण करते हैं। एवरे १० वजे तक क्रिया होजावे।

अध्याय छठा।

तपकल्याणक।

(१) भगवान्‌त्तो वैराग्य—इपी दिन जब सबरे राज्यभिषेक किया था, १ वजेसे तपकल्याणककी विधि करै। मण्डपसे कुछ दूर एक बन दूद छेवें जहाँ बड़का वृक्ष हो उधीके नीचे ऋषभदेवका तपकल्याणक करना। जिस तीर्थकरकी प्रतिष्ठा करनी हो उष तीर्थकरके उनी वृक्षकी तलाश करे। यदि वैसा न मिले तो २४ भैसे कोई भी वृक्षके तले यह कल्याणक होवे। २४ वृक्षोंके क्रमसे नाम ये हैं—
 १-वट या बर्गद, २-अमृच्छद, ३-ताल, ४-शाक, ५-प्रियुगु, ६-प्रियंगु, ७-श्रीखण्ड, ८-नागवृक्ष, ९-साक, १०-पलाज,
 ११-तींद्र, १२-पाटल, १३-नम्बू, १४-पिपल, १५-दधिपर्ण, १६-नदिवृक्ष, १७-तिरुक, १९-अशोक, २०-अम्पा,
 २१-मोक्षपरी, २२-बाँध, २३-घन, २४-शाक।

घनमें वृक्षके चारों ओर स्थान स्वच्छ हो। शुद्ध जलको छिड़क कर पवित्र करले यहाँ ही एक पाषाणकी शिल्पा जंघी भगवान्‌को विराजमान करनेको नियत करे तथा आगे १ मंडक नद्यवे जिन्में २४ कोठे हों, पूजाकी सब सामग्री तैयार की जावे, मंडप भी छाया जावे जिन्में सुखसे सब बैठ सके। वटवृक्षको नियत कर आचार्य पहले सब देख जावे व प्रबंध कर आवे। उधर मंडपमें नरनारी टिकटों द्वारा बुलाए जावें। दूबरे चबूतरेपर भगवान्‌की राज्य प्रभा लगाई जावे। वशल भगवान्‌ विराजमान हों। आगे वृत्त व भजन होता हो, ऐसा प्रभा करके परदा खोला जावे। उष समय नीलाजना नामसे एक देवीको इन्द्र मेले यह आकर वृत्य करने लगे। कोई कोई कन्या जो घोड़ावा वृत्त जानती हो सो नाचते नाचते एरुदम भूमिपर गिरकर अचेतनी होजावे। उनी समय आचार्य भगवान्‌की ओरसे नीचे प्रकार कहें—

दोहा—धिक धिक् या संसारमें, नित्य नहीं पर्याय। देखन देखन विलय हो, श्रुवता कोन लहाय ॥ १ ॥
 मरणकाल आवे निरुद, कोय न राखनहार। कोटिक यतन विचारिये, निर्फल हों हरबार ॥ २ ॥
 क्षण क्षण उम्र बिलात है, ज्यों ज्यों काल विताय। मरण करत माँन सुखी, हम युवान वय आय ॥ ३ ॥
 जरा जु बाधन समयकरी, आवत है ततकाल। पकड़ तिसे निर्यल करे, उसे काल बिकराल ॥ ४ ॥

या संसार अपारमें, चारों गति दुःखदाय । शारीरिक मनसा बहुत, क्लेश होंय भयदाय ॥ ५ ॥
 देव आदि भी ना सुखी, तृष्णावश दुःख पाय । देख जलत पर सम्पदा, इष्ट वियोग धराय ॥ ६ ॥
 जो जाने निज आपको, मरघै निज सुख स्वार । निजमें आपी मगन हो, सो सुखिया संसार ॥ ७ ॥
 मोह अंध जे जीवड़ा, धन कुटुम्बमें लीन । आकुलता नितपति लहै, दशा बनाई दीन ॥ ८ ॥
 द्रव्य भिन्न हर जीवका, जब पलटे पर्योय । उपजै मरै जु एकला, कोई नहीं सहाय ॥ ९ ॥
 तीव्र क्लेश रग शोकका, आपी भुगतै जीव । साथी सगा न देखिये, भिन्न भिन्न है जीव ॥ १० ॥
 जब यह तन भी मम नहीं, साथ न जावै कोय । परिजन पुरजन धन कणा, किहू विधि साथी होय ॥ ११ ॥
 यह शरीर सुन्दर दिखे, भीतर मल सजुदाय । खड़न गलन लाइत धरै, तुरत मृनक होजाय ॥ १२ ॥
 तीन जगलमें अशुचि है, मानुष तन अधिकाय । पल्ल माल जलशुचि दरब, परश अशुचि होजाय ॥ १३ ॥
 मिथ्या श्रद्धा धारके, हिसादिक बहु पाप । करे कषायन घटा रहे, हो प्रसाद सन्नाप ॥ १४ ॥
 मन बच काय न धिर रहे, योग आध हिल जाय । कर्म वर्गणा पुंज तब, आषत तहं अधिकाय ॥ १५ ॥
 बन्ध होय पिजरा बने, कर्मण तन दुःखदाय । जब तक यह दूटे नहीं, सुक्ति न कोय लहाय ॥ १६ ॥
 संवर भाष विचारिये, सम्यग्दर्शन स्वार । संयम अर वैराग्यसे, कर्तै कर्मकी धार ॥ १७ ॥
 आत्म ध्यान महा अगनि, जब निजमें प्रजलाय । कोटिक भण बांधे करम, तुरत भस्म होजाय ॥ १८ ॥
 तप समान इस जीवका, भिन्न न को संसार । निश्चय तप निज आत्मसा, तारै भवदधि स्वार ॥ १९ ॥
 पुरुषाकार अकृत्रिमा, लोक अनादि अनन्त । ऊरध मध्य अधो विधे, सिद्ध लोक सुखवन्त ॥ २० ॥
 दुर्लभ है इस लोकमें, नर तन दीरघ आयु । इन्द्रिय बलकी पूर्णता, डस, न रोग कु वायु ॥ २१ ॥
 एक इन्द्रिय पर्यायते, बहुत कठिन संसार । विरला नर तन पावता, जो सब तनमें स्वार ॥ २२ ॥
 या तन पाय न तप किया, लिघा न निजरस स्वाद । मूरख अवतर चूकता, छाड़ै ना परमाद ॥ २३ ॥
 धर्म मित्र या जीवका, जो राखे श्रेय साधि । दुर्गतिसे रक्षा करै, सुख देवै अधिकाहि ॥ २४ ॥
 हा हा धिक् है सुश्रे, इतना काल गमाय । मोह राज्य पुत्रादिमें, कर निज सुख विसराय ॥ २५ ॥
 अब संयम धरना सही, जिम धारा बहु लोक । कर्म काट शिव थल वसे, पाया निज सुख थोक ॥ २६ ॥

कुछ बिलरूप करना नहीं, लसय न पलटत जाय। क्षण क्षण आयु विलात है, राखनको न उपाय ॥२७॥
धम मित्रकी शरणसें, रहना ही सुखकार। जो तारे भव सिंधुते, पहुंचावे शिव द्वार ॥२८॥

(२) लौकांतिक देवागम—इतनेमें आठ लौकांतिक देव बफेद घोटो दुपट्टा पहने व बफेद ही मुकुट लगाए सभामें विनय बहित जाते हैं और पुण्योकी अजली मूर्तिके आगे चढ़ाकर नीचेप्रकार स्तुति करते हैं—

स्वामिन्नय जगत्त्रये प्रसरतां आंगत्यस्राला यतः, सर्वेभ्यः सुदुतं अविब्यति भवतीर्थीमुनां भोधरात् ।
घोरापञ्जवलनापनोदनमितो भव्यात्मनां जायतां, वैराग्यावगलस्रवथा परिचितस्नस्मै नमस्ते पुनः ॥८२३॥

संसारदुःखविनिवृत्तिपरायणः स्वयं बुद्ध्वा भवस्थितिभिर्मां स्वपरात्मनां शिवं ।
कर्तेत्यस्यावभिस्रसधनियोगभावुकानस्मान् प्रपंचयति निःकमणोस्सखरसय ॥८२४॥

के वा वयं त्वदुपदेशविधानदक्षाः स्वायंभवस्य सकलागमपूतदृष्टेः ।
आत्मैव केवलमयो प्रतिबुद्धमार्ग नीतः स्वयं न खलु भव्यगणोऽपि तात ॥८२५॥

अयं पितेयं जननी तवेति लोका सुवार्थं व्यवहारयन्ति ।
विश्वेशिता विश्वपितामहस्र्थं माताऽसि स्र्थप्रतिपालनेच्छुः ॥८२६॥

अथाससंसारतः स्वलब्ध्या निमित्तमन्यत्सुपस्थितोऽसि ।
स्वयं प्रबुद्धः प्रभविष्णुरीशः कदापि नास्मत्स्तयनेन बुद्धः ॥८२७॥

प्रकाशितं सूर्यसुदीक्ष्य दीपः स्वयं स्वदीपया किं सु भाषयेत् ।
गंगा स्वयं शीतलतोपदात्री किं पल्लवेन स्वतृषां अनक्ति ॥८२८॥

जय कल्याणपरस्पर मदनमयङ्कर निजशक्तिपते ।

जय शाश्वतसुखकर त्रिसुवनमहिधर जय जय जय गुणरत्नपते ॥८२९॥

भाषा—छन्द सृष्टिनी—धन्य तू नाथ जो चित्त गहा धन्य हो नाथ वैराग्य उत्तम लहा ॥

तीर्थ धर्म महा वृष्टि हो लोकमें । मोह आपत्ति अगनां शर्मैं लोकमें ॥ १ ॥

संस्तुता दुःख भेटन तुम्ही धीर हो । कर्म सेना प्रहारन तुम्ही धीर हो ॥

बोध केवल प्रकाशन तुम्हीं सूर्य हो, भव्य कमलनि विकाशन तुम्हीं सूर्य हो ॥ २ ॥

हो स्वयंबुद्ध सम्यक्त गुण धारकं, ज्ञान वैराग्य जलमोहमल टारकं ।

शक्ति अनुपम धरो काम बल नाशकं, आपमें आप ही आपको आशकं ॥ ३ ॥

नाथ अब देर कुछ भी नहीं काजिये, धार संयम कवच ध्यान असि लीजिये ।

चार घाती महा कर्म क्षय कीजिये, धर्म त्रय रत्नत्रय देव यश लीजिये ॥ ४ ॥

आपको बोधने बल धरें हम नहीं, मात्र भक्ति करें पाप आवें नहीं ।

सफल गात्रं यह नाथ धंरे तुम्हें, जन्म माना सफल नाथ देखे तुम्हें ॥ ५ ॥

इसतरह बड़े भावसे श्रुति पठके पुण्याजिकि प्रसूके चरणोंपर क्षेपण करके व नमस्कार करके विनय सहित लौट जावे—

(३) इन्द्रागमन पालकी सहित—इतनेहीमें इन्द्रादिदेव एक कलश जलका लिये व वस्त्राभूषणका थाल लिये तथा पालकीको कंधेपर धरे वभामें आते हैं । पालकी आदिको यथायोग्य चक्र इन्द्रादि नमस्कार कर कहते हैं—

छन्द सृग्वनी—हे प्रभू मोक्ष नगरी विजय कारणे, आत्स्य सुख सार अनुभव सदा धारणे ।

सुक्ति लक्ष्मी मनोहर जु वश कारणे, सिद्ध पद सारको नित्य संधारणे ॥ १ ॥

जो विधारा मनोरथ सफल हो लही, सोह शत्रुपे तेरी विजय हो लही ।

क्रोध आदि कषायें सभी नष्ट हों, ध्यान अग्नि जलें कर्म गण नष्ट हों ॥ २ ॥

साधु पदवी धरो व्रत महा आचरो, तीन गुणि समूहालो समिति उर धरो ।

हैं परम धर्म दश तोहि रक्षा करें, होय उपसर्ग संकट उन्हे जय करें ॥ ३ ॥

धन्य जिनराज पुरुषार्थ कीना शिबल, नष्ट रागादि कर आत्म कीजे विमल ।

हम तो भक्ति करें और समरथ नहीं, होय पावन इसीसे न हों दुख कहीं ॥ ४ ॥

(४) भगवानका राज्य त्याग व पालकीपर बढ़ वन जाना—फिर आचार्य नीचेका श्लोक पढ़ प्रतिमापर पुण्याजिकि क्षेपे । सूचक वभाको कहे कि भगवान् राज्यका त्याग करते हैं और पुत्र भारतको राज्य देते हैं—

इटासैवैराग्यभरः स्वराज्यं पुत्राय वा भूपतिसाक्षि हत्वा ।

यः क्षात्रधर्मं श्रित्यपंचभेदं दिदेश साक्षाच्च स एव विधः ॥

तत्र इन्द्र प्रतिमाजीको उठाकर मस्तकपर रखे, वहींपर आचार्य एक गारिक रख दे व उसपर भगवानका मुकुट उतार कर दे । इसके यह सूचित वागा है कि पुत्रको राज्यपद दिया । इन्द्र बिम्बको स्नान करानेके लिये तब आचलपर विराजमान को आचार्य यह मन्त्र पढ़ें—
ॐ ह्रीं अहं बर्मतीर्षं आदिनाथ भगवन् पांडुकुशिका पीठे तिष्ठ त्वाहा ।”

दीक्षोद्यमं मोक्षसुखैकसक्तं यं स्नापयाम्युत्कृष्टशौचशक्ताः ।

समेस्य सद्यः परया विभूत्या तं स्नापयाम्यष्टशतैः कुंभैः ॥

ॐ ह्रीं जय जय अर्हतं भगवंतं शुद्धोदकेन स्नापयामि इति स्वाहा । फिर इन्द्र वल्लसे पोंछकर, हलके चन्दनसे स्नान करे तब आचार्य यह श्लोक पढ़े—

इन्द्रो जिनेन्द्रस्नानावसाने द्विव्यांगरगेण यमालिलेष ।

कपूर्कालागच्छकुंडुमाह्यश्रीचन्दनेनास्य समालभेऽगम् ॥

ॐ ह्रीं सहजबौगधधुरांगस्यगच्छेपनकरोमि स्वाहा ।

फिर इन्द्र पोंछकर थालमें नए लोए वल्ल आभूषण पहनावे तब आचार्य नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

विभूषयामास्र जगत्प्रयस्य विभूषणं दिव्यविभूषणाद्यैः ।

पुरंदरोऽयं भगवज्जिनेन्द्रं स एव देवो जिनविष एषः ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनाग विविषवलाभरणेन विभूषयामि स्वाहा । फिर आचाय नीचे लिखा वर्द्धमान मंत्र सातवार पढ़कर प्रसुपर सातबार पुष्प क्षेपे—“ ॐ णमा भयदो बड्डमाणस्र रिषहस्रव जस्व चक्रे जलन्त गच्छइ । आयांघ पायालं लोयाण भूयाणं यूये वा विवादे वा रणंगणे वा रायंगणे छब्भणे वा मोहणे वा षव्वजीवसत्ताण अपराजिदो भवडु मे रक्ख रक्ख स्वाहा ।

फिर दीक्षा लेते समय भगवानने दान किया ठलकी स्थापनाके लिये आचार्य नीचेका श्लोक पढ़कर प्रतिमाके आगे पुष्प क्षेपे और कुछ रुपये दानके लिये देदिये जावे उसे प्रबन्धकर्ता यथायोग्य देदेवे ।

दीक्षोन्मुखस्तीर्थकरो जनेभ्यः किमिच्छकं दानमहो ददौ यः ।

दानं च सुवर्त्यंगमितीव चक्तु स एव देवो जिनविष एषः ॥ १ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ पाळकीपर पुष्प डाले

महीतलायातदिनेशविंबशंकावहादीप्रमणिप्रभाह्या ।

जिनेन या श्रीशिविकाधिरूढा द्विव्यास्र साक्षादियमस्तु सैव ॥ २ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक व मंत्र आचार्य पढ़े । इन्द्र वित्तय रहित भगवानको ठाकर पाळकीपर विराजमान करे तब जय जय शब्द हो पुष्पवृष्टि हो ।

आप्तृच्छय पंधूनुचितं महेच्छः किमिच्छकं दानविधिं विधाय ।

निष्क्रामतिस्मावसपाधवनो यः स एव देवो जिनविष एषः ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं नमो श्रीवर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह शिविकायां तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा ।

इस समय कमसे कम चार भूमिगोचरी राजा व चार विषाधर तैयार रहें । ये ही पाळकीको कंधेपर रख सकेंगे—सर्वमेंसे कौन भी इसके निर्णयके लिये अन्य स्थानपर बोली बोलकर पढ़ले तय किया जाये । जो रूपया जाये प्रतिष्ठामें सर्व हो । जितनी दूर बन हो उस मर्यादाके आठ भाग किये जावें—१ भाग तरु भूमिगोचरी भगवानकी पाळकीको ठेकर चले, फिर एक भागतक विषाधर राजा के चले, फिर इन्द्रादिक देव के चले । जिस समय चार भूमिगोचरी राजा पाळकी ठठावें ठब समय नीचेका श्लोक पढ़ आचार्य प्रतिमा पर पुष्प डालें—

यदाभ्रितां श्रीशिविकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥

जगसुः पृथिव्यां प्रथमं नरेन्द्राः स एव देवो जिनविंश एवः ॥ १ ॥

जब विषाधर के चले तब यह पढ़ें—

यदाभ्रितां श्रीशिविकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥

जगसुः पृथिव्यामथ खेचरेन्द्राः स एव देवो जिनविंश एवः ॥ २ ॥

फिर जब इन्द्र के चले तब यह श्लोक पढ़ें और पुष्प क्षेपे—

यस्य प्रभोः श्रीशिविकां प्रसोदात् स्कंधे समारोप्य वियहपथेन ।

तपोवनं निन्युरथामरेंद्राः स एव देवो जिनविंश एवः ॥

दोनों तरफ इन्द्रादि चमर ढारते जावें, बाथमें मडियां हों, बाजे बजें, नृत्य होता हो, भजन होते हों, सर्व संघ बाप जावे । आष घंटेके भीतर वनमें पहुंच जावे ।

(५) तप वनमें तप लेनेकी क्रिया—पहलेसे ही आचार्य जाकर तपोभूमिको नीचे लिखा मंत्र पढ़ शुद्ध करे. पानी छिड़के—

“ ॐ नीरजसे नमः ” फिर बटवृक्षकी स्थापना नीचे लिखा मंत्र पढ़ करें, वृक्षपर पुष्प क्षेपे ।

ॐ ह्रीं गमो अरहंताणं वृषभजिनस्य वटास्य जिनदीक्षा वृक्ष अवतर २ संबीषट् । फिर नीचेका श्लोक पढ़ दीक्षामंडपपर पुष्प क्षेपे—

एवं विनिष्कम्प्य यमाससाव पुण्याश्रमं तीर्थकरः प्रशान्तैः ।

स एव वायं जिनमण्डपोस्तु श्रीमूलवेद्यां विहितप्रतीच्यां ॥

फिर आचार्य शिळाके स्थापनके लिये नीचे लिखा श्लोक पढ़ शिळापर प्राथिया बनावे व पुष्प क्षेपे—

स्वचित्तकल्पे विपुले विशुद्धे शिलातले यत्र तु चन्द्रकान्ते ।

सुरेन्द्रकल्पे भगवान्निविष्टस्तथैव पीठं हृदमेतदस्तु ॥

फिर नीचेका श्लोक न मंत्र पढ़ा जाये तब इन्द्र पालकीसे अंगनामको उतारकर शिलापर पधारये। मुख पूर्व या उत्तर हो—

हृदयकुम्भः पूर्णसुखोऽयथा यो निविष्टवान्मृतशिलोपरिष्ठात् ।

प्रथमयया निर्वृत्तिश्चाधनोक्तः स एव देवो जिनर्षिष एषः ॥

ॐ ही बर्मतीर्षाधिनाप भगवन्निह ह्युरेन्द्रविरचितचन्द्रकान्तशिलातले तिष्ठ स्वाहा ।

फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ आचार्य चारोंतरफ पुष्प क्षेपे—

तपोवन यत्तद्विहास्तु दीक्षावृक्षोऽपि सोथं च शिलापि सेयं ।

स पुण्यकालोऽप्ययमेव यथादीक्षोचितं सप्तद्विहास्तु सर्वं ॥

फिर आचार्यभक्ति और श्रुतभक्ति पढ़े। फिर नीचे लिखा श्लोक मंत्र पढ़ प्रतिमापर पुष्प क्षेपे न बनाभूषण छतारकर एक बालीमें रखे।

यः सर्वसिद्धान्प्रणिपश्य केशानुत्पाठ्य दिव्यार्थारमात्यमृषाः ।

त्यक्त्वा प्रथन्नाञ्ज निजात्प्रलब्धै स एव देवो जिनर्षिष एषः ॥

ॐ नमो भगवतेऽहंते वषः बामायिकप्रनाय वस्त्राभूषणमपनयामि स्वाहा । फिर भगवानकी प्रतिमाके मस्तकमें गाढी केशर लगाकर हथपर लौंग केशोंके भाबोंकी स्थापनामें चिपका दे। नमः सिद्धेश्वरः कहकर उन केशरूप लौंगोंको किन्नी अन्य पेटी या बालीमें रखे अर्थात् केशलौंच करे। सूत्रक पात्र हरएक क्रियाको ब्रह्मज्ञाता जाये तब दर्शकगण जय जयकार करें। उन केशोंकी बालीको शिदीपर रखनी रहने दी जाये। फिर आचार्य ऐसा कहे—“अहं सर्वं प्राबधविरतोऽस्मि” फिर विद्वत्भक्तिका पाठ पढ़े।

पश्चात् केशरसे बोनैकी महीन सुईद्वारा प्रतिमापर अंक न्यास करे—पहले आचार्य मातृका मंत्र १०८ बार पढ़कर भाबोंके द्वारा अपने अंगमें अक्षरोंको बैठा के। इस समय ब्रह्मजनोंका मन लगानेको या तो १२ तपका उपदेश हो या वैरागी भजन हों—

मातृका मंत्र ।

ॐ नमोऽहं न आ इ ई ठ उ ऋ ऋ लृ लृ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह । कौं हौं क्रौं स्वाहा ।

आगे नहा प्रतिमाके अंगोंपर इन अक्षरोंको लिखना कहेंगे वही अपने अंगोंपर भी ध्यानसे बैठा लें।

(१) ओं नमः ऐसा कहकर न अक्षरको ललाट या माथेपर लिखे। (२) ओं आं नमः ऐसा कहकर आ की मुखकी गोलाईपर लिखे अर्थात् मुखवृत्तपर लिखे। (३) ॐ इं नमः ऐसा कह इ की दाहना आंखमें लिखे। (४) ॐ ईं नमः ऐसा कह ई की बाईं आंखमें लिखे। (५) ॐ ठं नमः ऐसा कह ठकको दाहने कानमें लिखे। (६) ॐ उं नमः ऐसा कह उ को बाएं कानमें लिखे।

(७) ॐ ऋ नमः ऐषा कः ऋ को दाहनी तरफके नाक छिद्रमें लिखे । (८) ॐ ऋ नमः ऐषा कः ऋ को बाई तरफके नाक छिद्रमें लिखे । (९) ॐ लं नमः ऐषा कः ल को दाहने (गण्डस्थ) गालपर लिखे । (१०) ॐ लं नमः ऐषा कः ल को बाएं गालपर लिखे । (११) ॐ ए नमः ऐषा कः ए को ऊपरको ओठमें । (१२) ॐ ऐं नमः ऐषा कः ऐ को नीचेके ओठमें । (१३) ॐ औं औं नमः ऐषा ओ औ को ऊपर व नीचेके दांतोंमें । (१४) ॐ अ अ नमः इति नमः ऐषा कः अ अः को बिरके ऊपर लिखे । (१५) ॐ क ख नमः ऐषा कः क ख को दाहनी मुजापर । (१६) ॐ गं घ नमः ऐषा कः ग घ को दाहने हाथकी अंगुलियोंमें । (१७) ॐ ङ नमः ऐषा कः ङ को दाहने हाथके अप्रभागमें या हथेलीमें । (१८) ॐ च छं नमः ऐषा कः च छ को बाईं मुजापर । (१९) ॐ ज झ नमः ऐषा कः बाए हाथकी अंगुलियोंमें । (२०) ॐ ञ नमः ऐषा कः ञ को बाएं हाथके अप्रभागमें या बाईं हथेलीपर । (२१) ॐ ट ठ नमः ऐषा कः ट ठ को दाहने चरणके मूलमें । (२२) ॐ डं डं नमः ऐषा कः ड ड को दाहने चरणकी गुल्फमें या टिक्र्यामें । (२३) ॐ णं नमः ऐषा कः ण को दाहने चरणके अप्रभागमें या तल्वेमें । (२४) तं थं नमः ऐषा कः त थ को बाए चरणके मूलमें । (२५) ॐ दं ध नमः ऐषा कः द ध को बाएं चरणकी गुल्फमें । (२६) ॐ नं नमः ऐषा कः न को बाएं चरणके अप्रभागमें । (२७) ॐ प फ नमः ऐषा कः प फ को दाहने पगकी पीठपर । (२८) ॐ बं भं नमः ऐषा कः ब भ को बाए पगकी पीठपर । (२९) ॐ म नमः ऐषा कः म को उदरमें । (३०) ॐ यं नमः ऐषा कः य को हृदयमें । (३१) ॐ रं नमः ऐषा कः र को दाहने कन्धेपर । (३२) ॐ ल नमः ऐषा कः ल को गलेमें (कहुदि) । (३३) ॐ व नमः ऐषा कः व को बाएं कन्धेपर । (३४) ॐ श नमः ऐषा कः श को हृदयसे लेकर दाहने हाथ तक लिखे । (३५) ॐ षं नमः ऐषा कः ष को हृदयसे लेकर बाए हाथ तक लिखे । (३६) ॐ षं नमः ऐषा कः ष को हृदयसे लेकर दाहने पग तक लिखे । (३७) ॐ हं नमः ऐषा कः ह को हृदयसे लेकर बाएं पग तक लिखे । (३८) ॐ क्ष नमः ऐषा कः क्ष को हृदयसे लेकर उदर तक लिखे ।

फिर आचार्य १०८ दफे नीचे लिखा अनादिषिद्ध मंत्र जपे—“ॐ णमो अरहताण, णमो सिद्धाणं, णमो आइरोयाणं णमो उक्खमायाणं णमो लोए पव्वञ्जाहूणं । चत्तारिमंगल, अरहंतमंगल, विद्धमंगल, षाहूमंगलं, केवल्लिपणत्तोषम्मोमंगल । चत्तारिलोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, षाहूलोगुत्तमा, केवल्लिपणत्तोषम्मो लोगुत्तमा, चत्तारिचरणं पव्वञ्जामि, अरहतचरण पव्वञ्जामि, सिद्धचरण पव्वञ्जामि, षाहूचरण पव्वञ्जामि, केवल्लिपणत्तोषम्मोचरणं पव्वञ्जामि । झौं झौं स्वाहा । १०८ लौंग लेकर जपले या माकासे जपले ।

फिर एक रकाबीमें लौंग या पुष्प लेकर प्रतिमापर नीचे लिखे मंत्रोंका संस्कार करे । अब उपदेश या भजन बन्द हो जावे । जैसे आचार्य मंत्र बोले तबीका भाव सूचक पात्र या कोई दर्शकोंको उपश्रान्ता जाय—“जैसे जब कहा जाय ब्रह्मदर्शनसंस्कारः भवतु तत्र सममावे कि भगवानके विम्बमें चम्यदर्शनका संस्कार प्राप्त हो यह भावना की गई है । इत्यादि ।

(१) ॐ ह्रीं इह अर्हति ब्रह्मदर्शनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । इतना कह पुष्प या लौंग क्षेपे । इसी तरह पुष्प क्षेपता जाय । (२) ॐ

हीं इह अर्हति चण्डानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३) ॐ हीं इह अर्हति चारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४) ॐ हीं इह अर्हति सतपः
 संस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (५) ॐ हीं इह अर्हति (यहाँ दर्शन ज्ञान चारित्र व तपके वीर्यसे प्रयोजन मालूम होता है) सदीर्यचतुष्टयसंस्कारः
 स्फुरतु स्वाहा । (६) ॐ हीं इह अर्हति अष्टप्रवचनमातृकासंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (पाँच षमिति तीन गुप्तिको अष्टप्रवचनमातृका कहते हैं)
 (७) ॐ हीं इह अर्हति शुद्धयष्टकाषलसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (आठ शुद्धि-भाव शुद्धि, कायशुद्धि, विनयशुद्धि, ईर्यापथशुद्धि, भिक्षाशुद्धि,
 प्रतिष्ठापनशुद्धि, शयनासनशुद्धि तथा वाक्यशुद्धि)-(८) ॐ हीं अर्हति द्वाविंशतिपरब्रह्मजयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (९) ॐ हीं इह अर्हति
 त्रियोगेन संयमाभ्युत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१०) ॐ हीं इह अर्हति कृतकारितानुमोदनेरतिचारनिवृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (११) ॐ इह अर्हति शीलसप्तसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१२) ॐ हीं इह अर्हति दशष्यमोपरमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (५ इन्द्रियसंयम,
 ५ प्राणसंयम या पाँच प्रकार जीव रक्षण) । (१३) ॐ हीं इह अर्हति पञ्चेन्द्रियनिर्जयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१४) ॐ हीं इह अर्हति
 ब्रह्मज्ञानचतुष्टयनिप्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (यहाँ मतिज्ञानादि चार स्थिर रहे) । (१५) ॐ हीं इह अर्हति उत्तमक्षमादि दशविष्वर्गमवारणसंस्कारः
 स्फुरतु स्वाहा । (१६) ॐ हीं इह अर्हति अष्टादशब्रह्मशीलपरिशोचनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१७) ॐ हीं इह अर्हति चतुरशीतकक्षो-
 तरगुणसमाश्रयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१८) ॐ हीं इह अर्हति अतिशयविशिष्टब्रह्मध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (१९) ॐ हीं इह अर्हति
 अप्रमत्तसंयमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२०) ॐ हीं इह अर्हति सुदृढश्रुतेनैवोवासिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२१) ॐ हीं इह अर्हति अप्रक-
 पक्षपक्रेण्यारोहणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२२) ॐ हीं इह अर्हति अनन्तगुणविशुद्धिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२३) ॐ हीं इह अर्हति
 अथाप्रमत्तकरण या अथःकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२४) ॐ हीं इह अर्हति पृथक्स्ववितर्कवीचारशुक्लध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (२५) ॐ हीं इह अर्हति अपूर्वकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२६) ॐ हीं इह अर्हति अनिवृत्तिकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (२७) ॐ हीं इह अर्हति बादराकषायचूर्णनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (२८) ॐ हीं इह अर्हति सूक्ष्मकषायचूर्णनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (२९) ॐ हीं इह अर्हति सूक्ष्मबाभ्रपरायचारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३०) ॐ हीं इह अर्हति प्रक्षीणमोहसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (३१) ॐ हीं इह अर्हति यथाक्यातचारित्रावासिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३२) ॐ हीं इह अर्हति एकस्ववितर्कवीचारशुक्लध्यान-
 लम्बनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३३) ॐ हीं इह अर्हति धातिघातसमुद्भूतकैवल्यवागमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३४) ॐ हीं इह अर्हति
 धर्मतीर्थप्रवृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३५) ॐ हीं इह अर्हति सूक्ष्मक्रयाशुक्लध्यानपरिणस्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३६) ॐ हीं इह
 अर्हति शीलेशीकरणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (१८०० शीलका स्वामीपना) । (३७) ॐ हीं इह अर्हति परमसंवरसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (३८) ॐ हीं इह अर्हति योगचूर्णकृतिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (३९) ॐ हीं इह अर्हति योगयुतिभाक्त्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (अयोग्य
 गुणस्यान प्राप्ति) । (४०) ॐ हीं इह अर्हति समुच्छन्नक्रियाशुक्लध्यानप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४१) ॐ हीं इह अर्हति निर्बरायाः
 परमकाष्ठारूढत्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४२) ॐ हीं इह अर्हति सर्वकर्मक्षयाप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४३) ॐ हीं इह अर्हति
 अनादिभवपरावर्तनविनाशसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४४) ॐ हीं इह अर्हति द्रव्यक्षेत्रकालभवावपरावर्तननिष्क्रातिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

(४५) ॐ ह इह अर्हति चतुर्गतिपरावृत्तिप्रंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनन्तगुणविद्वत्प्रतिप्रंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।
 (४७) ॐ ह्रीं इह अर्हति अदेहबह्वनज्ञानोप्रयोगचारित्र्यप्रंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । (४८) ॐ ह्रीं अर्ह इहार्हतिविम्बे अदेहबह्वोपदर्शनोपयोगै-
 र्यप्रतिप्रंस्कारः स्फुरतु स्वाहा । नोट-सूत्रकार या पठित यह्य ब्रह्मवि कि इह विम्बमें यहगुण प्रकाशमान हों ऐषा रथापन इह विम्बमें
 किया जाता है । अब पूजा की जाये । मंडलके आगे आचार्य पूजा करे इन्द्र भी शामिल हो ।

(६) तपकल्याणककी पूजा ।

अथासिधाराव्रतमद्वितीयं निर्वाणदीक्षाग्रहणं दधानम् । यमर्चयामासुरशेषशक्रास्तमर्चयामो जगद्वर्चनीयम् ॥

ऐषा कइ पुष्पांजलि क्षेपे ।

सारशांतरसनिर्जितास्मत्प्रपदाग्रप्रति तेन वारिणा ॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदंपंकजद्वयम् ॥

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकृन्मुनिलकामं जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

सद्गुणप्रणुतचंदनेन ते कीर्तिवत्सकलतोषपोषिणा ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदंपंकजद्वयम् ॥ चंदनं ॥ २ ॥

स्वस्वसेन्दुभजनार्थमागतैर्भद्रजैरिव बलक्षकाक्षतैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदंपंकजद्वयम् ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥

सुप्रसादसुकुमारतादिभिरस्वद्वचोभिरिय नव्यपुष्पकैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदंपंकजद्वयम् ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥

चारुणाय वरुणामृतांशुबद्धयंजनैरपि तदंकरांकिभिः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदंपंकजद्वयम् ॥ चक्रं ॥ ५ ॥

धर्मदीपक न ते वयं समा, भक्तुमिस्थमितवत्प्रदीपकैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदंपंकजद्वयम् ॥ दीपं ॥ ६ ॥

सेव्यथाव नपथेद्वभंगवत्स्यान्मसुधूपधूमकैः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदंपंकजद्वयम् ॥ धूपं ॥ ७ ॥

नम्रभव्यसुकृतानुकारिभिः सारभूतसहकारकादिभिः ।

तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदंपंकजद्वयम् ॥ फलं ॥ ८ ॥

गुणमणिगणसिद्धृष्वव्यलोकैकबन्धून् । प्रकटितजिनमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान् ॥
परिचितनिजतत्त्वान्पालिताशेषस्तत्त्वान् । क्षमरसजितचंद्रानर्द्ययामो सुनीन्द्रान् ॥ अर्द्यं ॥

श्रीमद्बोधप्रयाह्य प्रविभलचरितस्वात्मससुख्याननिष्ठ ।
स्याद्वादांभोजनानो भिजगदुपकृतिव्यग्रयोगीश्वर त्वाम् ॥
अर्द्यं चानर्द्यनानाविधिविहितं द्रव्यसुद्धार्थं वर्द्यं ।
प्रेक्षिप्योद्धारपुष्पांजलिमलिकलितं शूरिभक्त्या नम्रामः ॥ महार्द्यं ॥ १० ॥

अब २४ भगवानकी तपकल्याणककी पूजा की जावे ।

गीता छन्द—श्री रिषभदेव सु आदि जिन श्रीवर्द्धमान जु अंत हैं ।
बन्दुहुं चरण चारिज तिनहोके जपत तिनको संत हैं ॥
करके तपस्या साधु ब्रत ले सुक्तिके स्वामी भए ।
तिन तपकल्याणक यजनको द्रव्य आठों हैं लए ॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादि वर्द्धमानजिन अत्राधतरावतर बवौषट् अत्र तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम बनिहितो भवर वषट् ।

छन्द चाली—शुचि गंगाजल अर झारी, रुज जन्म मरण क्षयकारी ।

तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शीतल चंदन घसि लाऊं, अथक्षा आताप शमाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ चंदनं ॥
अक्षत ले शशि दुतिकारी, अक्षयगुणके करतारी । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ अक्षतं ॥
बहु फूल सुवर्ण चुनाऊं, निज काम व्यथा हटवाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ पुष्पं ॥
चरु ताजे स्वच्छ बनाऊं, निज रोग शुधा मिटवाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ चरुं ॥
दीपक ले तम हरतारा, निज ज्ञानप्रभा विस्तारा । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ दीपं ॥
धूयायन धूप खिवाऊं, निज आठों कर्म जलाऊं । तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ धूपं ॥
फल सुन्दर ताजे लाऊं, शिवफल ले बाहू मिटाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ फलं ॥
शुभ आठों द्रव्य मिलाऊं, करि अर्घ परमसुख पाऊं । तपसी जिन चौविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ अर्घं ॥

नीमी बदि चैत प्रमाणी, वृषमेश तपस्या ठानी । निजमें निज रूप पिछाना, हम पूजत पाप नशाना ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णावभ्यां श्री ऋषभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

दशमी शुभ माघ बदीको, अजितेश लियो तप नीको । जगका सब मोह हटाया, हम पूजत पापभगाया ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णादशम्यां श्री अजितनाथाय जिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

मगसिर सुदि पूरणमासी, संभव जिन होय उदासी । केशलौच महातप धारो, हम पूजत भय निरवारो ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लापूरणमास्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

द्वादश शुभ माघ सुदीकी, अभिनंदन बन चलनेकी । चिन ठान परमतप लीना, हम पूजत हैं गुण चीन्हा ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लाद्वादश्यां श्री अभिनंदनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

नीमी बैसाख सुदीमें, तप धारा जाकर बनमें । श्री सुमतिनाथ सुनिराई, पूजूं मैं ध्यान लगाई ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लानवम्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

कातिक बदि तेरसि गाई, पद्म प्रभु सुखला आई, बन जाय घोर तप कीना, पूजें हम सम सुख भीना ।

ॐ ह्रीं कार्तिकृष्णात्रयोदश्यां श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

सुदि द्वादश जेठ सुहाई, बारा भावन प्रभु भाई, तप लीना केश उपाड़े, पूजूं सुपाश्व यति ठाड़े ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां श्री सुपाश्वजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

एकादश पौष बदीको, चन्द्रप्रभु धारा तपको । बनमें जिन ध्यान लगाया, हम पूजत ही सुख पाया ॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णाएकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

अगहन सुदि एकम जाना, श्री पुष्पदंत भगवाना । तप धार ध्याय निज कीना, पूजूं आतम गुण चीन्हा ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाएकं श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

द्वादशि बदी माघ महीना, शीतल प्रभु सुखला भीना । तप राखो योग सुम्हारो, पूजें हम कर्म निवारो ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय तप जन्मकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

बदि फाल्गुण ग्यारस गाई, भैयासुनाथ सुखलाई, हो तपसी ध्यान छगाया, इस पूजत हैं जिनराया ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा एकादश्यां श्री श्रेयासुनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

बदि फाल्गुण चौवसि स्वामी, श्रीवासुपुत्र शिवनाथी । तपसी हो समला साधी, हम पूजत धार समाधी ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा एकादश्यां श्री वासुपुत्रजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्रप्ताय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

बदि माघ चौथ हितकारी, श्री विमल सुदीक्षा धारी । निज परिणतिमें लय पाई, हम पूजत ध्यान लगाई ॥

ॐ ह्रीं माघ कृष्णाचतुर्थी श्री विमलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)

द्वादशि बदि जेठ सुशानी, बन आए जिन अथ ज्ञानी । धर साक्षाधिक तप साधा, हम पूजूं अनंत हरबाधा ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णाद्वादश्यां श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)

तेरस सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ तप लीना । वनमें प्रभु ध्यान लगाया, हम पूजत मुनिपद ध्याया ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

चौदस शुभ जेठ बदीमें, श्री शांति पधारे वनमें । तहं परिग्रह तज तप लीना, पूजूं आतमरस भीना ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

करि दूर परिग्रह सारी, बैसाख सुदी पड़िवारी । श्री कुन्थु स्वात्मरस जाना, पूजनसे हो कल्याणा ॥

ॐ ह्रीं बैसाखशुक्लाप्रतिपदाभ्यां श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)

अगहन सुदि दशमी गई, अरनाथ छोड़ गृह जाई । तप कीना होय दिगंबर, पूजें हम शुभ भावां कर ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाषटुर्दश्यां श्री अरनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय निर्वपामीति स्वाहा । (१८)

अगहन सुदि ग्यारस कीना, सिर केशलोच हित चीन्हा । आमछि यती व्रतधारी, पूजें नित साम्य प्रचारी ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाएकादश्यां श्री मछिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)

बैसाख बदि दशमीको, मुनिसुव्रत धारा व्रतको । समता रसमें लौ लाए, हम पूजत हां सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं बैसाखकृष्णादशम्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)

दशमी आषाढ बदाकी, नमिनाथ हुए एकाकी । वनमें निज आतम ध्याए, हम पूजत ही सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णादशम्यां श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

छठि आषण शुक्ला आई, श्री नेमिनाथ बन जाई । करुणा धर पशू छुहाए, धारा तप पूजूं ध्याए ॥

ॐ ह्रीं आषणशुक्लाषष्ठ्यां श्री नेमनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)

लखि पौष एकादशि श्यामा, श्री पार्श्वनाथ गुणधामा । तप ले बन आसन ठाना, हम पूजत शिवपद पाना ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाचतुर्दश्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

अगहन बदि दशमी गई, धारा भावन शुभ भाई । श्री बर्द्धमान तप धारा, हम पूजत हों सब पारा ॥

ॐ ह्रीं अगहनकृष्णादशम्यां श्री बर्द्धमानजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

जयमाल ।

मुजंगप्रयात छन्द—नमस्ते नमस्ते नमस्ते सुनिन्दा । निवारें भली भांतिसे कर्म फन्दा ॥
 संभारे सु द्वादश तपे बन मंझारी । सदा हम नमत हैं तिन्हें मन सम्हारी ॥ १ ॥
 त्रयोदश प्रकारं सु चारित्र धारा । अहिंसा महा सत्य अस्तेय धारा ॥
 परम ब्रह्मचर्य परिग्रह तजाया । सु धारा महा संयमं मन लगाया ॥ २ ॥
 दया धार भूको निरखकर चलत हैं । सुभाषा महा शुद्ध मीठी बढत हैं ।
 करै शुद्ध भोजन सभी दोष टालें । दयाको धरे वस्तु लें मल निकाले ॥ ३ ॥
 वचन काय मन गुप्तिको नित्य धारें । धरम ध्यानसे आत्म अपना विचारें ॥
 धरें साम्य भावं रहें लीन निजमें । सु चारित्र निश्चय धरें शुद्ध मनमें ॥ ४ ॥
 ऋषभ आदि ओ वीर चौबीस जिनेशा । बड़े वीर क्षत्री गुणी ज्ञान ईशा ।
 खड्ग ध्यान आत्म कुशल मोह नाशा । जजें हम यतनसे स्वआत्म प्रकाशा ॥ ५ ॥

दोहा—धन्य साधु सम गुण धरें, सहे परीसह धीर । पूजल मंगल हो महा, टलें जगतजन वीर ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो तपकल्याणकप्रप्तेभ्यो महार्घं निर्वाणमीति स्वाहा ।

पूजाके पीछे फिर आचार्य नीचेका श्लोक पढ़ घामाधिक चारित्रिका स्थापन प्रतिमामें करके पुष्प प्रतिमापर क्षेपे ।

यः सर्वसावधनिवृत्तिरूपं, चारित्रमाद्यं विगतप्रमादं ।
 आसेदियान्सिद्धगुणानुरक्तः, स एव देवो जिनविभ्य एषः ॥

फिर चार बत्तीका दीपक जलाकर नीचे लिखा श्लोक पढ़ प्रतिमापर पुष्प क्षेपे । संघको सूचित करे कि भगवानको मनःपर्यय-ज्ञानकी प्राप्ति हुई है अर्थात् भगवान ४ ज्ञानधारी हैं ।

यदा तु सामयिकभाववृत्तं, तदा सन्नःपर्यययतुर्घबोध ।
 अतश्चतुर्ज्ञानविराजितो यः, स एव देवो जिनविभ्य एषः ॥

फिर इन्द्रादि प्रणाम करके शांतिभक्ति पढ़े । फिर आचार्य भगवान्के केशोको पात्रमें स्थापकर नीचेका श्लोक पढ़कर भगवान्के आगे पुष्प डाले—

यस्य प्रभोः केवलकलापमिन्द्रः, समूह्य निक्षिप्य च त्वयाङ्गम् ।
निक्षेपयामास पथः पयोधो, स एव देवो निजधिस्य एयः ॥

फिर आचार्य इन्द्रको कहे “ इन पवित्र केशोंको क्षीरसमुद्रमें क्षेपो ”, इन्द्र लेकर राजे बाजेके साथ देवोंके साथ जाकर किसी नदी या कूपमें क्षेपे । फिर आचार्य सर्व उपस्थित मंडलीसे नियमादि व व्रतादि लेनेको कहे । कुछ देर पीछे विस्र्जन करके जय बोले, सर्व इंध जावि । आचार्य मूर्तिको कपड़ेमें ढककर मूल वेदीपर ढाकर विराजमान करे तब अन्य प्रतिमाओंके यत्नादि उतारकर चन्दनसे छेपकर फिर पोंछकर मूल प्रतिमाके समान अक न्यास करे अर्थात् अक्षरोंको लिखे फिर ४८ संस्कार पढ़के सबपर पुष्प डाले और कहे— अस्मिन् बिम्बे तपकल्याणकं आरोपयामि स्वाहा । फिर नमस्कार कर तपकल्याणककी क्रिया सम्पन्न करे ।

अध्याय सातवां ।

ज्ञानकल्याणक ।

(१) भगवानका प्रथम आहार—तपकल्याणकके दूबरे दिन बड़े खिरे आचार्य, इन्द्र आदि पात्र मंडपमें आवे और पहलेके दिग्गकी भांति अग शुद्ध करके अभिषेक व पूजा तथा होम करले । मंडपमें ही यह दृश्य दिखाया जावे । पहले चबूतरे तक परदा पड़ा हो । दूबरे चबूतरे पर जहांतक विधि एकत्र की जावे वहांतक परदा रहे । दूसरे चबूतरे पर राजा सोम व श्रेयांसके घरकी कल्पना की जावे । आहार देनेके लिये इक्षुका रस तैयार किया जावे व पूजनकी सामग्री हो । एक स्थान आहार देनेको व एक स्थान पहले भगवानको विराजमान कर पूजा करनेको रहे । कोई दो गृहस्थोंको राजा सोम व श्रेयांस स्थापित किया जावे । इसके लिए बोली बोल ली जावे—जो अधिक रुपया प्रतिष्ठाके खर्चमें दे उन्हे ही बनाया जावे । यह पहले ही किया जावे । जो बनें वे स्त्री बहिन हो व न्यायमार्गी जिनवर्मके पक्के श्रद्धालु हो । राजा सोम व श्रेयांस शुद्ध घोती दुपट्टा पहने, मस्तक ढके, दोनों स्त्रियां भी शुद्ध वस्त्र पहनें । चारों जने नारियलसे ढका पानीका कलश लेकर चबूतरेके आगे ही द्वारापेक्षणके निमित्त खड़े हो । इतनेमें परदा उठे ।

आचार्य मूल प्रतिमाको लेकर मंडपके बाहरसे बिरपर घरकर लवि उच्च समय सर्व समाजन जयजयकार शब्द कहे । अब चबूतरेके पास प्रभु आजावे तब राजा सोम कहे—“ अब आहार पानी शुद्ध, तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ ” फिर आचार्य भगवानको उच्च आपनपर विराजमान करे तब दातार राजा सोम भगवानके चरणोंको शुद्ध जलसे धोवे, गन्धोदक लगावे फिर हाथ धो अष्टद्रव्यसे नीचे प्रकार पूजन करे । पूजन करके तीन प्रदक्षिणा दे नमस्कार करे फिर नौ दफे णमोकार मंत्र पढ़े । भगवानको आचार्य उठाकर दूबरे उच्च आपनपर विराजमान करे तब राजा सोम इक्षु रसकी धारा भगवानके हाथपर डाले तब ही ऊपरसे रत्नोंकी वस्त्रोंकी छि । मंडपके बा र

भीतर घंटा घड़ियाळ बजे, मन्द सुगन्धित पत्रन चळानेके लिये सुगन्धित धूप खेई जावे तथा लोग यह कहें-धन्य यह दान, धन्य यह पात्र ! श्रीतीर्थंकर ऋषभदेव, धन्य यह दातार ! चारों तरफ खूब जयजयकार शब्द हो। फिर शुद्ध जलसे हाथोको धोकर कपड़ेसे पौछ दे। आचार्य प्रतिमाको दूसरे आसनपर विराजमान करें और आचार्य या सूत्रक पात्र या अन्य कोई पंडित दानका महात्म्य प्रमशोर्वे तथा उच्च समय राजा सोम व श्रेयाश्च लो बह्मित हाथ जोड़े प्रभुके चन्मुख खड़े रहे तथा चार दान व विद्यादानार्थ कुछ रकमकी घोषणा करावे तथा आचार्य अन्य लोगोंको भी दानकी प्रेरणा करें। यदि दानकी इच्छा हो तो मुखिया पट्टी लेकर सत्रके पात्र घूम आवे। इधर आचार्य भगवानको लेकर मंडपसे बाहर ले जाकर मूळ वेदीपर विराजमान करे, दूसरे चबूतरेपर भी परदा पड़ जावे परन्तु मंडपमें भजन होने लगे। नवतक दान न लिख जावे मंडपसे किसीको जाने न दिया जावे।

पूजा जो आहरके समय पढ़ी जावे।

पहले ही राजा सोम व श्रेयाश्च मिलकर स्तुति पढ़े—

पहरी छन्द—जय जय तीर्थंकर गुरु महान, हम देख हुए कृतकृत्य प्राण ।
 महिमा तुमरी धरणी न जाय, तुम शिव आरग साधत स्वभाव ॥ १ ॥
 जय धन्य धन्य ऋषभेश आज, तुम दर्शनसे सब पाप आज ।
 हम हुए सु पावन गात्र आज, जय धन्य धन्य तप सार साज ॥ २ ॥
 तुम छोड़ परिग्रह भार नाथ, लीनो चारित तप ज्ञान साथ ।
 निज आत्म ध्यान प्रकाशकार, तुम कर्म जलावन वृत्ति धार ॥ ३ ॥
 जय सर्व जीव रक्षक कृपाल, जय धारत रत्नत्रय विशाल ।
 जय मौनी आत्म मननकार, जग जीव उद्धारण मार्ग धार ॥ ४ ॥
 हम गृह पवित्र तुम चरण पाय, हम मन पवित्र तुम ध्याय ध्याय ।
 हम भए कृतारथ आप पाय, तुम चरण सेवने चित बढ़ाय ॥ ५ ॥

ॐ हीं श्री ऋषभ तीर्थंकर पुष्पांजलि क्षिपेत् । यालमें पुष्प डाले ।

वषट् तिलका—सुन्दर पवित्र गंगाजल लेय झारी, डारुं त्रिधार तुम चरणन अग्र भारी ।

श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुभंगल करण सब पाप हरणा ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर सुनींद्राय जन्मजरापृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री चन्दनादि शुभ केशर मिश्र लाथे, अब ताप उपशाम करण निज भाव ध्याए ।

श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुभंगल करण सब पाप हरणा ॥ चंदनं ॥

शुभ श्वेत निर्मल सुअक्षत धार थाली, अक्षय गुणा प्रगट कारण शक्तिशाली ।

श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुभंगल करण सब पाप हरणा ॥ अक्षतं ॥

चम्पा गुलाब इत्यादि सु पुष्प धारे, है काम शत्रु बलवान तिसे विदारे ।

श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुभंगल करण सब पाप हरणा ॥ पुष्पं ॥

फेणी सुहाल चरफ़ी पकवान लाए, श्रुदरोग नाशने कारण काल पाए ।

श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुभंगल करण सब पाप हरणा ॥ खरूं ॥

शुभ दीप रत्नत्रय लाय तमोपहारी, तम मोह नाश सब होय अपार भारी ।

श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुभंगल करण सब पाप हरणा ॥ दीपं ॥

सुन्दर सुगन्धित सु पावन धूप खेऊं, अह कर्म काटको बाल निजात्म बेऊं ।

श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुभंगल करण सब पाप हरणा ॥ धूपं ॥

द्राक्षा बदाम फल सार भराय थाली, शिव लाभ होय सुखसे समता संभाली ॥

श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुभंगल करण सब पाप हरणा ॥ फलं ॥

शुभ अष्ट द्रव्य मय उत्तम अर्घ लाया, संसार खार जल तारण हेतु आया ।

श्रीतीर्थनाथ वृषभेश सुनींद्र चरणा, पूजूं सुभंगल करण सब पाप हरणा ॥ अर्घं ॥

जयमाल ।

छन्द सृष्टिनी-जय सुदारूप तेरे सदा दोष ना, ज्ञान श्रद्धान पूरित धरें शोक ना ।
 राजको त्याग वैराग्य धारी भए, सुक्तिका राज लेने परम सुनि धये ॥ १ ॥
 आत्मको जानके पापको भानके, तत्त्वको पायके ध्यान उर आनके ।
 क्रोधको हानके मानको हानके, लोभको जीतके मोहको भानके ॥ २ ॥
 धर्म मय होयके साधते मोक्षको, बाधते मोक्षको जीतते द्वेषको ।
 शांतता धारते साम्यता पालते, आप पूजन क्रिये सर्व अन्न बालते ॥ ३ ॥
 धन्य हैं आज हम दान सम्यक् करें, पात्र उत्तम महा पापके दुख दरें ।
 पुण्य सम्पत्त अरें काज हमरे सरें, आप स्वप्न होयके जन्म स्वप्नगर तरें ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्री कृष्ण तीर्थंकर मुनीन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(२) भगवानका क्षपकभेणीपर आरूढ़ होना—श्वरे १० बजे तक आहारदानकी विधि हो जावे । दो घंटे छुट्टी रहे । १२ बजेसे मंडपमें कार्य प्रारंभ किया जावे । १२॥ बजे सर्व समूह टिकटों द्वारा एकत्र किया जावे । आज ज्ञानकल्याणक होकर शाम तक प्रभुका नगरमें विहार व उपदेश होजावे । रात्रिको मंडपमें उपदेश हो । विहार करनेके लिये यथायोग्य जुलूस तैयार रहे । रथपर प्रभुका विहार हो जो २ घंटेके भीतर लौट आवे । रास्तेमें चार जगह सामिग्राना रहे । ऐसा रास्ता लिया जावे जो जाते हुए दूबारा हो व आते हुए दूबारा हो । जब विहार होवे जो सामियाना हो, वहा रथ ठहर जावे, वहा १ भजन व २० भिन्न घर्मोपदेश हो । मंडपमें दूबरे चबूतरेपर एक घनकी शोभा तैयार की जावे, कुछ गमले रख दिये जावे व एक छायादार वृक्ष रहे जिसके नीचे उच्च शिवापर भगवान् अकेले तप करते हुए बैठे हों ऐसी रचना उच्च वृक्षकी स्थापनाके लिये नीचेका श्लोक पढ़ उच्चपर पुष्प क्षेपे—

शाखाच्छायेन योसौ हरति खलु सतां कर्मधर्मांशुतापम् ।

यः सौख्योदारसारं फलति शुभफलं मोक्षनाकादिभेदम् ॥

सेधते धं तदर्थं त्रिभुवनखगा यस्य चैवं प्रभावः ।

संगाजातो हि तस्य त्रिभुवनमहितः सोस्तु बोधिद्रुमोऽयम् ॥ १ ॥

जिस शिवापर आचार्य विराजमान करे उच्चसे ऊपर मातृका यंत्र नीचे प्रमाण लिखदे । फिर प्रतिमाजीको विराजमान करे ।

मातृका मंत्र ।

ॐ नमो	क ख ग घ ङ			च छ ज झ ञ
वा ष स ह	अं अः	अ आ	इ ई	ट ठ ड ढ ण
	ओ औ	ह्र	उ ऊ	
	ए ऐ	ल लृ	ऋ ॠ	
य र ल व	प फ ब भ म			त थ द ध न

ह्रीं ह्रीं क्रौं स्वाहा ।

और इषी मंत्रको १०८ बार पढ़कर आगे जलधारा देवे ।

मातृका मंत्र ।

ॐ नमोऽई अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, वा ष स ह, ह्रीं ह्रीं क्रौं स्वाहा ।

फिर परदा उठावे तब सब जयजयकार शब्द कहें । दूसरे चतुरेपर शिवाय आचार्यके और कोई न हो । सूचक पात्र एक कोनेमें खड़ा हुआ कहे कि भगवान् ध्यानमें मग्न हैं तपस्या कर रहे हैं । आचार्यके पात्र पूजनकी कामग्री हो ।

२-३ थिनट ठहरकर आचार्य उठे और प्रतिमाजीको नमस्कार करता हुआ यह स्तुति पढ़े—

छन्द मुक्तादान—नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु सुनीश । परम तपके करतार रिषीश ॥
न मोह न भान न क्रोध न लोभ । न हास्य न खेद न द्रोह न क्षोभ ॥ १ ॥

ममत्त्व न राग पदारथ सर्व । चिदात्म वेदत छांडित गर्व ॥
 सु भेद विज्ञान जगो चित वीच । सु आत्म अनुभव लाघत खींच ॥ २ ॥
 स्वतत्त्व रमन्त करत निज काज । कषाय रिपु दलनेको आज ॥
 लियो सत ध्यान मई अति सार । नमूं तुमको जिन कर्म निधार ॥ ३ ॥

फिर नीचेका श्लोक पढ़कर अर्थ देवे ।

बाह्याभ्यन्तरभेदतो द्विविधता तत्रापि षट्भेदकं, बाह्यार्वांतरसेधितस्वविभयप्रत्यूहनिणोशनत् ।
 भक्ष्याभावतदूनतात्रपरीसंख्यानषट्स्वादान्मोहैकांतशयासनांगकदनान्येधं तु बाह्यं तपः ॥ ८४४ ॥
 ॐ हीं गनशनापमोदर्यवृत्तिपरिंख्यानरुपरिंख्यानैकांतशयासनांगकदनान्येधं षट्प्रकार बाह्यतपोषारकाय जिनाय अर्थ नि० स्वाहा ।
 अंत्ये दोषविसंगतो न अब्रति प्रायश्चित्तानां क्रमो, नो पा यज्ञ धिनेयताव्युपरभादौपाधिकस्योद्भवः ।
 नान्यत्र स्थिनिसत्सु साधुषु तथा वैयावृतेः प्रक्रमो, नो पा यज्ञसुशीलं त्विति परंपर्येण बोधं जिने ॥८४५॥
 व्युत्सर्गं प्रतिवासरं प्रसक्तौ ध्यानं स्वमाध्यायन, आख्यासाप्रशुषाचरस्पतिकृतेर्भोगंप्रलं भावनात् ।
 गाढोत्कृष्टसंहनस्य जिनपस्थार्येति संरूढितः, क्लृप्तं तच्छुचि नात्र तत्कलग्नैः संपूजयाम्पादरात् ॥८४६॥

ॐ हीं पायश्चित्तियन्यैः ग्राह्यस्वाश्यायव्यु र्गंध्यान षट्प्रकारातरगतपोनिष्ठाय जिनाय अर्थ निर्वाणोति स्वाहा ।
 यहांपर सूचक कहदे कि प्रसु १ २ तपका बाधन कर रहे हैं, धर्मध्यानमें मग्न है ।

दोहा—अप्रमत्त ध्यानक चढ़े, अवःकरणमें लीन । क्षपक श्रेणिका यत्न है, कर्म करे अति दीन ॥
 सम्यक्त घातक प्रकृति, सात नहीं प्रशु पास । देव नरक तिर्यञ्चगति, नहीं तहां है वास ॥

ॐ हीं अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती अघःकरणप्रवृत्त मिथ्यात्वादि दशकर्मवृत्तारहित श्रीजिनाय अर्थ ।

यहां दो आचार्य या सूचकपात्र धमाको समझा दे कि भगवान क्षाकश्रेणीपर चढ़ने का उद्यम कर रहे हैं । सातिशय अप्रमत्त गुण-स्थानमें अघःकरण लब्धिको प्रारम्भ किया है । यहां भगवान्की आत्मामें १० प्रकृति नहीं है ।

दोहा—फिर अपूर्व ध्यानक चढ़े, सुहृत्मान गहलीन । मोह-अस्ति विध्वंशके, साध अपूरव कीन ।

ॐ हीं अपूर्वगुणस्थानारूढ श्रीजिनाय गर्व । यद्वा समझाया जाय कि प्रसु क्षाकश्रेणीमें चढ़े, आठवें गुणस्थानमें जाकर मोहती २१ प्रकृतियोंके बन्धनो निर्वल कर रहे है । (४ अनन्तानुबन्धी सिवाय)—

प्रतिष्ठा-

॥१३६॥

दोहा—थानक अनिवृत्ती चढ़े, शुद्ध भाव असि धार । त्रिंशत् छः कर्मन प्रकृति, कीना प्रसु संहार ॥
नरकगति तिर्यच गति, और आनुपूर्वीय । एक बे ते चहुं जातिको, उद्योता तप लीय ॥
थावर सूक्ष्म साधारणे, खोदी निद्रा तीन । विंशति प्रकृति कषायकी, लोभ विना क्षय लीन ॥

ॐ ही अनिवृत्तिगुणस्थानारूढषट्त्रिंशत्प्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहा प्रकट किया जाय कि प्रमुने शुक्लध्यानकी अग्निसे ३६ कर्मोंका क्षय कर डाला ।

दोहा—सूक्ष्म कषाय सुथानमें, चढ़े नाथ अति धीर । लोभ प्रकृति नाशी सकल, मोह हृत्यो जगवीर ॥

ॐ ही सूक्ष्मकषायगुणस्थानारूढलोभप्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहा सूचना हो कि १० बें में लोभका नाश किया ।

दोहा—बारम क्षीण कषाय गुण, चढ़े प्रभू बलवान । द्विंताय शुल्ल ध्यायत भये, एक भाव असलान ॥

ॐ ही क्षीणकषायगुणस्थानारूढएकत्वविनर्केवीचार शुक्लध्यानधारकाय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(२) तिलकदान विधि—फिर आचार्य खड़े हो बहुत विनयसे चारित्रभक्ति पढ़े और नीचे लिखे मंत्र पढ़े । इष्टसमय दुःप्र शुभ हो ।
ॐ हां हीं हूं हीं हः अघि आ उ वा एहि ष्वौषट् । ॐ हां हीं हूं हीं हः अपि आ उ वा अत्र तिष्ठ ठः ठः ॐ हां हीं हूं हीं हः

असि आ उ वा अत्र मम सन्निहितो भव भव षषट् । फिर नीचे लिखे मंत्रका १०८ दफे जाप करे ।

ॐ हीं श्री अर्ह असि आ उ वा अप्रतिहत शक्तिर्मवतु हीं स्वाहा । यह जाप करके फिर सुगंधित केशसे प्रतिमाके नाभिस्थानमें घोनेकी पलाईसे हं ऐवा लिखे—(४) अधिवासना विधि—फिर जल चन्दनादि चढ़ावे—

सुगन्धिशीतलैः स्वच्छैः साधुभिर्विर्मलैर्जलैः, अनन्तज्ञानहृवीर्यं सुखरूपं जिनं यजे ।

ॐ हीं श्री नमः परमेष्विभ्यः स्वाहा जलं ।

काश्मीरचन्दनरसेन विलुब्धशुभ्रभत्सौम्यमत्तमधुपाथलिशंकृतेन ।

पीठस्थलीं जिनपतेरधिपादपद्मं, संचर्चयामि सुनिभिः परितः पवित्राः ॥ ८५२ ॥

ॐ हीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु चन्दनं गृहाण गृहाण स्वाहा । चन्दन चढ़ावे ।

मुक्ताफलच्छविपराजितकामकांतिप्रोद्भूतमोहतिमिरैकफलयहेतु ।

शात्पक्षतार्थपरिपूणपवित्रपात्रप्रसुत्तारयामि भवतो जिनपस्य पार्श्वे ॥ ८५३ ॥

ॐ

सौरभ्यसांद्रमकरंदमनोऽभिरामपुष्पैः सुवर्णहरिचन्दनपारिजातैः ।
 श्रीमोक्षसानिवृत्तितापरिलभनाय, माल्यादिभिश्चरणधोरणिमुत्सुजामि ॥ ८५४ ॥
 ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु पुष्पाणि गृहाण गृहाण स्वाहा । पुष्पं ।
 षष्ठोपवासाविभ्रये नवसर्पिषाक्तनैवेद्यभाजनमिदं परिवर्त्य सप्त ।
 वारं तदीयपरिहृत्यभिधाप्रसिद्धये संस्थापयेज्जनवराग्रिमभूतघाड्यां ॥ ८५३ ॥
 ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु नैवेद्य गृहाण गृहाण स्वाहा ।
 स्फूर्जन्मयूखविततिप्रहतांधकारं, दीपं घृतादिमणित्वविशालशोभं ।
 उद्भिन्नशुक्लयुगलांतिमभागभाजो, देहद्यति द्विगुणकोटियुतां करोमि ॥ ८५७ ॥
 ॐ ह्रीं प्रज्वल प्रज्वल अमि-तेजसे दीप गृहाण गृहाण स्वाहा ।
 कर्पूरचन्दनपराणसुरम्यधूपक्षेपोऽतु मे सकलकर्महतिप्रधानः ।
 इत्येषभावमभिधाय हसंतिकायामुत्क्षेपयामि किल धूपसमूहमेनं ॥ ८५८ ॥
 ॐ ह्रीं पर्वतो दह दह तेजोऽधिपतये समूहभूताय धूप गृहाण गृहाण स्वाहा ।
 कर्मोष्टकापहरणं फलमस्ति मुख्यं, तत्पाशिसम्मुखतया स्थितवानसि त्वं ।
 यस्मादनेकगुणलास्यकलानिधानधाम्नस्तवस्थलमदभ्रफलैर्घजामि ॥ ८५९ ॥
 ॐ ह्रीं आश्रितजनाभिमतफलानि ददातु ददातु स्वाहा ।
 त्रैलोक्याभपदं त्रिकालपतिताशेषार्थपर्यघजाननानन्तविकल्पनस्फुटकरं संसारचक्रोत्तरं ।
 ज्योतिः केवलनामचक्रमवतो ध्यानावतानप्रभोर्योऽयं तुर्यद्विशंशनक्षणमहः कोप्येष जीयात्पुनः ॥ ८६० ॥
 ॐ ह्रीं नमोऽर्हते द्वितीयशुद्ध्यानोपात्यप्रमयाय अर्घ ।
 यस्याश्रयेण सकलाघतृणौघदाहशक्तिवमाप चरितं चरितं जनेन ।
 तत्त्वारूपध्वतयस्वरूपमास्य चारमन्त्यं यथाख्यमगमत्परिपूर्णतांगं ॥ ८६१ ॥
 ॐ ह्रीं यथाख्यातचारित्रधारकाय जिनाय अर्घ यद्वांतक अधिवापना विधि हुई—

(५) श्री मुखोद्घाटन क्रिया—

नूनं निरावृत्तिबलकृत्कारि तेजो, नो ह्यकगमोश्चिरवसामपि बभूवनाम् ।
इत्येषमपि नयानयनेन शंभोरेण सुखाश्रयद्वयसुखाकारोमि ॥ ८६५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्व शरीरावस्थिताय समदन फलं वस धाम्यथुत मुत्र वस ददामि स्वाहा ।

इतना कहे तब परदा पड जावे—सूचक कहे कि भगवान्को केवलज्ञान होनेवाला है । जबतक परदा न उठे आप वन मनमें णमोकार मंत्रका जाप करे व सिद्ध परमात्माका ध्यान करे । आचार्य परदेके भीतर होजाय कोई तरफ दिखाप न हो । इस समय यदि कोई मुनि महाराज ही या ऐलक या खुल्लरु या चारित्रवान् प्रतिमाधारी ब्रह्मचारो हों तो उनके आचार्य भीतर ले ले । यदि न हों तो कोई दर्ज नहीं है । एक शुद्ध ब्रह्ममें घात प्रकार अनाज बावकार मुखपर ढककर लपेट दे । तथा आगे जौकी माला रख दे ।

फिर आचार्य नम्र होजावे व ऐलकादि भी नम्र होजावे । ॐ नमः सिद्धेभ्यः ऐषा मत्र पठे । आचार्य इस मंत्रको पढ़ते हुए चारोंतरफ जलधारा दे सिद्धचक्र यंत्रको पाध रखकर नीचे लिखी स्तुति पढे, हाथ दोनों जोड खड़े रहे ।

स्वस्ति श्रीऋषभो देवोऽजिनः स्वस्त्यस्तु संभवः । अश्विनंदननासा च स्वस्ति श्रीसुमति प्रभुः ॥ ८६१ ॥
पद्मपद्मः स्वस्ति देवः सुपार्थ्यः स्वस्ति जायतां । चंद्रपद्मः स्वस्ति नोऽस्तु पुष्टपदं तत्र शीतलः ॥ ८६२ ॥
श्रेयान् स्वस्ति चासुशुभ्यो विमलः स्वस्त्यनंतजित् । प्रमो जिनः सदा स्वस्ति कांति कुंथुश्च स्वस्त्यरः ८६३ ॥
मल्लिनाथः स्वस्ति मुनिसुव्रतः स्वस्ति वै नसिः । नेमिजिनः स्वस्ति पार्थ्वो वीरः स्वस्ति जायतां । ८६४ ॥
भूतशिविजिनः स्वै स्वस्ति श्रीसिद्धनाथकाः । स्वाचार्य स्वस्त्युपाध्यायः साधवः स्वस्ति संतु नः ॥ ८६५ ॥

यह पढ़कर पुष्पाजलि देवे । फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर मुखके ऊपरसे कपडेको हटाके ।

अथारुघातं प्रांतोदयधरणिधृन्सूर्दंनि प्रकाशोल्लासाभया गुणपदुपयुंजं स्त्रिसुवनं ।

दधत्स्योतिः स्वायंभवमयगतावृत्यपपथो मुखोद्घाटं लक्ष्म्यां व्रजतु यवनीं दूरसुनयेत् ॥ ८६६ ॥

ॐ उग्रहादिवड्डमाण पंचमहाकलाणसंपण्णाण महइमहावीरवड्डमाणसामीणं सिजउ मे महइमहाविजा बट्टमहापाडिहेरबहियणं पयककलाघराणं बज्जाजादरूथानं च उतीबातिमयविसेचजुतोणं बत्तीवदेवीदमणिमययमहियणं बयल्लोयस्स संतिपुट्ठिक्कल्लाणाउआरोम-
काराणं वल्लदेववासुदेवचक्रहरिर्विमुणिजदिअणगारोवमूढाण उदध्लोयसुदफळगराण शुइभयबहस्सभणिलयाण परारपरमप्पाणं अणाहिणिहणाणं बल्लिवाहुत्रलिपदाण वीरे ॐ ह्रीं क्षा सेणवीरे वड्डमाणवीरे णहंसंजयंतवारीए वल्लसल्लयंभगायाण इस्सदंबंमपइट्ठियाणं उग्रहाइवीरसंगल-
महापुरिमाणं णिच्चकालपइट्ठियाणं इत्थंअणिहिया मे भवतु ठः ठः क्ष क्ष स्वाहा । यह श्री मुखोद्घाटन क्रिया हुई—

(६) नयनोन्मीलन क्रिया—फिर रकावीमें कपूर जलाकर सुवर्णकी पलाईको रखे और दाहने हाथमें लेकर बोट मंत्रको ध्याता हुआ तथा १०८ दफे 'ॐ ह्रीं श्रीं अहं नमः' पढ़े। फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर नेत्रमें पलाई फेरे—

येनावदुनिरूढकर्मविकृतिपालंबिका निधुर्णि, छिन्नारत्नानमजं स्थयसुधमपूर्वीयं स्वयं प्रासवान् ।

सोऽयं मोक्षरमाकटाक्षस्रणिप्रेमास्पदः श्राजिनः, लाक्षादस्र निरूपितः स खलु मां पाथादपाचारददा ॥८६७॥

ॐ गमो अरहताण णाणदसणचकुमुयाण अभियरघायणविमकतेयाण धंति तु क्क पुट्ठि धरदस्रमादिठेणं व झ अमिय वरघीण स्वाहा । यह मंत्र जयसेन कृत पाठमें है। नेमचन्द्र कृत पाठमें यह मंत्र है—“ ॐ ह्रीं अहं नमो अरहंताण असि आ ल घा श्रीं ॐ ह्रीं ह्रीं ” त्रिकाल त्रिलोकपूजित सर्वज्ञधित रक्त नील काचन कृष्ण नेत्रोन्मीलनानतज्ञान अनतदर्शन, अनतवीर्य, अनंतसुखात्मकाय नयनोन्मीलनं विदधामि श्रवौषट् । फिर आचार्य और मुनि आदि जो हों सो मिलकर सूरिमंत्र पढ़े—

ॐ ह्रीं गमोअरहंताण गमोसिद्धाण गमोआइरीयाण गमोउवञ्जायाण गमो लोए षव्वसाहूणं, चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगल, साहूमंगल, केवल्लिपणत्तोघम्ममंगलं । चत्तारिलोकोत्तमा—अरहत्तलोकोत्तमा सिद्धलोकोत्तमा साहूलोकोत्तमा, केवल्लिपणत्तो घम्मलोकोत्तमा । चत्तारिघरणं पव्वज्जामि अरंतघरण पव्वज्जामि सिद्धघरण पव्वज्जामि साहूघरणं पव्वज्जामि केवल्लिपणत्तो घम्मंघरणं पव्वज्जामि । कौ ही स्वाहा । दोनों कानोंमें पढ़कर पुष्प प्रतिमापर क्षेपे तथा वर्षक्षपना प्रगट करे ।

नोट—सूरिमंत्रके देनेका वर्णन मात्र जयसेन पाठमें है, आशाघर व नेमचन्द्र कृतमें नहीं है। हमने सूरिमंत्र क्या है ऐसा प्रश्न दो उदासीन प्रतिष्ठा करानेवालोंसे पूछा परन्तु उन्होंने भी जनाया नहीं। जयसेन पृ० १३६ में “ अथ सूरिमंत्र ” ऐसा लिखके आगे जो मंत्र लिखा था सो हमने नकल कर दिया है। यदि और कोई मंत्र हो तो प्राचीन प्रतिष्ठा करानेवाले उसे हो पढ़े व इध पुस्तकमें सुधार दें। किसी बातको छियाके रखना उचित नहीं है। फिर नीचेकी गाथा पढ़कर यवकी मालाको हटाले—

ॐ स्रत्तवखरगवभाणं अरहंताणं गमोत्थि भावेण । जो कुणइ अणणसणो सो गच्छइ उत्तमं ठाण ॥

फिर नीचेका श्लोक पढ़ अर्घ देवे ।

शुक्लद्वयेन परिहृत्य तपोधितानभारमानमाशु परिश्लृप्य कृतावकाशं ।

ज्ञानावलोकनस्रभत्यनाशापन्मोहस्य पूर्वदलनेन समस्तभावात् ॥ ८४८ ॥

ॐ ह्रीं मोहनीय ज्ञानदर्शनानवरणान्तराय निर्नाशकाय जिनाय अर्घं निर्वपामोति स्वाहा ।

फिर नीचेकी गाथा पढ़कर पुष्प प्रतिमापर डाले—

ॐ केवल गणद्विवायरकिरणफलावपणासिपणणे गवकेवललदूधूगमसुजणियपरमपपषएसो । असहायणाणं सणवहिओ इदिकेवली होदि । जोयेण जुत्तो ति स जोणिजिणो अणाहिणिहणारिसे बुत्तो ॥

इत्येषाऽईन् षाक्षादवतीर्णो विश्व पातु इति स्वाहा ।

तब बाहर वाले बजने लगे। आचार्य भगवानके आगे बहुतसा कपूर जलता हुआ रक्खे और परदा उठे तब सब जय जय कहें। तब आचार्य व सूचक कहें कि भगवान्को केवलज्ञानकी प्राप्ति होगई है। आचार्य परदा खोलनेके पहले बल पहन ले। फिर आचार्य बहुत दिनयसे नमस्कार करे और नीचे लिखी स्तुति पढ़े। स्तुतिके पीछे नमन करके यह सूचित करे कि भगवानने दूसरे ब्रह्मध्यानसे १६ प्रकृतियोंका नाश किया। ज्ञानावराणीय ५, दर्शनावराणीय ६, अन्तराय ५, -४-७ पहले नार्शी थीं इस तरह ६३ प्रकृतियोंको नाशकर या चार घातिया कर्म नाशकर भगवान्ने केवलज्ञान प्राप्त किया है।

स्तुति।

पद्मरी छन्द—जय केवलज्ञान प्रकाश धरं । ज्ञान वराणाय विनाश करं ॥
 जय केवल दर्शन नायक हो । दर्शन आवरणी घायक हो ॥ १ ॥
 जय वीर्य अनन्त प्रकाशक हो । जय अन्तराय अघ नाशक हो ॥
 तुम मोह बली क्षय कारक हो । क्षायिक समकितके धारक हो ॥ २ ॥
 क्षायिक चारित्र विशाल धरं । आनन्द अनन्त प्रकाश धरं ॥
 जग मांहि अपूरव सुरज हो । विक्रसन भवि जीवन नीरज हो ॥ ३ ॥
 मिथ्यात्व महा तम टालन हो । शिव भग उत्तम वरशावन हो ॥
 तुम तारण तरण तरंड वरं । सुखधारण रत्नकरण्ड वरं ॥ ४ ॥

५ मिनट तक भगवानका दर्शन सब आने २ यहा बैठे हुए कर चुकें कि परदा गिर जावे। परदेके बाहर इन्द्र आता है, तभीके साथ कुबेरदेव भी आता है। इन्द्र सबकी तरफ संकेत करके कहता है—

कुबेर ! अभी ही तीर्थनायक श्री ऋषभदेवका केवलज्ञानका प्रकाश हुआ है। तीर्थप्रचार करनेका अवसर उपस्थित हुआ है। तुम शीघ्र समवशरणकी रचना तैयार करो, हम सब इन्द्रादि देव आते हैं। प्रभुकी भक्तिकर व उत्तम धर्माभूत पीकर तुमिता पांयगे और अपने भवभवके पापोंका सहार करेंगे। कुबेर नमन कर कहता है—“जो आज्ञा”—पहले कुबेर जाता है फिर इन्द्र भी आते हैं।

(८) समवशरण रचना व पूजा—परदेके भीतर समवशरणकी रचना तैयार की जाती है। वनकी रचना तुर्त हटानी चाहिये। गंधकुटी विराजमान करके तीन छत्र रों, दोनों तरफ दो इन्द्र चमर ढारते हों, बिहाबन हो, भामंडल हो, आगे आठ मंगलद्रव्य हों। गंधकुटीके आगे २४ कोठोंका मंडला एक छोटी चौकीपर रचा हुआ सुन्दर रक्खा जाय, आगे पूजा करनेका सामान हो, आगे चढ़ानेके लिये कुछ रक्खा जाय। इसतरह रचना बन जावे। वृक्ष जो पहले या वह गंधकुटीके पीछे रहने दिया जावे। यदि समवशरणके नकशेका

परदा हो तो एक तरफ टांग दिया जावे । यदि तीन कटनीदार चबूतरा हो व तबपर गंधकुटो रहे तो ओर भी ठीक है । पहली कटनीपर आठ मगलद्रव्य हों व धर्मचक्र हों, दूसरी कटनीपर ध्वजाएं हों क्योंकि भगवान अन्तरीक्ष विराजते हैं इबलिये रफटिक कमलाकार व शीशेका कमलाकार विद्याचक्र हो तो ओर भी शोभा हो । इब तरह रचना होनेपर परदा लठे । तब समय “श्री वृषभदेवके प्रभवशरणकी जय” ऐसे शब्द चारों ओरसे हार्वें ।

इतनेहीमें सौधर्म इन्द्र व अन्य इन्द्रदेवोंके साथ व इन्द्राणी कुछ अन्य देवियोंके साथ बाजा बजाते हुए जय जय शब्द कहते हुए मंडपमें पधारे व पुण्यांजलि देकर नमस्कार करे । एक ओर इन्द्र तथा आचार्य पूजा करे, इधर उधर इन्द्राणी पूजा करे । इधर उधर प्रामान पूजाका रक्खा हो । सब बैठे हों । तब नीचे प्रमाण अर्घ चढ़ावें—

सत्तामात्रग्राहकं दर्शनं च, तदुभैदानां ग्राहकं ज्ञानमुक्तं ।

ताभ्यां स्वास्थं पूर्णमुक्तं सुखं तच्छक्तेर्व्यक्तिर्वीर्यमत्रार्चयामि ॥ ८६९ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽइते भगवतेऽनंतज्ञानदर्शनसुखवीर्यविभ्राजते जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यहां आचार्य या सूक्तपात्र चार चतुष्टयको १ मिनटके भीतर समझादे ।

सम्यक्त्वं चरितं सुबोधनहृशी वीर्यं तदिलोभको,

भोगोपादिसुजी हि यस्य नवकं लब्धैः सदा क्षायिक ।

सम्पन्नं खलु केषलोद्गमनतस्तं सांप्रतं ध्यायतो,

विद्वानां निचयः प्रणाशनमियात्तसंःसृतिप्रार्थनात् ॥ ८७० ॥

ॐ ह्रीं नमोऽइते भगवते नवकेवललब्धिभ्यो अर्घं । यहां नव केवल लब्धियोंको समझा दिया जावे । (क्षायियभ्यक्त, क्षायिकचारित्र, अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, अनन्तदान, अनन्तलाम अनन्तभोग, अनन्तउपभोग ।)

सौमिष्य सुकुरोपमक्षितिरथा व्योमक्रमप्रक्रमः, प्राणघातविनिर्गमश्च कवलाहारव्यपायः परैः ।

अक्रेशोपचयश्चतुर्मुखहृशिविद्येश्वरत्व तनो-रच्छायत्वमकेशवृद्धिरिति वै दिक्संरूपकोः केवले ॥ ८७१ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽइते भगवते दशकेवलातिशयेभ्यऽर्घम् । (यहां १० अतिशय समझा दी जावे ।) १ सुभिक्षपना, २ दर्पण प्रामान पृथ्वी, ३ आकाशकी निर्मलता, ४ प्राणिवृषका अभाव ५ कवलाहारका अभाव, ६ उपवर्गका अभाव, ७ चार मुख दीखना, ८ सर्व विषा ईश्वरपना, ९ शरीरकी छाया न पडना, १० नखकेश न बढना ।

दिव्या वाग् जनसौहृदं प्रतिपदं सर्वाह्णगोत्रारुहा, भूरादर्शतला मृदुस्वसनसन्मोदो तु भूः शालिनी ।
सौरभ्यांबुधरी सुवृष्टिरमला पादकब्जाधोतले, स्वच्छांभोरुहनिर्मितिः खममलं द्विगुसंभदश्चक्रकं ॥ ८७२ ॥
धर्मोख्यां पुरतश्च सज्जनमनोमिथ्यास्वस्फेदनं, देवाह्वानपरशपाधिकमुदा सन्मंगलाष्टाविति ।

दिव्यातीथयसंयुतो जिनपतिः शक्राज्ञया रैसुचा, कल्लेते श्रीलम्बादिसंसृतिपदे अतिष्ठवांस्तान्मुदे ॥ ८७३ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽङ्गते भगवते चतुर्दशदेवकृतातिशयसम्पन्नाय जिनाय अर्घ्यं । (यहाँ १४ देवकृत अतिशय बताई जावे ।) १ अर्द्धमागधी दिव्यध्वनि, २ मैत्रीभाव प्रचार, ३ सर्वऋतुके फल फूल, ४ कटकरहित भूमि, ५ मंद सुगंध पवन, ६ सर्वधान्यमई क्षेत्र, ७ गन्धोदक वर्षा, ८ विहार समय सुवर्ण कमल रचना, ९ निर्मल आकाश, १० देवकृत परस्पर बुलाना, ११ धर्मचक्र, १२ आठ मंगल द्रव्य, १३ प्राणियोंमें मिथ्या भावका अभाव, १४ दिशाओंमें आनन्द) ।

(नोट—अन्य ग्रन्थमें ऊपरके १० अतिशयोंमें पलके न लगना है, दर्पण समान पृथ्वी नहीं है) ।

मानस्तम्भसरः न्यपुडपविपिनं स्रस्त्रातिका चाभितः, प्राकारादिसुनाद्यभूमिविपिने नाकालयक्षमारुहाः ।
स्तूपा ह्यर्यनतिर्ध्वजाबलिसभे सद्गुधवेदिक्रमोऽ-शोकोर्वीरुहसिहपादलभसिस्थायी जिनःपातु नः ॥ ८७४ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽङ्गते भगवते समवशरणविभूतिषण्णाय जिनाय अर्घ्यं । (यहाँ समवशरणका कुल भाव बता दिया जावे)—

खनस्यन्तित्वेऽपि गलप्रशोको, बभूवातिमदप्रसूनः ।

अनेकसंदर्शकशोकहारी, वृक्षो जिनेन्द्राश्रयणप्रभायात ॥ ८७५ ॥

ॐ ही अशोकपातिहार्यपन्नाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेयस्तरुः फलति नोऽमरसौख्यमुच्चैर्हर्षोत्सुकत्वपरिलम्बनसन्मिषेण ।

देवैः कुना सुमनसां परिवृष्टिरेषां, मोदं ददातु भवदुःखजुषां जनानां ॥ ८७६ ॥

ॐ ह्रीं देवकृतपुष्पवृष्टिमातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घ्यं । (यहाँ पुष्पोंकी वर्षा की जावे)—

त्रैलोक्यवस्तुमनतस्सरणावबोधो, येन स्वयं श्रवणगोचरतां गतेन ।

संजायते मुखरदौष्टविघातशून्यो, भूयाद् ध्वनिर्भवगदप्रसरातिहर्तो ॥ ८७७ ॥

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिप्रातिहार्यसन्नाय जिनाय अर्घ्यं ।

- यक्षेशपाणिलतिकाङ्कुरसंगतानि, तुर्याधिषष्टिगणनान्यपि देवनद्याः ।
 वीचित्रमाणि भवतो द्विकपाश्वयोस्ते, सत्रामराण्यघचयं मम निर्दलंतु ॥ ८७८ ॥
 ॐ ह्रीं चतुःषष्टिचामरातिहार्यपन्नाय जिनाय अर्घ्यं ।
 सिंहासने छविरियं जिनदेवतायाः, केषां मनोवधृतपापहरी न या स्यात् ।
 स्याद्वादसंस्कृतपदार्थगुणप्रकाशोऽस्या सेस्तु निर्दलमदाविलजातशक्तेः ॥ ८७९ ॥
 ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यपन्नाय जिनाय अर्घ्यं ।
 भाषण्डलेऽषष्यपृष्टिषागरदिमकलसे जनस्य अक्षयप्रकदर्शनेन ।
 अद्भानत्रासगुरुधर्मपरम्पराणां, गाढं अवेत्तदितदेवपतिर्नमस्यः ॥ ८८० ॥
 ॐ ह्रीं भाषण्डलप्रातिहार्यपन्नाय जिनाय अर्घ्यं ।
 देवस्य मोहविजयं परिशंसितु द्राक्, देवाः स्वहस्ततलतः परिवाहयन्ति ।
 वाद्यानि संगलनिवायक्राणि सद्यो, मिथ्यातथमोहजयिनः क्षुभगानि च स्युः ॥ ८८१ ॥
 ॐ ह्रीं दुदुभिप्रातिहार्यपन्नाय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 छत्रत्रयं जिनपसूर्धनि आस्रमानं, जैलोक्यराजपलितान्मभिरक्षयद् वा ।
 सोमार्कचह्वितिभं स्मितपीतरक्तनादिरंजितमिदं मम संगलाय ॥ ८८२ ॥
 ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्यपन्नाय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 तालातपत्रचक्ररथजसुप्रतीकभृगारदर्पणत्रयाः प्रतिषीथिचारं ।
 स्रन्मंगलानि पुरतो विलसन्ति यस्य, पादारविद्युगलं शिरसा वहामि ॥ ८८३ ॥
 ॐ ह्रीं अष्टमंगलद्रव्यसपन्न य जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 बुद्धीयासरनायिकार्यजहनी ज्योतिष्कद्वयंनरनागस्त्री अघनेच्छाकिंपुरुषस्रज्ज्योतिष्ककल्पामाराः ।
 मर्या या पञ्चमस्य यस्मिन् सिंहा आदित्यसंस्था बृषपीभूषं स्वभतानुरूपमखिलं स्वादंति तस्मै नमः ॥ ८८४ ॥
 ॐ ह्रीं द्वादशभामासपत्तिश्मन्नाय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 (यथा १२ समानं कौन्तेरं बठते हे सो जन्मसादे-१ मुनि, २ आर्यिका व श्राविका, ३ कल्पवाची देवी, ४ ज्योतिषी देवी,
 ५ व्यंतादेवी, ६ भगवतामी देवी, ७ भगवतामी देव, ८ व्यंतरदेव, ९ ज्योतिषी देव, १० कल्पवाची देव, ११ मनुष्य, १२ पशु) ।

आगे २४ कोठोंके मंडककी पूजा की जाय ।

गीताछंद-चौबीस जिनवर तीर्थकारी, ज्ञान कल्याण धरं । महिमा अपार प्रकाश जगमें, मोह मिथ्या तम हरं ॥
कीने बहुत भविजीव सुखिया, दुःखनागर उद्धरं । तिनकी चरणपूजा करें, तिन सब बने यह रुचि धरं ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पाजलि क्षिपेत् । (पुष्प डाले)

छंद चामरा-नीर लघाय शीतलं सहान भिष्टता धरे, गन्ध शुद्ध सेलिके पवित्र झारिका भरे ।

नाथ चौविसों सहान वर्तमान कालके, बोध उत्सवं करूं प्रसाद सब डालके ॥

ॐ ह्रीं एषभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्वेत चन्दन सुगन्धयुक्त सार लालके, पात्रमें धराय शांतिकारणे चढ़ायके ॥ नाथ० ॥ चन्दनं ॥

नन्दुलं सले सुश्वेत वर्णं शीघ्र लाहये, पाय गुण सु अक्षतं अतृप्तिना नशाहये ॥ नाथ० ॥ अक्षतं ॥

वर्णं वण पुष्प सार लाहये चुनायके, काम कष्ट नाश हेतु पूजिये स्वभायके ॥ नाथ० ॥ पुष्प ॥

क्षीर मोदकादि शुद्ध तुतं हो बनाहये, भूखरोग नाश हेतु वर्णमें चढ़ाहये ॥ नाथ० ॥ नैवेद्यं ॥

दीप धार रत्नमय प्रकाशना सहान है, मोह अंधकार हार होत स्वच्छ ज्ञान है ॥ नाथ० ॥ दीपं ॥

धूप गन्ध सार लाय धूपदान खेहये, कर्म आठको जलाय आप आप वेहये ॥ नाथ० ॥ धूपं ॥

लौंग औ बदाम आम्र आदि पक्क फल लिये, सु सुक्तिधाम पायके स्वआत्म अमृत पिये ॥ नाथ० ॥ फलं ॥

तोय गंध अक्षतं सु पुष्प चारु चरु धरे, दीप धूप फल मिलाय अर्घ देय सुख करे ॥ नाथ० ॥ अर्घ्यं ॥

छंद चाली-एकादशि फागुन वदिकी, मरुदेवी माता जिनकी ।

हत घाती केवल पायो, पूजत हम चित उमगायो ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा एकादश्या श्रोत्रुषभनाथ जिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

एकादशि पूष सुदीको, अजितेश हतो घातीको । निर्मल निज ज्ञान उपाये, हम पूजत सम सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं पीषशुक्ला एकादश्यां श्री अजितनाथाय जिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

कार्तिक वदि चौथ सुहाई, सब केवल निधि पाई । भविजीवन बोध दियो है, मिथ्यामत नाश कियो है ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाचतुर्थ्यां श्रीसंभवनाथाय जिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

- चौदशिशुभपौषसुदीको, अभिनन्दनहनघातीको। केवलयाधर्मप्रचारा, पूजूं चरणाहितकारा॥
 ॐ ह्रीं पौषशुक्ल। चतुर्दशश्री अभिनन्दनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४)
- एकादशिशुभपौषसुदीको, जिनसुमतिज्ञानलब्धीको। पाकरभविजीवउधारे, हमपूजतभवहरतारे॥
 ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल। एकादशश्री सुमति। यजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५)
- मधुशुक्लापूरणमासी, पद्मपशुतत्रयअभ्यासी। केवललेतत्रप्रकाशा, हमपूजतसमसुखभाशा॥
 ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल। पूर्णमासीश्री पद्मपशुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६)
- छठिफागुनकीअंधयारी, चउघातीकर्मनिधारी। निर्मलनिजज्ञानउपाया, धनधनसुपार्श्वजिनराया॥
 ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा षष्ठ्यां श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७)
- फागुनवदिनौमिसुहाई, चन्द्रपधआतमध्याई। हनघातीकेवलपाया, हमपूजतसुखउपजाया॥
 ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा नवम्यां श्री चन्द्रपशुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८)
- कार्तिकसुखिदुतियाजानो, श्रीपुष्पदंतअगवानो। रजहरकेवलदरशानो, हमपूजतपापविलानो॥
 ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ल। द्वितीयां श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९)
- चौदसिवदिपौषसुहानी, शीतलप्रसुकेवलज्ञानी। भयकासंतापहटाया, समतासागरप्रगटाया॥
 ॐ ह्रीं पौषकृष्णा चतुर्दशश्री शीतलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१०)
- वदिमाघअमावसिजानो, श्रेयांसज्ञानउपजानो। सुखजगमेंश्रेयकराया, हमपूजतमंगलपाया॥
 ॐ ह्रीं माघकृष्णा अमावस्याश्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११)
- शुभदुतियामाघसुदीको, पायोकेवललब्धीको। श्रीबासुपूज्यअवितारी, हमपूजतअष्टप्रकारी॥
 ॐ ह्रीं माघशुक्ल। द्वितीयां श्री बासुपूज्यजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१२)
- छठिमाघवदीहटघाती, केवललब्धीसुखलाती। पाईश्रीविमलजिनेशा, हमपूजतकटककलेशा॥
 ॐ ह्रीं माघकृष्णा षष्ठ्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१३)
- वदिचैत्रअमावसिगाई, निसुकेवलज्ञानउपाई। पूजूंअनन्तजिनचरणा, जोहैंअशरणकेक्षरणा॥
 ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्याश्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रसाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१४)
- मासांतपौषदिनभारी, श्रीधर्मनाथहितकारी। पायोकेवलसद्बोध, हमपूजूंछांडकुबोध॥

- ॐ ह्रीं पौषपूर्णिमायाम् श्री वर्मनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)
- सुदि पूस इकादसि जानी, श्री शांतिनाथ सुखदानी । लहि केवल धर्म वृत्ताय, पूजूं मैं अघ हरतारा ॥**
- ॐ ह्रीं पौषशुक्लाएकादश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)
- बदि चैत्र तृतीया स्वामी, कुन्धुनाथ गुण धामी । निमल केवल उपजायो, ह्येष पूजत ज्ञान बढ़ायो ॥**
- ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णातृतीया श्री कुन्धुनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)
- कार्तिक सुदि बारत्र जानो, लहि केवलज्ञान प्रमाणो । परतरुष निजरुष प्रकाशा, अरनाथ जजो हतकाशा ॥**
- ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वादश्या श्री अरनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)
- बदि पूष द्वितीया जाना, श्री मल्लिनाथ भगधाना । हत घाती केवल पाए, हम पूजत ध्यान लगाए ॥**
- ॐ ह्रीं पौषकृष्णाद्वितीयां श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानतपकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)
- वैशाख बदि नौमीको, सुनिसुन्नग जिन केवलको । लहि वीर्य अनन्त खम्हार, पूजूं मैं सुख करतारा ॥**
- ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णानवम्यां श्री सुनिसुन्नगजिनेन्द्राय ज्ञान कल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)
- अगहन सुदि ग्यारस आप, नमिनाथ ध्यान लौ लाए । पाया केवल सुखदाई, हल पूजत चित्त हरवाई ॥**
- ॐ ह्रीं अगहनशुक्ला एकादश्या श्री नमिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)
- पडिवा शुभ कार सुदीको, श्री नैमनाथ जिनजीको । इच्छो केवल मत ज्ञानं, हस पूजत ही दुख हानं ॥**
- ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदाया श्री नैमनाथजिनेन्द्राय ज्ञानतपकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)
- तिथि चैत्र चतुर्थी श्यामा, श्री पार्श्वप्रभू गुण धामा । केवल लहि तरुष प्रकाशा, हस पूजत कर शिव आशा ॥**
- ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाचतुर्थ्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)
- दशमी वैशाख सुदीको, श्री वर्द्धमान जिनजीको । उपजो केवल सुखदाई, हम पूजत विघ्न नशाई ॥**
- ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लादशम्या श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्रप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

सृष्टिणी छन्द-स्तुति-जय ऋषभनाथजी ज्ञानके आगरा, घातिथा घातकर आप केवल बरा ।

कर्मबन्धनमई सांक्रला तोड़कर, आपका स्वाद ले स्वाद पर छोड़कर ॥ १ ॥

धन्य तू धन्य तू धन्य तू नाथजी, सर्व व्याधू नमें तोड़िको नाथजी ।

दर्श तेरा करै ताप मिट जात है, मर्म भाजें सभी पाप हट जात है ॥ २ ॥

धम्य पुरुषार्थे तेरा महा अद्भुतं, मोहसा शत्रु मारा त्रिघाती हतं ।
 जीत त्रैलोक्यको सर्वदर्शी भए, कर्म सेना हती दुर्ग चेतन लए ॥ २ ॥
 आप सत तीर्थ त्रय रत्नसे निर्मिता, भव्य लेखें शरण हौं भव भव रिता ।
 वे कुशलसे तिरें संसृती आगरा, जाय जाध लहें सिद्ध सुन्दर घरा ॥ ४ ॥
 यह सख्यशर्ण भवि जीव सुख पात हैं, वाणि तेरी सुनं मन यही भात हैं ।
 नाथ दीजे हमें धर्म असृत सहा, इस बिना सुख नहीं दुःख भवमें सहा ॥ ५ ॥
 ना क्षुधा ना तृषा राग ना द्वेष है, खेद चिन्ता नहीं आति ना क्लेश है ।
 लोभ अद क्रोध माया नहीं लेश है, वन्दता हूं तुम्हें तू हि परमेश है ॥ ६ ॥

इन्द्र जगत्की स्तुतिको समाप्त ही न कर पाए कि इतनेमें ही समाप्त महाराज भरत व अन्य उनके कुछ भाई ऐसे ५-७ राजा अपनी २ स्त्री सहित अर्ध लिये आते हैं और विनय कारके रुटक चन्दनादि पदकर अर्ध चढ़ाते हैं । उष समय स्त्रियां एक तरफ व भरतादि पुरुष एक तरफ खड़े हो स्तुति पढते हैं—

पद्मी छन्द—जय परम ज्योति ब्रह्मा सुनीषा, जय आदिदेव वृषनाथ ईशा ।
 परमेशी परमात्म जिनेश, अजरासर अक्षय गुण विवेश ॥ १ ॥
 शङ्कर शिषकर हर सर्व मोह, योगी योगीश्वर काम द्रोह ।
 हो सूक्ष्म निरञ्जन सिद्ध बुद्ध, कर्माजन सेटन तोय शुद्ध ॥ २ ॥
 भवि कमल प्रकाशन रवि महान, उतम वागीश्वर राग हान ।
 हो वात द्वेष हो ब्रह्म रूप, समयगृष्टो गुण राज श्रुव ॥ ३ ॥
 निर्भल सुख इन्द्रिय रहित धार, सर्वज्ञ सर्वदर्शी अपार ।
 तुम धीर्य अनन्त धरो जिनेश, तुम गुण पावल नहिं गणेश ॥ ४ ॥
 तुम नाम लिये अघ दूर जाय, तुम दर्शनते भव भय नशाय ।
 स्वामिन् अथ तत्त्वतका प्रभेद, कहिये जासे हठे कर्म छेद ॥ ५ ॥

यह स्तुति पद नमस्कार कर सब यथायग्य बैठ जाते हैं । जब भारतजी आदि आए थे तब इन्द्र व आचार्य व इन्द्राणी सब यथायग्य बैठ गए थे ।

(२) भगवानका धर्मोपदेश—अब आचार्य मात्र उठते हैं। वे पूजा करते हैं। सूचक पात्र या अन्य विद्वान् ब्रह्माकी भगवानका उपदेश संक्षेपमें समझाता जाता है—

ज्ञानाभिन्नः सततचिद्रूपावृत्त एषोऽस्ति जीवोऽनाद्यंतः स्याच्छिन्नजगदितश्चक्रमायोगयोगात् ।
पर्यायार्थैर्नरसुरपशुश्वभ्रिभेदाद्विरर्थयाथातथैर्निष्ठुखचिदानंद एव ह्यसैरसीत् ॥ ८८५ ॥

ॐ ही जीवतत्त्वस्वरूपकाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

तब सूचकपात्र यह दोहा पढकर अर्थ करादे । पढ़ते यह कहे कि भगवानकी दिव्यध्वनि प्रारंभ हुई है। भगवान् तत्त्वोंको दर्शाते हैं।
दोहा—जीव अनादि अनन्त है, चैतन्यप्रथ अविकार । कर्मबन्ध ते जग अर्थे, कर्म छूटे अथ पार ॥

इमान्द इण्कृत्स्वको दोहा कहकर सूचक प्रस्था ता है ।

रूपी शशोद्विभिरपि गुणः स्वः प्रधानैर्निरुक्तः, स्कंधाणुभ्यामनपुषिवृत्तिव्यापुलः पुद्गलः स्यात् ।
कर्माकसंप्रकृतिनिगण्डेविश्वमापन्न्य हेतुर्बन्धयेति प्रथयति जिनं जल्पपर्यंतं नमामि ॥ ८८६ ॥

ॐ ही पुद्गलतत्त्वरूपकाय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—रूपी पुद्गल द्रव्य है, अपुं स्व अन्ध स्वरूप । कर्म और नौकर्मसे, बंधे जीव बहु रूप ॥
लोकस्थानां भवति गमने जाबनपुद्गलानां, हेतुर्धर्मः अद्वयाधिधौदास्यमाप्रमेयः ।
लोकालोकस्थितिधिभजनेऽप्राण एतं सु धर्मं, स्वास्मानं संगदति जिनपः सोऽस्तु मे क्लेशहत्ता ॥८८७॥

ॐ ही धर्मतत्त्वरूपकाय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—जिय पुद्गलके समनमें, उदासीन अहकार । लोकालोक धिभागकर, धर्म द्रव्य अविचार ॥
वैलक्षण्यं तत उपगतो जीवलत्पुद्गलानां, स्याता धर्मः अह्वरतयौदास्यमात्रेऽपि तेषाम् ।
एवं तस्य स्व भवनमसंदिश्यमानां जिनेन्द्रो, आहक्षणां अद्यविधिहतिं संकरोत्वात्मनीनां ॥ ८८८ ॥

ॐ ही अर्धमद्रव्यस्वरूपकाय जिनाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—जिय पुद्गलके धंमनमें, उदासीन सहकार । लोकव्यापि अमूर्त है, द्रव्य अधर्म निहार ॥
जीवाजीवाद्युपधृतितायाऽऽधारभूतो ह्यनंतो, अध्ये तस्य त्रिसुवनमिदं लोकनाम्ना पसिद्धं ।
सर्वेषां स्याद्वक्त्रकशनदः शून्यमूर्तिर्महांश्चाकाशोऽनन्निजगुणगणं वक्ति तं पूजयामि ॥ ८८९ ॥

ॐ ही आकाशद्रव्यस्वरूपकाय अर्धं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतिष्ठा-

॥१४९॥

दोहा-सर्वं द्रव्य अवकाश दे, हे अनन्त आकाश । मध्य लोक षट् द्रव्य मय, बाहर फक्ताकाश ॥
वस्तुद्रभूतागुणपरिणमस्यानुभूतेष्व हेतुः, ससार्थानां यदुपगमनादेव जाति विधत्ते ।
सोऽयं कालो व्यसहरणकार्यानुमेयः क्रियायां, कर्तृत्वादित्यकथयदिनो मुक्तिलक्ष्मीं ददातु ॥ ८९० ॥

ॐ ह्रीं काष्ठद्रव्यस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वस्तु परिणामन हेतु है, निश्चय काल प्रमाण । समय घटी दिन रात इति, व्यहृत् काल बखान ॥
कायस्थांतवषःक्रियापरिणनिर्योगः शुभो, चाऽशुभ-सकर्मो गमनायनं निजयुजो रागद्विषो रुद्रात् ।
ईर्योसार्गभवौषधद्विविधया तत्संविधिं वेदयन्, जीयाच्छेषतिपुड्यपादकमलस्ततीर्थकरः पुण्यगीः ॥ ८९१ ॥

ॐ ह्रीं आश्रयतास्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-काय वचन मन परिणामन, योग शुभाशुभ रूप । कर्मोश्च कारण अहो, मोह सहित भव रूप ॥
कषयाद्युत्तचेतसान्धविषयं स्वत्वं कृतं तद्विधे-र्योग्याः कर्मविभावशक्तिसहिता ये पुद्गलाश्चात्मना ।
संश्लिष्टा अवगानैक्यमटिनास्नत्प्रक्रमो बंध आक् तं छित्त्वा निजशुद्धभावविरतिप्राप्तः स मे स्यात्गुरुः ॥ ८९२ ॥

ॐ ह्रीं वज्रतत्वस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-कर्म वर्गणा जीवके, भाव कषाय प्रमाण । एक क्षेत्र अवगाह हो, बंधलक्ष यह जान ॥
तद्रोधः खलु सरो निगदितो द्रव्यार्थमेदाद् द्विधा, तद्धेतुर्वननुसिधर्मसमितिपक्ष्यां चरित्रात्मता ।
मूलं निर्जरणस्य कर्मविधितेनूनागमस्य स्वयं, तद्रूपं कथिनं गणेश्वपुरोभागे स आप्तो मज्ज ॥ ८९३ ॥

ॐ ह्रीं सवतत्वस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-गुप्ति समति व्रत धर्मन, कर्मोश्च रुक जाय, वीतरागस्य भाव जडं, संवरतत्त्व सुहाय ॥
स्वोद्रभूतानुभवात्तथा कृन्ततपोवीर्येण तच्छालनाद्, द्वेषा निर्जरणं विसंयमियमिस्वाम्याश्रयेणास्ति यत् ।
तद्रूपं सप्तशश्रिपां गदितवान् भद्र्यात्सर्वां श्रेयसः, संप्राप्त्य स जिनोऽस्तु मे दुरितसंत्राणस्य सच्छित्तये ॥

ॐ ह्रीं निर्जातस्वरूपप्रकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-कर्म अवधिसे निर्जरै, तप प्रभाव क्षय होय । दुविध निजरा अत्यधिक, संयमीनिके होय ॥

मोहस्याथंतनाशात् ज्ञपितिहृदिचिदाच्छादकाशेषलोपात्,
प्रत्यूहस्यापि मूलंकषविमशनादात्मशक्तेः प्रकाशात् ।

निःसापत्नं उच्यते परमशिवसुखास्वादसंवेद्यमाना,

सुक्तिश्रीदिव्यतन्त्रं त्विति सकलजनादेशसुक्ते जिनेन्द्रेः ॥ ८१५ ॥

ॐ ह्रीं मोक्षतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-मोहादिक सद्य कर्मसे, रहित मोक्ष सुखरूप । आत्मशक्ति पूरण प्रगट, अविनाशी इक रूप ॥

देवोऽर्हन् सकलामयव्यगगतो हृष्टेष्टवाग्देशको, अव्यद्वैर्गेनरागदोषकलनो मोक्षार्थिभिः अगसे ।

आश्रयः परिसेवनीय उदितज्ञानप्रभौघः स्वयं, शास्ता सर्वहितः प्रमाणपटुअधिर्धैर्यो जिनः पातुः नः ॥ ८१६ ॥

ॐ ह्रीं आत्मस्वरूपप्ररूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वीतराग सर्वज्ञ जिन, हित उपदेशी जान । निर्मल तत्र प्रकाश कर, अजो आप्त पहचान ॥

रागद्वेषकलंकपंकफणिकाहीनो चिसंवादको, निर्वीछो हितदेशनो व्रतगुणग्रामाश्रयप्रसुः ।

आरम्भाकं भवपद्धतासुखद्वारद्विद्वानां महा-नाराधयः प्रियकारको गुरुधं प्रोक्तो जिनेन त्वया ॥ ८१७ ॥

ॐ ह्रीं गुरुरूपनिरूपक जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-धैरागी निस्पृह व्रती, सर्वपरिश्रम हीन । आत्मबध्यानी गुरु कहे, हिनकर तत्र प्रवीण ।

यश्चामूलनूनमन्यजडतापीडोत्कथाप्रच्युतिर्यञ्ज अथसि दीपिकेव सुरणिः प्राकाश्यमास्कंदते ।

विश्वप्रोतमहातिमोहमदिशानिभस्वनं सद्गुणाश्लेषा वासिरयं जिनधरैर्गीनो (1) वृषोऽस्तुअिये ॥ ८१८ ॥

ॐ ह्रीं धर्मेश्वररूपप्ररूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-रत्नत्रय मय मोहहर, पीडा सत्य निवार । शिवकारण भव उद्धरण, धर्म सत्य अविचार ॥

शब्दाद्याच्यस्यस्वनादिकृतसंकेतेन वस्तुग्रहः,

केनापि ध्वनिना भवत्यथ स वै संजायते मातृकृत ।

सोऽपेक्षाभङ्गिती ह्यनेकगुणतस्ता एव तस्मात् स्थितं

वस्तु स्यात्पदसंस्कृतं तदुदयत् स्याद्वाद एवार्हतः ॥ ८१९ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते स्याद्वादस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-वास्तु वाच्य अवाच्य है, नित्यानित्य स्वरूप । नय प्रमाण ते साधता, स्याद्वाद सुखरूप ॥

तीर्थेशां भारतेशिनां हलजुषां नारायणानां ततः, शत्रूणां त्रिपुरद्विषां च महतां सङ्गायसंशालिनां ।
पुण्यापुण्यचरित्रमत्र निहितं पूर्वाभ्युयोगं विदन्, हृष्टान्तप्रतिपत्तिदं जिनेपतिः प्रारब्धवान् शासनं ॥१००॥

ॐ ह्रीं प्रथमानुयोगवेदस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

दोहा-तीर्थंकर चक्रीश हर, प्रतिहर हलधर व्रत । पुण्य पाप हृष्टान्त कह, प्रथमभ्युयोग पबित्त ॥

संस्थानायामसंख्यागणितमभुभृतां आर्गणास्थानतज्ज-

कर्मोदीर्णोद्भयादिप्रकथनमधिपो वर्णयामास स्रम्यक् ।

लोकालोकोक्तभेदे नरकसुरभुव्यादिसंस्थित्युदंतवृत्ति

त्वारख्यानसैलरकरणगमभुयोगं प्रकाश्य स्वयंभूः (?) ॥१०१॥

ॐ ह्रीं करणानुयोगवेदस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

दोहा-लोकत्रय रचना सफल, जीष आर्गणा धान । कर्णालुयोग यखायना, कर्मबंध आख्यान ॥

शीलानां संयमानां व्रतमितिचरित्रादिसिद्धिनां,

लाभार्थोक्तनीयवृत्तधिरक्षणशून्यधर्मक्रियाणां ।

तत्तत्स्थानोक्तद्वय निजनिजहृदयोद्भूततर्षं निरूप्य,

कर्तव्यत्वोपदेशो यद्विचरणाख्यानमुक्तं जिनेन ॥ १०२ ॥

ॐ ह्रीं पाणानुयोगवेदस्वरूपप्रकाशरु जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

दोहा-सुनि संयम व्रत आचरण, गृही धर्म आचार । कर्महरणविधि सप्त कहे, वरणभुयोग विचार ।

पद्दव्यस्यत्वरूपाण्यथ नयघटना तत्प्रक्षणस्वरूपं,

नाभ्रथापादिकृत्यं तदधिकरणभिसूततथं संस्थापनादि ।

सेनाभेद्यव्यवस्था गत्प्रधिसभिदा यद्य षड्भङ्ग्याणी,

द्रव्याख्यानं निरूप्य प्रथममभिक्षितं सोक्ष्मार्ग जिनेन ॥ १०३ ॥

ॐ ह्रीं द्रव्यानुयोगवेदस्वरूपप्रकाशकाय जिनाय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

प्रतिष्ठा-
॥१५२॥

दोहा-नय प्रमाण निक्षेपसे, द्रव्य छहोंको साथ तरप सस सुद्धात्म कथ, द्रव्यानुयोग अबाध ॥

श्रीमस्त्वद्रुक्तिभारपबिनतशिरसः केचिद्विच्छंति सुक्तिं,

ते सद्यः स्वाधुदीक्षाप्रणयनपटवस्त्वत्प्रसादाबलंवात् ।

केचिद्गुच्छंति धर्मं गृहपतिनिष्ठं रुद्रभार्गाधखण्डं,

स्वामिन् हस्ताबलं बहु शरणगणान् रक्ष रक्षेक्षनाथ ॥ १०४ ॥

ॐ हीं मुनिश्रावकधर्मोपदेशकजिनाय अर्घं निर्वपामीति (बाहा ।

दोहा-तव प्रसाद भवि लहल हैं, मुनि दीक्षा अविकार । प्रतिष्ठा उयारा अवि धरें, तुम्हीं उतारन पार ॥

इषप्रकार धर्मोपदेश होजाय तब सब कहे-श्री धर्य आप वृषभ जिनेन्द्रकी जयर । फिा मात्र इन्द्र बठता है और सब बैठ रहते हैं ।

स्तुति ।

चौपाई-धन्य धन्य जिनराज प्रमाणा, धर्म वृष्टिकारी भगवाना ।
सत्य मार्ग दरशावन हारे, सरल सुद्ध भग बालन हारे ॥ १ ॥
आपीसे आपी अरहन्ता, पूज्य भार त्रैलोक सहन्ता ।
स्वपर भेद विज्ञान बताया, आत्मस तत्व पृथक् दरशाया ॥ २ ॥
स्थानुभूतिमय ध्यान जताया, कर्मकाष्ठ पालन समझाया ।
धर्म अहिंसामय दिखलाया, प्रेम करन हितकरन बताया ॥ ३ ॥
बस्तु अनेक धर्मधरतारा, स्याद्वाद परकाशन हारा ।
मत विवादको मेटनहाया, सत्य बस्तु झलकावन हारा ॥ ४ ॥
धन तीर्थकर तेरी वाणी, तीर्थ धम सुखकारण मानी ।
कारहु विहार नाथ बहु देशा, कारहु प्रचार तत्व उपदेशा ॥ ५ ॥

(१०) भगव नका विहार-इतना कहते ही इन्द्र देवोंको भेजता है कि विहारका प्रबन्ध करो । बाहर सब तथ्यारी रहती है, रय तथ्यार रहता है । सब इन्द्र भगवानको मस्तकपर विराजमान करता है । तब समय धर्म खड़े होजाते हैं । आचार्य नीचेके श्लोक पढ़कर भगवानके आगे अघ चढ़ाता है ।

काह्यां काहमीरदेशे कुरुषु च मगधे कौशले कामरूपे,
कच्छे काले कलिंगे जनपदमहिते जांगलाति कुराबौ ।

किष्किधे मल्लदेशे सुकृतिजनमनसोषदे धर्मवृष्टि,

कुर्वन् शास्ता जिनेन्द्रो विहरति नियतं तं यजेऽहं त्रिकाल ॥ ९०७ ॥

पांचाले केरले वाऽमृतपदमिहिरोमन्द्रचेदीदृशार्ण-

वंगांगंधोलिकोशीनरमलयविदग्धेषु गौडे सुसथे ।

शीतांशुरश्मिजालादमृतपिब सन्नां धर्मपीयूषधारां,

सिचन् योगाश्रिमा परिणमयति च स्वांतशुद्धि जनानां ॥ ९०८ ॥

पुनाटचौलविषयेऽपि च मौडूदेशे सौराष्ट्रमध्यमकलिङ्किरातकादौ ।

सुयोग्ये सुदेशमहिते सुविहृत्य धर्मचक्रेण मोदविजयं कृतवान् जनानां ॥ ९०९ ॥

दोहा—काशी कुरु काहमीरमें, मगध सुकोशल काम । कच्छ कलिंग रकालमें, कुरुजांगल शुभ धाम ॥

किष्किधा पांचालमें, मलय सुत्तरल मन्द्र । चेदि दृशार्ण सुवंगमें, अंग उलिक शुचि अन्ध ॥

गौड़ विदर्भ उसीनरे, सख्य चौक पुनाट । मौडू सौराष्ट्र किरातमें, मध्य कलिङ्ग किराट् ॥

इस्यादिक षड् देशमें, धमदेशनाकार । धंदहु पूजहु प्रेमसे, करहु कर्म निरधार ॥

ॐ हौं नमोऽईते मगधते विहारावस्थाप्राप्तय देशे धर्मोपदेशोद्धर्ते जिनाय अर्धं निर्वगमीति श्वाहा ।

फिर बाजे बजने लगे, जयजयकार शब्द हो । भगवानपर पुष्पोकी वर्षा हो । इन्द्र श्री जिनेन्द्रको लेजाकर रथपर विराजमान करें, शौधर्म इन्द्र खषात्रीपर बैठे, ईशान इन्द्र रथ चलावे, घानकुमार महेन्द्र दोनों तरफ चमर ढारें । रथपर चार भाइयोंके विषाय और कोई न हो । रास्तेमें जय जय होते हुए नंगे पैर मक्तिमें भीजे बन्न चले, कमसे कम चार जगह आने जानेके मार्गमें घामियाना हो वहां शांतिसे सब श्रोता बैठ जावें, भगवान्का रथ आगे सड़ा हो । पहले एक भजन बाजेके साथमें ५ मिनटमें होजावे फिर उपदेश हो । चार स्थानमें भिन्न २ विषयपर अच्छे विद्वान् भिन्न २ उपदेश करें । २० मिनटमें भाषण बारगर्भित कहा जाय—यह बताया जाय कि श्री जिनेन्द्र विहार करते हुए उपदेश कर रहे हैं । नीचे लिखे विषयमेंसे लिये जावें—

- (१) निश्चय व्यवहार धर्म, (२) व्रत तत्त्व, (३) चार वेद प्रथमानुयोगादि, (४) मुनिधर्म, (५) श्रावकधर्म, (६) कर्मबंध, (७) आत्मस्वरूप, (८) त्याद्रादका महत्त्व, (९) आत्मानंदका उपाय, (१०) मोक्षस्वरूप, (११) एकांत खंडन, अनेकांत मंडन, (१२) बाहिषा धर्म, (१३) दशकक्षणधर्म, (१४) आत्मध्यान, (१५) वारह भावना, (१६) जगत अनादि, जैनधर्म अनादि ।

शक्यनुसार रास्तेमें ठहरा जावे । ग्रंथोंके पहले २ छोट आया जावे । जब उधर श्रीजीका विहार हो इधर आचार्य अन्य प्रति-माओंपर तिलकदान, श्रीमुखोद्वाटन, गयनोन्मीलन, सूरिमंत्र प्रदान इन क्रियाओंको बक्षेसे करके पुष्पोंको क्षेपण कर ज्ञानकल्याणकका आरोपण करे ।

(११) धर्मोपदेशकी सभा—रात्रिको टिकटोंद्वारा पभा लगे । भगवानकी गंधकुटीको संभनीक बनाया जावे, आगे रोशनी इतनी हो कि भगवान्का दर्शन सबको दूरसे होसके । ठीक समय परदा खुले । पहले इन्द्रदि देव भगवान्की आर्त्ता १५ मिनिट तक करें । बड़े मनोहर शब्दोंमें पढ़ें । फिर सब यथास्थान बैठ जावें । जो विद्वान् व्याख्याता नियत किये गए हों वे उपदेश देवें । उपदेश बहुत जमतरूप शांतिका प्रचार मात्र जिनधर्म समन्वयो विषयोंपर हो । एक उपदेशके पीछे एक भजन हो । उपदेश दो घंटे होजाये फिर बाथ घंटा इषलिये दिया जावे कि जिष किष्ठीको जो नियम लेना हो वह अपने स्थानपर खड़े होकर हाथ जोड़कर कहे कि मैं श्री जिनेन्द्रके धमवशरणमें यह नियम लेता हू । फिर आष घटा समय वास्ते दर्शन करने थ अंडारमें देनेके लिये नियत किया जावे । अंडारमें डालनेको थाल एक आर चतूतरेपर रक्खा हो । पहले क्रमसे ५ नर ५ नारी आवे जावें । अंडारमें कुछ डाल नभस्कार करके चलते जावें । १० टिकटोंसे काम लिया जावे । अंडारमें जो रुपया जावे प्रतिष्ठाके कार्यमें लगे ।

नोट—यदि ज्ञानकल्याणककी विधि करते हुए समय विहारका न रहे तथा मार्ग दूरका हो तो विहार दूबरे दिन किया जावे । तब रात्रिको धर्मोपदेश सभा हो । दूबरे दिन बवेरे पहले दिनके समान नियतके समान पूजा होम हो । पीछे एक घटा बवेरे धर्मोपदेश भगवान्का हो । फिर सबजने खा पीले तब १ बजेसे विहार प्रारम्भ किया जावे तब इष रात्रिको भी धर्मोपदेश हो, नियमादि हों । रात्रिको धर्मोपदेशके पीछे नृत्य सजनादि भी कायदेके साथ किये जा सकते हैं । ऐसी दशामें मोक्षकल्याणक तीघरे दिन होगा । यदि विहार ज्ञान कल्याणकके दिन होजाये तो उसके दूबरे दिन बड़े बवेरे मोक्षकल्याणक किया जावे ।

अध्याय आठवां ।

मोक्षकल्याणक ।

दूबरे दिन धबरे ही पहले दिनके धमान आचार्य न्हवनपूजा व होम कर चुके तब मोक्षकल्याणक किया जावे । मंडप तभीतरह नरनारियोसे पूर्ण भरा हो । पहले ही दूबरे चबूतरेपर परदा आगे डालकर उसपर ऐश्वी रचना बनावे—एक ऊची वेदी ऐसी हो जिषपर अर्घचन्द्राकार शीशेका व स्फटिकका सिद्धासन हो या अन्य चातुका हो । यह अभी खाली रक्सा जावे । उसके कुछ नीचे कैलाशपर्वतके धमान कोई पहाड़ या ऊंचा स्थान बनाके उसपर शिखा स्थापन करे । तिषपर बाथिया बनाकर जिन प्रतिमाको विराजमान करे, यहाँ अष्ट प्रातिहार्यादिक कुछ न हों । भगवान् योग निरोध करके ध्यानमें मग्न हैं ऐसा दिखे तब परदा उठे । तब सूचक यह प्रगट करे कि भगवान् ऋषभदेव विहार बंद करके अब कैलाशगिरिपर स्थित हैं । यहाँपर आचार्ये पड़ते सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति, चारित्र्यभक्ति तथा निर्वाणभक्ति तथा शांतिभक्ति पढ़े । व आगे पुष्प क्षेपे । फिर नीचेका छंद पढ़के अर्घ चढ़ाये—

त्रिभंगी छन्द—जय जय वृषभेशा आदि जिनेशा हो वरभैशा नमहुं तुम्हें,

प्रभु देवा बिहारे धर्म प्रचारे भवि उद्धारे नमहुं तुम्हें ।

कैलाश पधारे आत्म विचारे योग भगन जिनराज भए,

सूक्ष्मकिय शुंछ धार स्वधं निज मोक्ष तभी निकटाल भए ॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभदेव जिनेन्द्राय तृतीयशुक्लध्यानारूढाय अथ निर्वपामीति स्थाहा ।

यहां सूचक कहे कि भगवान् तीसरे शुक्लध्यानमें है, योगोका अति सूक्ष्म चखन हो रहा है । फिर—

जय जय तीर्थंकर, धर्म प्रभाकर, शिवसुख रजन नाथ भए,

व्युपरतक्रिय ध्यानं शुक्ल भवानं धारत आत्म विशाल भए ।

औदारिक तेजस्य कार्भण वपुते नाथ रक्षित अण होबेगे,

हृष पूजे ध्यावे संगल गावे शिष्यधगामी होबेगे ॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथजिनेन्द्राय चतुर्थशुक्लध्यानारूढाय अर्घ निर्वपामीति स्थाहा ।

यहां सूचक कहे कि भगवान्की आयुमें अ ३ व १६ इग पांच अक्षरोको उधारने मात्र काल शेष है । प्रभु चौदहवें गुणस्थानमें चढ़कर चौथे शुक्लध्यानको ध्या रहे हैं । फिर अटसे परदा खन तरफ गिर जाये तब आचार्य प्रतिमाजीको वहासे उठाकर अर्द्धचन्द्राकार सिंहासनपर बाथिया करके विराजमान करदे । परदा उठे । तब समय सब कहे—निर्वाणमल्याणककी जय, सिद्धपरमेष्ठीकी जय ।

तत्काल ही इन्द्रादि देव आर्षे, षाण्णमें अग्निकुमारका इन्द्र भी आवि । जय वृषभदेवकी जय, जय मोक्षकल्याणककी जय इत्यादि जय जय शब्द कारके आर्षे और आकर नमस्कार करें । फिर सब बैठ जायें । इन्द्र और आचार्य षामने षाधिया कारके लक्षपर चन्दन अगर कपूर व सूखा धूप चुने तथा एक रत्नाबीमें रक्खी हुई लौंगोंको नख केशके भावसे बीचमें डालदे । तब अग्निकुमार जाति भवनवासी देवीका इन्द्र नमस्कार करे और लेटी हुई दशामें जला हुआ कपूर अपने मस्तकके मुकुटके पाण्डे उष चितापर डालके अग्नि बलावे तब षमय आचार्य यह श्लोक व मंत्र पढ़े—

उत्तहायि जिणे पणष्णामि मया । अमलो विरजो वरकप्पराहू ॥

सख फामहुहा मम रक्ख सया । पुबविज्जुण्ही पुबविज्जुण्ही ॥

ॐ ॐ ॐ रं रं रं स्वाहा । फिर सब कहे—निर्वाण-ल्याणककी जय, पवित्र अग्निकी जय । फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़कर अर्घ्य चढ़ावे—

तीर्थेश्वरस्यान्यमहोत्सवेयं, रुदत्या नमाम्नीन्द्रकिरीट जातम् ।

आनर्चुरिन्द्राः सकलारतसैनं यजे जलाद्यैरिह गार्हपत्यम् ॥

ॐ हीं गार्हपत्यप्रणीताम्रे अर्घ्य निर्णामीति स्वाहा ।

फिर इन्द्र नीचे लिखी स्तुति पढ़े । और भी शामिक हो सकते हैं । इन्द्र और आचार्य खड़े रहे, शेष सब बैठ जायें ।
स्तुति ।

पद्मी छन्द—जय ऋषभदेव गुणनिधि अपार । पहुंचे शिष्यको निज शक्ति द्वार ॥

बन्दू श्री सिद्ध अहंत राजः सुधरें जासैं मम सर्व काज ॥ १ ॥

निर्वाण थाव यह पूज्य षाम । यह अग्नि पूज्य हे रमणराज ॥

मन धच तन बन्दू बार धार । जिन कर्म वंश डालूं उजाड़ ॥ २ ॥

कैलाश महा तीरथ पुनीत । अर्धं मुक्ति लक्षी सब कर्म जीत ॥

नहिं तैजस तन नहिं कारमाण । नहिं औदारिक कोई प्रमाण ॥ ३ ॥

हे पुरुषाकार सु ध्यान रूप । जिन तनमें था तिम हे स्वरूप ॥

तनु वातबलयमें क्षेत्र जान । पीयत स्वात्म रस अपमाण ॥ ४ ॥

हो शुद्ध चिदात्म सुख निधान । हो बल अनन्त धारी सुमान ।

बन्दू मैं तुमको वार वार । भवसागर पार लहूँ अवार ॥ ५ ॥

अग्नि बराबर जलती रहे. कपूर चन्दन डाला जाया करे । फिर थोड़ीसी भस्मको चिरकरके लेवे । आचार्य और इन्द्र पहले तब भस्मको नीचेका दोहा पढ़कर नमस्कार करें और उसे अपने माथेपर दोनों मुनाओंपर, गलेमें और छातीपर ऐसे पांच जगह लगावें ।

दोहा—बन्दू पावन भस्मको, कर्म भस्म कर्तार । अंग लगे पावन करे, धर्म बड़े अधिकार ॥

फिर एक रकाबीमें भस्म लेकर भीतर चबूतरोपर जो हों उनको दी जावे । वे सब अंगुलीसे लेकर नमनकर पांचो जगह लगावें । एक रकाबीमें भस्म पुरुबोंको व एक स्त्रियोंको भेज दी जावे । तब सूचक कहे—यह श्री तीर्थकारके निर्वाणकी भस्म महा पवित्र है इसको नमनकर सब कोई माथे, दोनों मुजा, कंठ तथा छातीपर लगावे । इतनेमें पादा पड़ जावे, भीतर भस्मको उठा लिया जावे कि जब कोई मांगे तब उसे दी जा सके और मांडला एक च कौपर बनाया हुआ भगवान्के नामने लाया आवे । यह मांडला पहलेसे बना तैयार हो बीचमें आठ दलका कमल हो उसके मध्यमें बाधिया लिखा हो, बाधियेके ऊपर अर्द्धचन्द्राकार लिखकर तबपर बिंदु हो, आठ बत्तोर अपनी बाई तरफसे दाहनी ओर नीचे प्रमाण चिह्नोके आठ गुणोंके आठ पुज हों वा फूल हों वा नाम लिखे हों ।

(१) प्रत्यक्त, (२) ज्ञान, (३) दर्शन, (४) वीर्य, (५) सूक्ष्मत्व, (६) अवागाहनस्व, (७) अगुरुत्व, (८) अव्याबाधत्व । इस कमलके चारों ओर २४ कोठोंमें २४ पुष्प हों वा पुंज हों वा २४ तीर्थकारके नाम हों ऐसा सुन्दर मांडला एक चौकीपर बना हुआ रखा जाय । बगलमें बागम्री हो तब पादा ठठ जावे । इन्द्र व आचार्य नीचे प्रमाण पूजा करें—

स्थापना ।

**वासाभ्यन्तरहेतुजातसुहशः पूर्वश्रुतैरादिमा-च्छुद्धयानयुगादितिथ्य दुरित लब्ध्या सयोगिश्रियम् ।
प्राप्यायोगिपदं परेण सकलं निजित्य कर्मोत्करं, शुक्लध्यानयुगेन सिद्धसुगुणान्सिद्धान्समाराधये ॥**

ॐ ह्रीं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र एहि एहि सर्वौषट् । ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम वन्निहितो भव भव वषट् ।

गंगादितित्थपपहृषपएहि त्रगंधज्ञा णिम्मलपएहि । अचेमि णिचं परमट्टसिद्धे सब्वट्टसम्पादयसव्वसिद्धे ॥

ॐ ह्रीं श्रीं नमः सिद्धाधिपतये जलं ॥ १ ॥

गन्धेहि धाणाण सुहृषपएहि, समचेयाणंपि सुहृषपएहि ॥ अचेमि० ॥ गन्धं ॥ २ ॥
पेरंतच्छोणोत्थकारणेहि, वरकस्रएहि सियकारणेहि ॥ अचेमि० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
पुष्फेहि दिव्भेहि सुवणणएहि, ऋत्वे कज्जेहि सुवणणएहि ॥ अचेमि० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥
बन्भेहि णाणासुररुपएहि, भव्याण णाणाहररुपएहि ॥ अचेमि० ॥ चरुं ॥ ५ ॥

द्विदशमाणस्यदीवएहिं, संजयआणं सिद्धिदीवएहिं ॥ अचेमि० ॥ द्वीपं ॥ ६ ॥
 कालाअरुं भूयसुहृदएहिं, जीयाण पावाण सुहृदएहिं ॥ अचेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥
 अणगघभूएहिं फलव्यएहिं, भववसस संक्षिणफलवद्वएहिं ॥ अचेमि० ॥ फलं ॥ ८ ॥
 णयेण णाणेण य दंसणेण, तवेण उट्टेण य संजमेण ।
 सिद्धे तिकालेसु विसुहृबुद्धे, समगयामो सयलेवि सिद्धे ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

प्रत्येक अर्घं ।

जानाति बोधो यदनुग्रहेण, द्रवणाणि सर्वाणि स्वर्पथयाणि ।
 तुराग्रहत्पत्तनिजात्तरूपं, तं सिद्धं सम्यक्त्वगुणं यजामि ॥
 ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्तगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 जानाति नित्यं युगपत्स्यतोन्म्य, स्वर्पथसामान्यविशेषपूर्वम् ।
 निषोभकं स्पष्टतर च वस्तं, सिद्धात्मविज्ञानगुणं यजामि ॥
 ॐ ह्रीं सिद्धात्मविज्ञानगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 स्यात्सस्थसामान्यविशेषसर्वं, साक्षात्कारोत्थेष समं सदा यः ।
 सुनिश्चिन्नासंभववाचकं तं, सिद्धात्मनो हृष्टिगुणं यजामि ॥
 ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अनन्तविज्ञानमन्तहृष्टिं, द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु ।
 इयापारायन्तं हृतसंकरादिसिद्धात्मवीर्योख्यगुणं यजामि ॥
 ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 अवाचकं मानसबाध्यमेव, निरूपीतसर्वार्थमसंगसंगम् ।
 सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव, सिद्धात्मसूक्ष्माख्यगुणं यजामि ॥
 ॐ ह्रीं सिद्धसूक्ष्मगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

एकत्र सिद्धात्मनि चान्यसिद्धा, वसंत्यसंवाधमनंतसंख्याः ।
यस्य प्रभावात्सुनयस्थितं तं, सिद्धावगाहाख्यगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धावगाहगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अधो न पातोस्ति यथा शिलादेर्न, तूलबद्धायुक्तेरणं च ।
सिद्धात्मनां तेन सुयुक्तिसिद्धं, गुणं यजामोऽगुरुलब्धविहयम् ॥

ॐ ह्रीं सिद्धागुरुलब्धगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अवाप्तिशांत्यै विहितश्रमोऽग्रायाधात्सन्ना यं परिणाममेति ।
स्यात्सोत्थसौख्यैकनिबन्धन त, सिद्धात्मनिर्षोधगुणं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सिद्धव्यावाधगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । फिा नीचे लिखे अनादि सिद्ध मन्त्रको २१ वार जपे-
ॐ णमो सिद्धाणं, सिद्धा संगलं, सिद्धा लोशुलमा, सिद्धे सरणं पव्जामि ह्रीं शांतिं कुरु कुरु स्वाहा ।

इत्थं स्रजभ्यर्चिनासिद्धनाथस्रजप्रक्लेशसुलथाञ्च गुणासदीया ।
सर्षोर्चिनाः सर्वजनार्चनीयाः, स्यात्सोषलब्धै सब सन्तु लेऽमी ॥

ॐ ह्रीं सिद्धगमेष्टिने पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतिमामें सिद्धोक्ते आठ गुण नीचे प्रमाण करे ।

जानाति बोधो यदनुग्रहेण, द्रव्याणि सर्षोणि सपर्यंकाणि ।

दुराग्रइत्थत्कनिजात्मरूप, सिद्धेय स्रजप्रक्लेशगुणं न्यसामि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं पामावगाढम्यक्तगुणभूषिताय नमः । ऐसा कष्ट आचार्य प्रतिमापर पुष्प क्षेपे ।

जानाति गित्यं युगपत्स्यतोऽन्यत्सर्वोर्षसामान्यविशोषसर्वम् ।

निर्षोधकं स्पष्टतरं च यात्, सिद्धेन विज्ञानगुणं न्यसामि ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

स्यात्स्रजसामान्यविशोषसर्वं साक्षात्करोत्येव सर्वं सदा यः ।

सुनिश्चितासंशयबाधकं तं, सिद्धेन हृष्ट्याख्यगुणं न्यसामि ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अनन्तविज्ञानसत्तदृष्टि, द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु ।

व्यापारयन्तं हतसंकरादि, सिद्धेन वीर्योद्युगुणं न्यसामि ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अथायकं मानसबाध्यसेष, निष्पीतस्र्वार्थमसङ्गसङ्गम् ।

सर्वज्ञनेद्यं तद्वाच्यमेव, सिद्धेन सुक्ष्माद्यगुणं न्यसामि ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

एकत्र सिद्धात्मनि चान्यसिद्धा, वसंत्यसंबाधमन्तसंस्थाः ।

यस्य प्रभावात्तुनयस्थितं तं, सिद्धेवगाहाद्यगुणं न्यसामि ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अथगाहनगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अधोनुपातोऽस्ति यथा शिलादेर्न तूलवद्धयुक्तैरणं च ।

सिद्धात्मना तेन सुयुक्तिसिद्धं, गुणं न्यसामोऽगुरुलघवभिख्यम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अवाग्निशान्त्यै विहितश्रमोऽव्याघाघात्प्रज्ञा यं परिणाममेति ।

स्वात्मोत्थसौख्यैकनिबन्धनं तं, सिद्धेन निर्वाधगुणं न्यसामि ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अव्याघाघगुणभूषिताय नमः । (प्रतिमापर पुष्प क्षेपे) (अब २४ कोठोंकी पूजा करे)

त्रिमंगी—जय जय तीर्थंकर मुक्तिधधूवर भयसागर उद्धार करं,

जय जय परमात्म शुद्ध चिदात्म कर्मफलक निवारकरं ।

जय जय गुणसागर सुखरसाकर आत्ममगनता सार लरं,

जय जय निर्वाण पाय सुज्ञानं पूजत पग संसार हरं ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतिर्धङ्करेभ्यो पुष्पाजलि क्षिपेत् ।

वषन्तिलका छन्द—पानी महान भरि शीतल शुद्ध लाजं । जन्मादि रोग हर कारण भाव ध्याजं ॥

पूजूं सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं । पाजं महान शिवमंगल नाश कालं ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो नमः जलं ।

केशर सुमिश्रित सुगन्धित बन्दनादी । आताप सर्व भव नाशन मोह आदी ॥ पूजूं सदा० ॥ बन्दनं ॥
 बन्दा समान बहु अक्षत धार वाली । अक्षय स्वभाव पाऊं गुण रत्नगाला ॥ पूजूं सदा० ॥ अक्षतं ॥
 बम्पा गुलाब मरुवा बहु पुष्प लाऊं । दुस्र टार काम हरके निज भाव पाऊं ॥ पूजूं सदा० ॥ पुष्पं ॥
 ताजे महान पकवान बनाय धारे । बाधा मिटाय शुचरोग स्वयं सम्हारे ॥ पूजूं सदा० ॥ नैवेद्यं ॥
 दीपावली जगमगाय अंधेर घाती । मोहादि तम धिघः जाय भव प्रतापी ॥ पूजूं सदा० ॥ दीपं ॥
 बन्दन कपूर अगरादि सुगन्ध धूपं । बाटूं जु अष्ट कर्म हो सिद्ध भूपं ॥ पूजूं सदा० ॥ धूपं ॥
 मीठे रसाल बादाम पवित्र लाए । जासे महान कर मोक्ष सु आप पाए ॥ पूजूं सदा० ॥ फलं ॥
 आठों सुद्रव्य ले हाथ अरघ बनाऊं । संसार बान हरके निज सुख सब पाऊं ॥ पूजूं सदा० ॥ अर्घं ॥

प्रत्येक अर्घ ।

गीता-चौदस वटी शुभ माघकी, कैलाशगिरि निज ध्यायके । वृषभेश सिद्ध हुत्रे शचीपति, पूजते हित पायके ॥
 हम धार अर्घ महान पूजा, करे गुण मन लायके । सब राग दोष मिटायके, शुद्धात्म मनमें भायके ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

शुभ चैत सुदि पांचस दिना, सग्मेदगिरि निज ध्यायके ।

अजितेश सिद्ध हुधे भविकगण, पूजते हित पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लापचम्यां श्रीभजितनायाय जिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

शुभ माघ सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

सम्भव निजातम केलि करते, सिद्ध पदवी पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लाषट्ठ्यां श्रीभ्रंभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

वैशाख सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

अभिनन्दनं शिष धाम पटुचे, शुद्ध निज गुण पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाषट्ठ्यां श्रीभभिनंदननाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

शुभ चैत सुदि एकादशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री सुमतिजिन शिष धाम पायो, आठ कर्म नशायके ॥ हम० ॥

ॐ हीं चैत्रशुक्राएकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

शुभ कृष्ण फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री पद्मप्रसु निर्वाण हुवे, स्वात्म अनुभव पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ हीं फाल्गुणकृष्णाष्टम्यां श्री पद्मप्रसुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

शुभ कृष्ण फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री जिन सुपार्श्व स्वस्थान लीयो, स्वकृत आनन्द पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ हीं फाल्गुणकृष्णाष्टम्यां श्री सुपाश्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

शुभ शुक्ल फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीचन्द्रप्रसु निर्वाण पडुंचे, शुद्ध ज्योति जगायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ हीं फाल्गुणशुक्लाष्टम्यां श्री चन्द्रप्रसुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

शुभ भाद्र शुक्ला अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीपुष्टपदंत स्वधाम पायो, स्वात्म गुण झलकायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ हीं भाद्रशुक्लाष्टम्यां श्री पुष्टपदतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

दिन अष्टमी शुभ कार सुद, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीनाथ शीतल मोक्ष पाए, गुण अनन्त लखायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ हीं आश्विनशुक्लाष्टम्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

दिन पूर्णमासी श्रावणी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

जिन श्रेयनाथ स्वधाम पडुंचे, आत्म लक्ष्मी पायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ हीं श्रावणपूर्णमास्यां श्री श्रेयांशनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

शुभ भाद्र सुद चौदश दिना, मंदारगिरि निज ध्यायके ।

श्रीवासुपूज्य स्वस्थान लो हो, कर्म आठ जलायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ हीं भाद्रशुक्लाचतुर्दश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१२)

आषाढ वद शुभ अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्रीविमल निर्मल धाम लोनो, गुण पवित्र बनायके ॥ ह्रम० ॥

- ॐ ह्रीं आषाढकृष्णाअष्टम्यां विमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१३)
अममावसी वद चैत्रकी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
स्वामी अनन्त स्वधाम पायो, गुण अनन्त लावायके ॥ ह्रम० ॥
- ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्या श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय मक्ष+ल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१४)
शुभ ज्येष्ठ शुक्ला चौथ दिन, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीधर्मनाथ स्वधर्म नायक, भए निज गुण पायके ॥ ह्रम० ॥
- ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाचतुर्थ्या श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)
शुभ ज्येष्ठ कृष्णा चौदसा, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीशान्तिनाथ स्वधाम पंहुंचे, परम मार्ग वतायके ॥ ह्रम० ॥
- ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्या श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)
वैशाख शुक्ला प्रतिपदा, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीकृन्धुनाथ स्वधाम लोनो, परम पद झलकायके ॥ ह्रम० ॥
- ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां श्री कृन्धुनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)
अममावसी वद चैत्रका, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री अरहनाथ स्वथान लोनो, अमर लक्ष्मी पायके ॥ ह्रम० ॥
- ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्या श्री अरनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)
शुभ शुक्ल फाल्गुण पंचमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री मल्लनाथ स्वथान पंहुंचे, परम पदवी पायके ॥ ह्रम० ॥
- ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्ल पचम्यां श्री मल्लनाथजिनेन्द्राय मक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)
फाल्गुण वद शुभ द्वादशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
जिननाथ मुनिसुव्रत पवार, मोक्ष आनन्द पायके ॥ ह्रम० ॥
- ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाद्वादश्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्रप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)
वैशाख कृष्णा चौदशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
नमिनाथ सुक्ति विशाल पाई, सकल कर्म नशायके ॥ ह्रम० ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णायतुर्दश्यां श्री नमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षरूपाण्युप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)
 आषाढ शुक्ला सप्तमी, गिरिनार गिरि निज ध्यायके ।

श्री नेमिनाथ स्वयाम पहुंचे, अष्ट शुण झलकायके ॥ ६३० ॥

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लाष्टम्यां श्री नेमनाथजिनेन्द्राय मोक्षरूपाण्युप्राप्तय अर्घं निर्वपाम ति स्वाहा । (२२)

शुभ आश्वणी सुद सप्तमी, सस्मेदगिरि निज ध्यायके ।

श्री पार्श्वनाथ स्वयाम पहुंचे, सिद्धि अनुपम पायके ॥ ६३० ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाष्टम्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षरूपाण्युप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

अस्मावसो बल कार्तिकी, पावापुरी निज ध्यायके ।

श्री वर्द्धमान स्वयाम लोनी, कर्म वंश जलायके ॥ ६३० ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णा अमाषाण्यां श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षरूपाण्युप्राप्तय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

मुजंतप्रयात छद-नमस्ते नमस्ते नमस्ते जिनन्दा । तुम्हीं सिद्ध रूपी हरे कर्म फंश ॥

तुम्हीं ज्ञान सूत्रज भविक नीधजोंको । तुम्हीं ध्येय वायू हरो स्वय रजोंको ॥ १ ॥

तुम्हीं निष्कलंकं चिदाकार चिन्मय । तुम्हीं अक्षजितं निजाराय मन्मय ॥

तुम्हीं लोक ज्ञाता तुम्हीं लोक पालं । तुम्हीं सर्वदयी हुता आन कालं ॥ २ ॥

तुम्हीं क्षेमकारी तुम्हीं योगिराजं । तुम्हीं ज्ञात ईश्वर कियो आप काजं ॥

तुम्हीं निर्भय निमलं बीतमोहं । तुम्हीं साम्य असुर पियो बीतद्रोहं ॥ ३ ॥

तुम्हीं भव उदधि पारकतो जिनेशं । तुम्हीं मोह तमके निवारक विनेशं ॥

तुम्हीं ज्ञानबीरं भरे क्षीर सागर । तुम्हीं रत्न गुणके सु गम्भीर आकर ॥ ४ ॥

तुम्हीं बन्दमा निज सुधाके प्रचारक । तुम्हीं योगियोंके वरत प्रेम धारक ॥

तुम्हीं ध्यान गोबर सु तीर्थकरोके । तुम्हीं पूज्य स्वामी परम गणधरोके ॥ ५ ॥

तुम्हीं हो अनादी नहीं जन्म तेरा । तुम्हीं हो सदा सत नहीं अंत तेरा ॥

तुम्हीं सर्वव्यापी परम बोध द्वारा । तुम्हीं आरमन्ध्यापी चिदानन्द धारा ॥ ६ ॥

तुम्हीं हो अनित्यं स्व परिणाम द्वारा । तुम्हीं हो अभेदं अमित द्रव्य द्वारा ॥
 तुम्हीं भेदरूपं गुणानन्त द्वारा । तुम्हीं नास्तिरूपं परानन्त द्वारा ॥ ७ ॥
 तुम्हीं निर्विकारं अमूरत अखेदं । तुम्हीं निष्कषायं तुम्हीं जीत वेदं ॥
 तुम्हीं हो चिदाकार साकार शुद्धं । तुम्हीं हो गुणस्थान दूरं प्रबुद्धं ॥ ८ ॥
 तुम्हीं हो समयसार निजमें प्रकाशी । तुम्हीं हो स्वचारित्र आतम विकाशी ॥
 तुम्हीं हो निरास्त्र निराहार ज्ञानी । तुम्हीं निर्जरा बिन परम सुख निधानी ॥ ९ ॥
 तुम्हीं हो अवन्धं तुम्हीं हो असोक्ष । तुम्हीं कल्पनातीत हो नित्यं मोक्षं ॥
 तुम्हीं हो अवाच्यं तुम्हीं हो अचित्य । तुम्हीं हो सुबान्य सु गणराज नित्यं ॥ १० ॥
 तुम्हीं सिद्धराजं तुम्हीं मोक्षराजं । तुम्हीं तीन भूके सु ऊरध विराजं ॥
 तुम्हीं बीतरागं तदपि काजं सारं । तुम्हीं भक्तजन भावका मल निवारं ॥ ११ ॥
 करै मोक्ष कल्याणकं भक्त भीने । फुरै भाव शुद्धं यही भाव कीने ॥
 नमे हैं जजे हैं सु ध्यानन्द धारें । शरग भंगलोत्तम तुम्हींको विचारें ॥ १२ ॥
 दोहा-परम सिद्ध चौबीस जिन, बर्तमान सुखकार । पूजत भजत सु भावसे होय विघ्न निरवार ।
 ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिवर्तमानजिनेन्द्रेभ्यो मेक्षकल्याणकेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा-विम्बप्रतिष्ठा हो सुफल, नरनारी अघ हार । बीतराग विज्ञानमय, धर्म बढो अधिकार ॥

श्याशीर्षदः । पुष्प क्षेपे ।

फिर आवाणतया पूजा विप्रर्जन करे, पाटा पड़े । कवेरे यह कार्य हो जावे तब नरनारी भोजनादि करें । ऊपर आचार्य शेष प्रतिमाओंपर पुष्प द्वारा कल्याणककी स्थापना करे । अस्मिन्विम्बे निर्वाणकल्याणक आरोपयामि स्वाहा । सिद्धाष्टगुणानि न्यथाभि स्वाहा ।

अध्याय नौवां ।

अन्तिम होम. अभिषेक व शांति

तीबरे पहर करीब १ नजे फिर मद्यप टिकटोंके द्वारा भरा जाधि । होमकी घामप्री इतनी तैयार की जाधि जिससे १२००० के करीब आहुति हो सकें । अभिषेकके लिये १०८ कलश हों तो ठीक है । यदि न हो सकें तो ५४, २७, ९ भी हो सकते हैं । इनमें जन्मकल्याणकक समान दूधसे मिठा जल जो सफेद दीखे भगा जावे व एक बड़ा कलश केशरादि सुगन्ध द्रव्योंसे भरा हुआ हो व चार कलश दोनोंके हों । पहले आचार्य य इन्द्र सब स्नान का शुद्ध वस्त्र पहन बवेरेके समान अग शुद्धि करें फिर एक सिद्ध पूजा करके तीनों कुण्डोंमें होम करें । तब समय बढ सब विधि करें जो यागमण्डलकी पूजाके प्रारम्भमें की थी (होम विधि अध्याय दूबारा पृष्ठ २१ परसे सिद्धार्चा सम्बन्धी पीठिका मंत्रोंसे होम करे । “ ॐ सत्य जाताय नमः ” आदिसे ऐवी ११२ आहुतियां देवे । फिर जिस मंत्रकी एक लाख जाप्य की थी तब मंत्रकी १००० आहुति तीनों कुण्डोंमें देवे । अर्थात् कुल ३००० हुई । एक ही घाय एक मंत्र पढ़ा जावे व तीनों कुण्डोंमें दो दो इन्द्र आहुति देवे—“ ॐ हां हीं हू हौं हः भूर्बुध्नविनाशनाय स्वाहा ।

इसप्रकार होम हो चुके तब महा अभिषेक प्रारम्भ किया जाधि । पहले आचार्य और इन्द्र कायोत्सर्ग करके बिसौका ध्यान करें फिर सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति तथा समाधिभक्ति पढ़ें । फिर पूजन करें ।

(१) जिनयज्ञ विधानम् ।

आहूता भवनामरैरनुगता यं सर्वदेवास्तथा, तस्थी यस्त्रिजगत्सर्भांशमहापीठाग्रसिंहासने ।

यं हृद्यं हृदि सन्निधाप्य सततं, ध्यायंति योगीश्वराः, तं देवं जिनसचिंतं कृतधियामावहाननाद्यैर्भजे ॥

ॐ हां हीं हू हौं हः अग्नि आ त वाऽईन् एहि २ भ्रूषट् । ॐ हां हीं हू हौं हः अग्नि आ त वा अर्हन् तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ हां हीं हू हौं हः अग्निआतवा अर्हन् मम सन्निहितो भग्न भव वषट् । पुष्पांजलि क्षेपे ।

स्थापना ।

यत्रागाधथिशालनिमलगुणे लोकत्रय सर्वदा । सालोकं प्रतिबिंबितं प्रविशतां नित्यामृतानन्दनम् ।

सर्वाब्जानिमिषास्पदं स्मृतिगतं पापापह धीमताम् । अर्हतैर्यमपूर्वमक्षयमिदं बाधोरया धारये ॥ १ ॥

ॐ हीं परमब्रह्मणे अनन्तानन्तज्ञानशक्तये जलं निर्वगामीति स्वाहा ।

गन्धश्चन्दनगन्धबन्धुरतरो यद्विष्यदेशेद्भुवो, गन्धर्वाद्यमरस्तुतो विजयते गन्धांतरं सर्वतः ।

गन्धादीनखिलानवैति विशदं गन्धादिमुक्तोऽपि यः, तं गन्धाद्यगन्धमानहतये गन्धेन सम्पूजये ॥

ॐ ह्रीं भवाताप विनाशनाय वन्दनम् ।

ॐ ह्रीं अक्षयफलप्राप्तये अक्षत निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्य द्वादशयोजने सवसि सद्गन्धादिभिः स्वोपमा । नप्यर्थोन्सुमनोगणान्सुमनसो वर्षन्ति विष्णवसदा ।
यः सिद्धिं सुमनः सुखं सुमनसां स्वं ध्यायतामावाहे-स्वं देवं सुमनोमुखैश्च सुमनोभेदेः समभ्यर्चये ॥

ॐ ह्रीं कामनाय विध्वशनाय पुण्यम् ।

यद्दृग्वाषाधविवर्जितं निरुपमं स्वार्त्तमोत्थमस्त्यूजितम् । नित्यानन्दसुखेन तेन लभते यस्तृप्तिमात्यन्तिकीम् ।
यं चाराध्य सुधाशिनो ननु सुधास्वादं लभते चिरम् । तस्योद्यद्द्रसचारुणैव वरुणा श्रोपादमाराराधये ॥

ॐ ह्रीं सुमनः सुखप्रदाय नैवेद्यम् । नर्वपामीति स्वाहा ।

स्वस्थान्यस्य क हृत्प्रकाशनविधौ दीपोपसोप्यन्वहम्, यः सर्वं उच्यते नतकिरणैस्त्रिलोक्यदीपोऽस्त्यतः ।
येनोद्दीपितधर्मतीर्थमभवत्सत्यं धिभो स्वस्य स-दीप्त्या दीपितदिङ्मुखस्य वरणौ दीपैः समुदीपये ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

येनेदं सुवनम्रयं चिरमभूदुद्धूयितं सोप्यहो मोहो येन सुधूपितो निजमहाध्यानाग्निना निर्दयम् ।
यस्यास्थानपदस्थधूपवटजैर्धूमैर्जगद्धूपितम् । धूपैस्तस्य जगद्धशीकरणमद्धूपैः पदं धूपये ॥

ॐ ह्रीं वशीकृतत्रिलोकनायाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

यद्भक्त्या फलदायि पुण्यमुदितं पुण्यं नवं यध्यते । पाप नैव फलप्रदं किमपि नो पापं नवं प्राप्यते ।
आहृत्य फलमद्भुनं शिषसुखं नित्यं फलं लभ्यते । पादौ तस्य फलोत्तमादिसुफलैः श्रेयः फलायार्चयते ॥

ॐ ह्रीं अभीष्टफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

वार्गधतं कुललतातहविःपदीपे-धूपैः फलैः कनकपात्रगतजिनाग्रे ।
नद्यादिवर्तदधिरवस्तिकवर्भदूर्वा-सिद्धार्थकैश्च कुतमहर्धर्मिहोद्धरामः ॥

ॐ ह्रीं विनष्टाष्टकर्मणे अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्तुतिः ।

तुभ्यं नमो दशगुणोजितदिव्यगात्र । कोटिप्रभाकरनिशाकरजैश्रतेजः ।
तुभ्यं नमोऽतिचिरकुर्जयघातिजात- । घातोपजातवशसारगुणाभिराम ॥ १ ॥

तुभ्यं नमः सुरनिकायकृतैर्विहारे । दिव्यैश्चतुर्दशविधातिशयैरुपेत ॥
 तुभ्यं नमस्त्रिशुभनाधिपतित्वलक्ष्म-श्रीप्रातिहार्याष्टकलक्षितार्हम् ॥ २ ॥
 तुभ्यं नमो निरुपमान अनन्तवीर्य । तुभ्यं नमो निजनिरंजननित्यसौख्य ॥
 तुभ्यं नमः परमकेवलधोषवार्धे । तुभ्यं नमः समसमस्तपदाषलोक ॥ ३ ॥
 तुभ्यं नमः सकलमंगलवस्तुसुख्य । तुभ्यं नमः शिषसुखप्रद पापहारिन् ।
 तुभ्यं नमस्त्रिजगदुत्तमलोकपूज्य । तुभ्यं नमः वारणभूषण रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥
 तुभ्यं नमोस्तु नवकेवलपूर्वलब्धे । तुभ्यं नमोस्तु परमैश्वर्योपलब्धे ।
 तुभ्यं नमोऽस्तु सुनिकुंजरयूथनाथ । तुभ्यं नमोस्तु सुवनत्रितयैकनाथ ॥ ५ ॥

(२) सिद्ध वृजा ।

भाहता इव सिद्धसुक्तिवनितां सुक्तान्यसंगा ययुः । तिष्ठत्यष्टमभूमिमौधशिखरे मानन्तसौख्याः सदा ॥
 साक्षात्कुर्वत एव सर्वमनिशं सालोकलोकं समं । तानद्भेद्विदुद्विदुद्विदुद्विनिकरानावाहनाद्यैर्भजे ॥
 ॐ ह्रीं गमो विदाणं विद्वपरमेष्ठिन् अत्र एहिरे संवौषट् । ॐ ह्रीं गमो विद्वान विद्वपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ ठः ठः ।
 ॐ ह्रीं गमो विद्वान विद्वपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।
 गंगादितित्यप्पवषट्पएहिं सर्गं वदाणिममलदापएहिं । अच्चेमि णिच्चं परमठ्ठसिद्धे सब्वट्ठसम्पादय सम्बसिद्धे ।

ॐ ह्रीं श्रीं नमः विद्धाधिपतये जल निर्वपामीति स्वाहा ।

गःधेहिं धाणाण सुहृत्पएहिं, समच्चयाणं पि सुहृत्पएहिं . अच्चेमि० ॥ गन्धं । २ ॥
 पेरंत छोणासिय काणणेहिं, वरवत्तएहिं सियकाणणेहिं ॥ अच्चेमि० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
 पुष्पेहिं दिव्येहिं सुवण्णएहिं, कव्वे कज्जेहिं सुवण्णएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥
 बन्नेहिं णाणासुरसत्पएहिं, भव्वाणाणाणायिरसत्पएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ बरु ॥ ५ ॥
 देदिव्यमाणत्पहदीधएहिं । संजयआणं मिरिदिवएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ दीपम् ॥ ६ ॥
 काळाअरुभूयसुहृत्पएहिं । जीयाण पावाण सुहृत्पएहिम् ॥ अच्चेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥

ध्वजावभूरङ्गि फळवण्णि । वनस्य संदिपणफळवण्णिम् ॥ अवेमि० ॥ फलं । ८ ॥

णयेण णणेण य दसणेण तवेण उट्टेण य संजसेण ॥
सिद्धे तिकाले सुविमुद्धुद्धे । समघयामो सयळे धि सिद्धे ॥

ॐ ह्रीं ह्रीं श्री सिद्धाधितये अर्घं निर्वामीति स्वाहा ।

स्तुति ।

नमस्ते पुरुषार्थीनां, परां काष्ठां विष्टिनं । सिद्धमद्वारकस्तोत्र, निष्टिनार्थं निरञ्जन ॥ १ ॥
स्वापदानं नपतुभ्यं अत्रलानं नमोस्तु ते । कक्षयाय नमस्तुभ्यं, अठभावाधाय ते नमः ॥ २ ॥
अनतोऽन्तं विज्ञानं हृद्यार्थं सुखास्पदं । नमो नो जसे तुभ्यं निर्मलायास्तु ते नमः ॥ ३ ॥
उच्छेद्याथ नमस्तुभ्यं, अक्षेद्यं नमो नमः । अक्षताय नमस्तुभ्यं, अपसेयं नमोस्तु ते ॥ ४ ॥
यतोस्त्वगर्भवासाय, नमोऽगौरवलाघयं । अक्षोऽभयाय नमस्तुभ्यमविलोनाय ते नमः ॥ ५ ॥
नमः पादकाष्ठात्तयोऽगूरुपत्न्यस्युषे लोकाग्रथासिने तुभ्यं, नमोऽन्तं गुणाश्रय ॥ ६ ॥
निःशेषपुरुषार्थीनां, निष्ठां । सिद्धमधिष्टिनं । सिद्धमद्वारकत्रात, सूर्यो भूयो नमोस्तु ते ॥ ७ ॥

विनिष्कुरि-भुद्धान्मर्थतार्थबुद्धान् । परमसुखसमुद्धान्युक्तिशास्त्राविरुद्धान् ॥
पद्मनिष्कुरि-भुद्धान् सर्वलोकप्रसिद्धान् । प्रमितसुनयसिद्धान्संस्तुवे सर्वसिद्धान् ॥ ८ ॥

(३) महर्षिपूजा ।

ये येऽनगारा ऋषयो यतीन्द्रा, मुनीश्वरा अव्यभारद्वयतीनाः ।
तेषां ससेषां पदपंक्तानि, सपूजयामो गुणशीलसिद्धय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अम्भदर्शनज्ञानचारित्रपवित्ररगात्रचतुरशीतिलक्षगुणगुणधरचरणा आगच्छत २ संबोषट्, ॐ ह्रीं अत्र तिष्ठ २ ठः ठः,
ॐ ह्रीं मम (मन्त्रयशुदि कुरुन २ षषट् ।

सुनंधिशीतलैः स्वच्छैः, शान्दुभिर्विभलैर्जलैः । साधद्वीपद्वयातीतभवद्वययतीन्यजे ।

ॐ ह्रीं गणधरचरणेभ्यो जलं निर्वापीति स्वाहा ।

सारकर्पूरकाशमीरकलितश्रन्वनद्रवैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ गंधम् ॥ १ ॥
 अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैरक्षसन्निभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ अक्षतम् ॥ ३ ॥
 पुष्पैः प्रसरदामोदाहृतपुष्पंधयावृत्तैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ पुष्पम् ॥ ४ ॥
 हृद्यैर्नवघृतापूपपायसैर्व्यजनान्धितः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ चरु ॥ ५ ॥
 कर्पूरमरुचैर्दीपित्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ दीपं ॥ ६ ॥
 दशांगधूपसद्भूमैदशाशापूर्णसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ धूपं ॥ ७ ॥
 चोचमोचाभ्रजंबीरफलपूरादिसत्फलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ फलं ॥ ८ ॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैककमधून् । प्रकटिननिजस्वार्गान्धवस्तसिथयात्पसागोन् ।
 परिचिनजितत्वान्पालिताशेषस्तवान् । शमरसजितचन्द्रानर्घयामो मुनीन्द्रान् ॥ अर्घ ॥ ९ ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः, सप्तर्षयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः ।
 तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, वचोमनोमूर्द्धसु धारयामः ॥ १ ॥
 तपोधलाक्षीणरसौषपद्धिन्, विज्ञानऋद्वीनपि विक्रियद्धीन्
 सप्तद्धियुक्तानखिलानृषीन्द्रन्समामि वन्दे प्रणमामि नित्यम् । २ ॥
 ऋषेषु तार्थेषु तदंतरेषु, सप्तर्षयो ये महिता बभूवुः ।
 भवांबुधेः पारमिताः कृतार्थाः । भवन्तु नस्ते सुनयः प्रसिद्धाः ॥ ३ ॥
 ये केवलीन्द्राः श्रुतकेवलीन्द्रा, ये शिक्षकात्तूर्यतृतीयबोधाः ।
 सविक्रिया ये वरवादिनश्च सप्तर्षिसंज्ञाहि तान्प्रवन्दे ॥ ४ ॥
 प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्धद्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति ।
 उत्कृषतस्नात्तत्रकोटिसंख्यान्वन्दे त्रिसंख्यारहितान्मुनीन्द्रान् ॥ ५ ॥

(४) नीचेका स्वस्तिपाठ पढ़कर पुष्पांजलि क्षेपे ।

श्री पंचकल्याणमहार्हणाहीं, वागात्मभारशक्तिशयैरुपेताः ।

तीर्थकाराः केवलिनश्च शेषाः, स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥ १ ॥

ते शुद्धमूलोत्तरसद्गुणानामाद्याभवादनगारसंज्ञाः निर्ग्रथत्रयो निरवद्यत्रयो ॥ स्वस्ति० ॥ २ ॥
 ये चाणिमाद्यष्टसुधिक्रियात्वास्तथाक्षयाषासमहानन्नाश्च । राजर्षयस्ते सुरराजपूज्याः स्वस्तिक्रियां० ॥ ३ ॥
 ये कोष्ठबुध्यादित्तुर्धिवर्द्धीयापुरासर्गसुखौषधर्द्धीः । ब्रह्मर्षयो ब्रह्मण तत्परास्ते ॥ स्वस्ति० ॥ ४ ॥
 जलादिनानाविधचारणा ये, ये चारणाऽऽर्थांश्चरचाराश्च । देवर्षस्यते नतदेववृंदाः ॥ स्वस्ति० ॥ ५ ॥
 सालोक्यलोकोऽऽवबलनैकतानं, प्राप्ताः परं ज्योतिरनंतबोधम् । सर्वषिंबंध्याः परमर्षयस्ते । स्वस्तिक्रियां० ॥ ६ ॥
 श्रेणीद्वयारोहणमावधानाः, कर्मोपशांतिक्षणप्रवीणाः । एते ममस्ना भतयो महान्तः ॥ स्वस्ति ॥ ७ ॥
 समग्रमध्यक्षमिताक्षदेशपत्यक्षस्यसुखातुक्ताः । सुनीस्वरास्ते जगदेकभान्या ॥ स्वस्ति० ॥ ८ ॥
 उग्रं च दीप्तं च तपोभित्तं, महच्च धार च तगं चरन्तः । तपोधना निर्वृ तमाधनोत्काः ॥ स्वस्ति० ॥ ९ ॥
 मनोवचःकायबलप्रकृष्टाः, स्पष्ट कृपाश्रांगमहानिह्मिता । क्षारासृत्स विमुखा सुनीद्राः । स्वस्ति० ॥ १० ॥
 प्रत्येकबुद्धपमुखा सुनीद्रा शेषश्च ये ये त्रिविधद्विद्युक्ता । सर्वेऽपि ते मन्त्रजर्नानयुक्ताः ॥ स्वस्ति० ॥ ११ ॥
 शापानुग्रहशक्तभद्यतिशयैरुच्चावचैरचिनाः । ये सर्वे परमर्षया भगवतां तेषां गुणतोषतः ॥
 एतस्वस्त्ययनादपैति सकल , संक्षेशभावः शुभो । भाव स्यात्सुकुनं च नच्छुषन्निधेऽदाविदं श्रेयसे ॥ १२ ॥

फिर आचार्य नीचे लिखा मंत्र पढ़ भूमिशुद्धिके लिये जल छिड़के । “ ॐ ही श्री क्षीं भूः स्वाहा । ” फिर शुद्ध भूमिपर या बड़ी चौकीपर बाधिया करके १०८ या ५४ या २७ या ९ कलश क्षीर जलसे भरे स्थापित करे, या रखे हों तो यह मंत्र पढ़ उनपर पुष्प क्षेपे—“ ॐ हीं स्वस्तये कलशस्थापन करोमि स्वाहा । ” तथा जिस उच्च स्थानपर न्दधन करना हो उसके चारों कोनोंपर ४ कलश शुद्ध जलके भरे स्थापित करे तत्र भी ऊपर लिखा मंत्र पढ़े । इसके ऊपर ऐसा पात्र विराजमान करे जिसके दोनों ओर पानी बहनेकी नाली हो जिससे न्दधनका जल दोनों तरफ गिरकर नीचे रखे हुए तल्लोमें पड़े । भूमिपर दो तल्ले ऐसे दोनों तरफ रख दिये जावें जिससे कुल कलशोंका न्दधन जल उनमें आ सके । फिर जिस पीठ या चौकीपर भगवानको विराजमान करना हो उसे उच्च पात्रके ऊपर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर रखे—“ ॐ हीं अर्ह क्षं ठः स्वाहा । ” फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ उच्च पीठको धोवे—

ॐ हा हीं हूं ह्रीं नमो अइंते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन श्रीपठपक्षालनं करोमि स्वाहा । फिा नीचे हा मंत्र पढ उच पीठपर श्री लिखे— ॐ ह्रीं श्रीं अईं श्रीं छेत्वन हर मि स्वाहा । ” फिा न चे लिख मंत्र पढ इन्द्र जिन प्रतिमाको जिष्की प्रतिष्ठा हो चुकी है यथो क्तो । ॐ ह्रीं नोत्रे नषट् प्रतिमा पर्शन्म् । ” फिा बोच प्रतिमान्ता बड़ी विनयसे इन्द्र लावे और पीठपर विराजमान करे तब याचार्य नीचे हा हा न व मंत्र पढे—

नांस्व। मूरेदिभ्रनिनः ता गिणि श्रीं पांडुनायास्ने । पूर्वास्य चिन्नेशेइय ते सुरवराः, सखापयंति स्म यम् ॥
नं देवं सपलागपंपुपयिचिं। नांता चिन्नुना चमं । पंठेत्र शुनवीजभासुशतले, पूर्वाननं स्थापये ॥

ॐ ह्रीं श्रीं श्रीं चर्मन नीं वगाग भगवन्निर पांडु-शिशु पठे तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा ।

फिा नं चे लिख मंत्र पढ प्रतिमाके चरणोंको इन्द्र स्पर्शे—

ॐ उन्हाय दिव देवाय राज जादाय सङ्ग णाय अणश्चरट्टयाय परमसुहृपड्डयाय णिमलाय ष्यभुवे अजराभरपरमपदपत्ताय नउसुइपामे ट्टणे अरताय तिलोयणाणाय तिलोयपूजाय अट्टुदन्वदेहाय देवपरिपूजिताय परमपदाय मम यस्य स न्निदाय स्वाहा ।

फिा दोनो अर सौपर्य ईशान १०८ अक्षरमेंसे एक कलश लेकर खड़े हों तब आचार्य नीचे हा इलोक व मंत्र पढे । इसके पढके यदि भाषा मगल पढना हो तो दूसरा मगल पढके

सौरोसूर्धनि वृद्धिन वरुद पयसां, अनां योवार्थिधेः सौधर्मः प्रथमं जयेति परया, अकत्या सखायातथत् ॥
ईशानादि सुरेश्वराक्षरानु चं, सखापयांचकिरे तं देवं लिजपंकपापनकृते, संखापयामो जिनम् ॥ १ ॥
यज्ज्ञातादि नरानिनिंनयारराकाशयित्वा गत्वा । व्याजान्त्वभिविचनीह, जिनमित्यापिष्कुनाशंरुक्कैः ॥
अच्छाच्छैरपि चीनतः सुभयुरैर्ताथीपनांतंजैलैः । शांत्यापादितवारिसूर्तिमनघं, देवं जिनं स्थापये ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं गईं वं मं ह न त प ग व हं ङं ष सं तं तं पं प इत्री इत्री क्षत्री क्षत्री द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोर्हिते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनगमिषेचयामि स्वाहा ।

आचार्य उगाने मंत्रको पढना रहे, १०८ कलशोसे दोनो इन्द्र अभिषेक करते रहे, दोनो ताफ कताबंध दूधरे इन्द्र खड़े हो जावे और कलशोंको देस रहे । खाली कलशोंको पंछेके इन्द्र लेकर रखते रहे । न्हुवनके समय बाहर ब.जे बजते रहे, स्त्रिया मंगलगीत गावे, जग जय गन्ध हो फिा उदक चन्दनादि बलभर अर्घ्य चढावे । फिा केशरादि मिश्रित गाढ़े जलके कलशसे स्नान हो तब यह इतिरु व मंत्र पढ़ा जावे—

चतुर्विंशतिपथा आदित्यचन्द्रमंगलयुधवृहस्पतिशुक्रशनिराहुकेतुप्रमृत्पृष्ठाशीतिप्रहाः यासुकिशखपालककौटपयकुलिकानंततक्षकमहापयजय
विजयनागाः देवनागयक्षगन्धर्वब्रह्मराक्षसभूतव्यतरप्रभृतिभूताश्च सर्वेयेते जिनशासनवत्सलाः ऋष्यार्थिकाश्रवकश्राविकायष्टूयाजकाराजमंत्रि
पुरोहितप्रांताश्चिक्रप्रभृतिषमस्तलोकषमूहस्य शातिवृद्धिपुष्टिषिक्षेमकल्याणस्वायुरारोग्यप्रदा भवतु । सर्वसौख्यप्रदाश्च सन्तु । देशे राज्यपुरे
च सर्वदेव चौरारिमारीतिदुर्भिक्षावप्रद्विघ्नोषदुष्टप्रहभूतशाकिनीप्रमृत्पृष्ठाभिष्टानि प्रलयं प्रथंनु, राजा विजयी भवतु ब्रजासौख्यं भवतु, राज-
प्रभृतिषमस्तलोकाः वतंतं जिनघमंत्सलाः पूजादानन्ननशीलमहामहोत्सवप्रभृतिषूथता भवंतु. त्रिकाल नन्दन्तु । यत्र स्थिता भव्यप्राणिनः
संपारचागरं लीक्येत्तोर्यानुपमं सिद्धिषील्यपनन्तकालमुभवंति तच्चाशेषप्राणिगणशरणभूतं जिनशासनं नंदत्विति स्वाहा ।

फिर न चेके श्लोक पढ़े व इन्द्रादि हाथ जोड़े व पुष्प क्षेपण करते रहे ।

ये सामग्री विशेषहृदिमभरहवात्क्षिप्तदुर्गारैरि-

त्रात्प्रेष्यत्पताकामततपरिचितज्ञानसाम्राज्यलीलाः ।

भूनाथोद्भेदकन्दव्यवहरणघटोद्भिद्यष्टकौक्तियुक्ति-

क्षिप्तसप्त मन्यमाना जगदतिपुनते ते जिनाः पांतु विश्वम् ॥ ४ ॥

स्फूर्जच्छलशुदधिर्भरमसितदशामाकुतैः पतंगाः,

स्यांगाकाराक्षरैकक्षणसुमरनिराकारस्वाकारचित्काः ।

व्योम्नोविश्वेकथाज्ञः कूलतिलरुचः प्रष्टमात्मभराणां,

व्यंजन्तः स्वं सदान्यजिनस्रमयजुषाः सन्तुसिद्धाः शिवाय ॥ ५ ॥

श्रुतधृतिबलसिद्धाः पञ्चधाचारसुचैः, शिवसुखमनसो ये चारयन्तश्चरंति ।

शमरसभरसंविदुभूर्यः सूरयस्ते, विदधतु जिनधर्माराधनाशिष्टसिद्धिम् ॥ ६ ॥

यंगपविष्टबहिरंगजिनागमाब्धिपारंगमा, निरतिचारचरित्रसाराः ।

धर्मं यथावदनुशासति शिष्यधर्गान्, पुष्णंतु पाठकवृषा जगतां नमस्ते ॥ ७ ॥

नुद्धृचा ध्यानात्परमपुरुषं तत्त्वत. श्रद्धधानाः, ये विद्वांसःस्वयमुपरतप्रत्यनीकप्रतापम् ।

एकीकुर्वत्युदयानन्दनिष्पीतचितारते, भव्यानां दुरितमनिशं साधव संहारंतु ॥ ८ ॥

ये मंगललोकोत्तमशरणारमानं समृद्धमहिमान, पांतु जयंत्यहत्सिद्धसाधुकेवल्युषशधर्मस्ते ॥ ९ ॥

सुते भेवाभेदरत्नत्रयात्मानाद्यंताद्यंतार्थोदितौ शुक्तिशुक्ती ।

सोस्मिन् राजामात्यपौरादिलोकान्, धर्मस्तन्वन् शर्म पायादपायात् ॥ १० ॥

शांतिः स तनुतां समस्तजगति संगतवतां धार्मिकं, श्रेयःश्री परिवर्द्धतां नयधुराधुर्यो धारित्रीपतिः ।
सद्विद्यारसमुद्दिान्तु कवयो नामाप्यधः स्यात्तु मा, प्रार्थय वा क्रियदेक एव शिषकृद्धर्मो जयत्वर्हताम् ॥२०॥

पतिष्ठा-

॥१७५॥

फिर नीचेके श्लोक पढ़कर आचार्य इन्द्रादिके मस्तकपर पुष्प क्षेपे ।

आयुस्तन्वन्तु तुष्टिं विदधतु विधुनंत्वापदो द्वन्तु विद्वान्,

कुर्वन्वारोग्यसुखीषलयविलासितां कीर्तिवल्लीं सृजन्तु ।

धर्मं संवर्धयन्तु श्रियमभिरमयत्वर्पयन्तिवृष्टकामान्,

कैवल्यश्रीकटाक्षानपि जिनचरणाः संजयन्तु सदा वै ॥ २५ ॥

आज्ञैश्वर्यमकार्यविचयैः सन्तानवृद्धिजयैः, सौभाग्य धनधान्यवृद्धिरभयं निःक्षेपशत्रुक्षयः ।
पांडित्यं कविता परार्थपरता कार्तज्ञमोजस्विता, मानित्वं विनयो जयश्च भवतादर्हंप्रसादेन वः ॥२६॥
कांताः कांतिकलानुरागमधुराः पूण्यास्त्रिवर्गोद्धुरा,

भृत्याः स्वाभ्यनुरक्तिशक्तिरुचिरा इत्योतन्मदाः कुञ्जराः ।

वाहास्तजितशक्रसूर्यतुरगाः शौर्योद्धृताः पत्नयो,

भूयास्तुर्भवतां जिनेन्द्रचरणांभोजप्रसादात्सदा ॥ २७ ॥

गांभार्थमौदार्यमजयमार्यशौर्यं सशौडौर्यमवार्थवीवीर्यम्,

धैर्यं विपद्यार्जवमार्यभक्तिः संपद्यतां श्रीजिनपूजनाद्गः ॥ २८ ॥

भवतु भवतामर्हद्भक्त्या सदा सुदितं मनो, ग्रहसुपचिता चौरौचित्यं प्रदासेन परस्परः ।

प्रणयविधशः स्वैसंबौसौदयागयमाहितं, स्थितिरपि चित्ते प्रज्ञापराधपराहतिः ॥ २९ ॥

हृक्संशुद्धिरतोन्यतोस्तु भवतामर्हत्प्रतिष्ठाविधे, जातु कृष्टि कथंचिदीषदपि मा शीलं व्रतं म्लायतु ।

दूरादेव शिरस्यधीरमरयो बध्नन्तु देवांजलिं, प्रेम्णा सद्गुणसंपदा च सुहृदः श्लिष्यन्तु पुष्णन्तु च ॥३०॥

यष्टृणां याजकानां प्रतिनृत्कृतामभ्यनुज्ञायकानां, भूयस्यांतः पुरस्य क्षितिपतनुशुभां मंत्रिसेनापतीनाम् ।

सामंतानां पुरोधःपुरविषयवनादिस्थवर्णाश्रमाणां, सर्वेषामस्तु शांत्यै सततमयमिह स्थापितो विश्वनाथः ॥३१॥

॥१७५॥

सार सं०

निचित्रैः स्वैर्द्रव्यं प्रतिसमयमुद्यद्विपदपि, स्वरूपाहुल्लोलैर्जलमिव सनागप्यविचलम् ।
अनेहो माहात्म्याहितनवनर्षी प्रायसखिलं, प्रणिपथाः स्पष्टं युगपद्विहते पांतु जिनपाः ॥ ३२ ॥
संभुज्यार्थिभिः संनिभज्य च यथाविधेयसन्नाथया, निर्धिण्णास्तृणवद्विस्तृण कसलां खं स्वं स्वयं केऽपि धे ।
संवेद्यामलकेवलचलचिदानदे सुदवाप्तते ते सिद्धाः प्रथयतु न प्रति शिष्यश्रीसद्विलासान् ॥ ३३ ॥

ज्ञात्वा श्रद्धाय तत्त्वं भजति रुसरसास्वादमानान्यनीहा,-

दुत्तया प्राणानुसर्पन्स्फुरन्नु च कृत्वा नष्टमे ब्रह्मरक्षे ।

भृशयत्यह्वाय सोऽशौ मृत्तिमयति सनः केवलं चापि भाया,-

च्छून्यध्यानेन येषां प्रसन्नमगमिसे योगिनस्तन्वतां षः ॥ ३४ ॥

नार्पत्यान् धिरमयांनहितपत्नरुजौ दत्तशंषान्बितन्वन्,

निश्रेण्यांकृत्य भोगं बलयितपृथुतःमूलमार्द्राहिनांघ्रि ।

श्रीकुंड्रंगगृह्यावनितरुद्रि, खरा चौवर्तणः स्वर्षण,-

ठयासंगं संगमस्य व्यधितबहुभयाः वीरनाथः स बोध्यात् ॥ ३५ ॥

फिर आचार्य व इन्द्र आदि कायोत्सर्ग करे, ९ दफे णमोकार मत्र पढे । फिर नीचे लिखी स्तुति श्रव पात्र मिलकर पढे । फिर
पर्व समा खड़ी होजावे तत्र पुण। वचको वाट दिये जावे और यागमडल सहिन वेदीकी जगवा फेरीका स्थान न हो तो मंडपभरकी तोल
प्रदक्षिणा देवे । पहले आचार्य फिर इन्द्र फिर पात्र फं पुरुष फिर स्त्रिया रहे । शान्तिपठ पढ़न रहे । शान्तिपाठ होजावे तो दूसरे पाठ
पढते रहे । फिर आकर कायोत्सर्ग करे । तथा १ व २ भजन पढ़े जावे । फिर विप्रर्जन की जावे । इस समय बड़ा आनंद मनाया
जावे । जो गधर्वादि याचक हो उनको दान दिया जावे । व बहार भूखोंको अनादि बाटा जावे । प्रतिमाको मूल वेदीपर विराजमान
किया जावे, यह प्रतिष्ठाविधि पूर्ण हो ।

स्तुतिः ।

त्रिभंगी छन्द-जय जय अरुहंता सिद्ध संहंता, आचारज उषझाय वरं,

जय साधु महानं सम्यग्ज्ञानं, सम्पाकूकारित पालकरं ।

हे मंगलकारी भय हतारी, पाप प्रहारी पूडारं,

दीनन निस्तारन सुख विस्तारन, करुणाधारी ज्ञानवरं ॥ १ ॥

हम अबसर पाए पूज रचाए करी प्रतिष्ठा विम्ब महा,
बहु पुण्य उपाए पाप धुवाए सुख उपजाये सार महा ।
जिन गुण कथ पाए भाव बढ़ाए दोष हटाये यश लोना,

तन सफल कराया आत्म लखाया दुर्गतिकारण हर लीना ॥ २ ॥

निज मति अनुसारं बल अनुसारं यज्ञविधान बनाया है,

सब भूल चूक प्रसु क्षमा करो अथ यह अरदास सुनाया है ।

हम दास तिहारे नाम लेत हैं इनना भाव बढ़ाया है,

सच याहासे सब काज पूर्ण हों यह श्रद्धान जमाया है ॥ ३ ॥

तुम गुणका चिन्तन होय निरन्तर जावत मोक्ष न पद पावें,

तुमरी पदपूजा करै निरन्तर जावत उच्च न हो जावें ।

हम पढन तत्त्व अभ्यास रहे नित जावत बोध न सर्व लहें,

शुभ सामायिक अर ध्यान आत्मका करत रहें निज तत्त्व गहें ॥ ४ ॥

जय जय तीर्थकर गुण रतनाकर सम्यक्ज्ञान दिवाकर हो,

जय जय गुण पूरण औगुण चूरण संशय तिमिर हरणकर हो ।

जय जय भवसागर तारण कारण तुम ही भवि आलम्बन हो,

जय जय कृतकृत्य नमैं तुम्हें नित तुम सब संकट टारन हो ॥ ५ ॥

अध्याय दशवाँ । आचार्यादि प्रतिविम्ब प्रतिष्ठाविधि ।

सिद्ध प्रतिविम्ब—अर्हत और सिद्धके विम्बमें इतना अन्तर होता है कि अर्हतके आठ प्रातिहार्य होते हैं जब कि सिद्धके नहीं होते । हमारी रायमें अर्हन्त और सिद्धकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठामें कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि अर्हन्तके विम्बमें हम पाँचों कल्याणकोंका आरोप कर देते हैं । अन्य आचार्यादिकी प्रतिष्ठामें अन्तर होना ही चाहिये क्योंकि इनके कल्याणक नहीं होते हैं ।

(१) आचार्य प्रतिविम्ब प्रतिष्ठाविधि—पीछी कमंडलके चिह्न ब्रह्मित आचार्यकी मूर्ति होती है । आपन पद्मासन या खुडगासन ही मूल्य है, नगना होती है, आचार्यकी प्रतिष्ठामें १००० मन्त्रकी जाप देवे । जैसे तीर्थंकरकी मूर्तिमें १ लाखकी दी थी, मन्त्र वही है । पहले मंडप बनाकर यागमंडलका माडला बनावे उसमें पहले अध्यायके अनुष्ठार मध्यमें ॐ लिखे उसके चारों तरफ १७ खानेका बलय करे, फिर दूसरा बलय ३६ कोठोंका हो जिनमें आचार्यके छत्तीस गुण लिखे जाय । फिर तीसरा बलय ४८ कोठोंका हो जिनमें ऋद्धिये लिखी जाय । इस तरह तीन बलयका मंडल बनाकर जो पूजा दूधरे अध्यायमें लिखी उसके उषो विधिसे इन्द्र व आचार्य करे । अंगशुद्धि, न्यास व सत्कीकरण विधि पहलेके अनुष्ठार की जाय । फिर पूजामें अर्घ्य १७+३६+४८=१०१ इतने चढ़े श्लोक व छन्द वे ही हैं । पूजाके पहले पूज्य प्रतिमा अर्हतका अभिषेक करे फिर तीन कुण्डोंमें इस क्रिया जावे । होममें शल्यजाताय नमः आदि मन्त्रोंके चियाय १०८ आहुति उषी मन्त्रकी देवे जो बहा लिखा है । फिर स्तुति पढ़ी जाय व मंडलकी पूजा को जावे । पूजाके पीछे आचार्यभक्ति, अर्हतभक्ति, सिद्धभक्ति व चारित्रभक्ति पढ़ें । फिर दूसरे दिन या उषी दिन मंडपमें पहली विधिके अनुष्ठार अंगशुद्धि, अभिषेक निलपूजा व होम करके आचार्यके विम्बकी प्रतिष्ठाका प्रारम्भ करे । यदि उषी दिन प्रतिष्ठा करना हो ता फिर होम करनेकी जरूरत नहीं है । आचार्यके विम्बको अभिषेक करनेकी पीठार विराजमान करे । फिर इन्द्र शुद्ध जलसे स्नान करावे । पीछे पाँच आचारके रूपमें पाँच कलशोंसे जिनमें केशरादि द्रव्य बहुत मिठा हो सर्वोषधिके रूपमें उनसे स्नान करावे । फिर प्रतिमाको पोंछकर पाचवें अध्यायमें कहे प्रमाण मातृकामन्त्रको १०८ बार जपकर प्रतिमाके अंगपर सोनेकी बजाईसे लिखकर ३८ न० तक लिखा जावे फिर महर्षि उपासना की जाय ।

ये येऽनगारा ऋषयो यतीन्द्रा, सुनीश्वरा भव्यभवद्व्यतीताः ।

तेषां समेषां पदपंकजानि, सम्पूजयामो गुणशीलसिद्धयै ॥ १ ॥

ॐ ही षम्यदशेनज्ञानचारित्रपवित्ररगात्रचतुशीतिलक्षगुणगणधरचरणा आगच्छत २ ववौषट् । ॐ ही षम्यगुं अत्र तिष्ठत २ ः ः । ॐ ही षम्यगुं मम रत्नत्रयशुद्धि कुरुत २ अत्र मम बलिहता भयत २ वषट् । अथाष्टकम् ।

सुगन्धिधीतलैः स्वच्छैः स्वादुभिविभलैः सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं गणवाचरेभ्यो जलं निधायामिति स्याहा ।

सारकर्पूरकाश्मीरकलितैश्चन्दनद्रवैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं गन्धम् ॥
 अक्षतैरक्षतैः सुधैर्वलक्षैकक्षसंनिमैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं अक्षतान् ॥
 पुष्पैः प्रसरदामोदाहनपुष्पधयावृणैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं पुष्पाणि ॥
 हृदयैर्नवपशुनापूपपायसव्यंजनान्धितैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं चरुं ॥
 कर्पूरप्रभवदीपैर्दीपत्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं दीपम् ॥
 दशांगधूपसदूधमैदशाशापूर्णसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं धूपम् ॥
 चोचमोचचात्रजम्बीरफलपुंगुादिसत्फलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं फलम् ॥
 गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैकबन्धून् । प्रकटितनिजमार्गान्ध्वस्तमिधयात्वमार्गान् ।
 परिचितनिजतत्त्वान्पालितशोषसत्त्वान् । शम्बरसजितचन्द्रानर्धयामो सुनीद्रान् ॥ ॐ ह्रीं अर्घं ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः, समर्द्धयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः ।

तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, षचोमनोमूर्धसु धारयामः ॥ १ ॥

तपोपलाक्षीणरसौषधर्द्धीन्, विज्ञानक्रद्धीनपि विक्रियर्द्धीन्

समर्द्धियुक्तानखिलादृषान्द्रान्स्मरामि धन्दे प्रणम्य मि नित्यम् ॥ २ ॥

सर्वेषु तीर्थेषु तदन्तरेषु, समर्षया ये सद्दिता बभूवुः ।

भवांबुधेः पारमिताः कृतार्थो, भवन्तु नस्ते सुनयः प्रसन्नः ॥ ३ ॥

ये केवलीन्द्राः श्रुतकेवलीन्द्रा, ये शिक्षकास्तुर्थतृतीयबोधाः ।

सविक्रिया ये वरवाल्किनश्च, समर्षिसंज्ञानिह तान्प्रवन्दे ॥ ४ ॥

प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्धं, दीपद्वये ये युगपद्भवन्ति ।

उत्कर्षतस्मान्नवकोटिसंख्यान्वन्दे, त्रिभंखगारहिताःसुनीन्द्रान् ॥ ५ ॥

फिर प्रातमाको स्पर्श काके पुष्पाजल देवे ओर पव आचार प्रतिमामे स्यापित करे । नीचे प्रमाण मन्त्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेपे-

ॐ हूं दर्शनाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं ज्ञानाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं चारित्राचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं तपाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः । ॐ हूं वीर्याचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः ।

फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेपे—

ॐ हूं णमो आइरियाण आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र एहि षवौषट्, ॐ हूं णमो आइरियाणं आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ ठः ठः, ॐ हूं णमो आइरियाण मम चन्निहितो भव मन्न वषट् । फिर १०८ दफे नीचे लिखा मन्त्र पढ़े—

ॐ णमो आइरियाणं षर्माचार्याधिपतये नमः । फिर सुगंधित केशसे बोनैकी बलाईसे नाभिमें हूं लिखे । यह तिलकदान विधि हुई । फिर अधिवासनाविधिमें नीचे प्रमाण अष्टद्वय चढ़ावे । ॐ हूं णमो आइरियाणं आचार्यपरमेष्ठिन् जलं ग्रहाण २ नमः । इसी तरह जलके स्थानमें चन्दनादि चढ़ावे । फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ मुखपर वस्त्र ढकें व परदा करदे । ॐ हूं मुखवस्त्रं दधामि स्वाहा । फिर आचार्य नम्र होकर चारित्रभक्ति पढ़कर नीचे लिखा मन्त्र १०८ दफे पढ़कर मुखसे कपडा अलग करे ।

ॐ हूं आचार्यमुखवस्त्रं अपनयामि स्वाहा । फिर १०८ दफे नीचे लिखा मन्त्र पढ़ बोनैकी बलाई आलोंमें फेरे ।

“ ॐ हूं आचार्यपबुद्धस्वध्यातृजनमनांषि पुनीहि २ स्वाहा । ” तब परदा हट जावे और सब कहे—श्री आचार्यपरमेष्ठीकी जय । फिर आचार्यकी पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

गीता छन्द-सुनिराज आचारज बड़े, शिव मांगको दर्शावते, जो पालते आचारको, सर अन्यको पलवावते । जो जैन आगम तत्त्व जाने, स्व पर भेद लखावते, निज आराममें रमते सदा, निज ध्यान छम्यक् भावते ॥

ॐ हूं श्री आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र अवतर २ आदि स्थापना ।

स्थापना-अष्टक ।

चाली छन्द-भर सलिल मश शुचि झारी, दै तीन धार हितकारी ।

पद आचारज सुखकारी, पूजत त्रय रोग निवारी ॥ जलम् ॥

चन्दन घस केसर लाऊँ, मनमें बहु बाध धराऊ ।

आचारज हैं गुणदाई, पूजत भव ताप मिटाई ॥ चंदनम् ॥

अक्षत ले कीर्ष अलण्डे, उज्जल गशि ममदुति मण्डे ।

गुरु पाद जजों मन लाई, अक्षयपद हो सुखदाई ॥ अक्षतम् ॥

ले फूल सुवर्ण सुहाई, बहु गंध युतं सुखदाई ।

गुरु पूज काम सुखदाई, भयभीत होय नश जाई ॥ पुष्पम् ॥

ताजे यकबान बनाऊँ, आदर युत गुरु ढिग लाऊँ ।

पूजत क्षुद्र रोग शमाऊँ, अमृत निज ले सुख पाऊँ ॥ नैवेद्यम् ॥

ले दीपक तम हर तारा, बहु ज्योति प्रगट करतारा ।

गुरु पाद पूज सुख पाऊँ भ्रम तम सब तुर्त नशाऊँ ॥ दीपम् ॥

बहु धूप सुगंधित लाऊँ धूपायन माहिं खिवाऊँ ।

आचारन जज हितकारी, जल जांय कर्म दुखकारी ॥ धूपं ॥

बहु वाख बढाम छुहारा. पिस्ता अखरोट समहारा ।

गुरु पाद जजे हित पावे, शिव वनिताको परणावे ॥ फलम् ॥

शुचि द्रव्य जु आठ मिलाऊँ, करि अर्घं महा सुख पाऊ ।

गुरु धरणन शीश नवाऊँ, जासे सब दोष मिटाऊँ ॥ अर्घम् ॥

जयमाल ।

छन्द सृग्विनी—जय कृपाकन्द आनन्दरूपी सदा । आत्म गुण वेदते हैं न तृष्णा कदा ।

धन्य आचाय है साधु रक्षा करें। बोध दे दण्ड दे तत्त्व शिक्षा करें ॥ १ ॥

सात तत्त्वार्थको अद्धते भावसे । तत्त्व शुद्धात्मको चाहते चावसे ॥

दर्शनाचारमें लीन सुख पावते । अन्यको बोध दे दर्श झलकावते ॥ २ ॥

शास्त्रको जानते ज्ञान उपजावते । सप्तभङ्गी सुनय तत्त्वको साधते ॥

मोह मिथ्यात्वके हेतुको टालते । बोध दे ज्ञानको लोक विस्तारते ॥ ३ ॥

मन महा पालते गुप्ति उग्र धारते । पंच समितीनको ध्यानसे पालते ॥

आत्ममें लान जो ध्यान हृद् धारते । सब आचारको लोक विस्तारसे ॥ ४ ॥

तप महा द्वादशं पालते भावसे । अनशन आदिको धारते चावसे ॥

सेव कर साधुजन मानको टालते । भव्यको मार्ग तपमें सदा लावते ॥ ५ ॥

वीर्यको गुप्त रखते नहीं हैं यती । कार्य उत्साहसे श्रूकते नहीं रती ॥

आत्मशक्तिको दिन दिन अधिक पावते । अन्यको बोध दे वीर्य वीस्तारते ॥ ६ ॥

पंच आचार ये पालते भावसे । अन्य साधूनको घोषते चावसे ।
निश्चयं आत्मरस पीबते प्रेमसे । धन्य आचार्य हैं चालते नेमसे ॥ ७ ॥ सहायं० ॥
दोहा-जो पूजे आचार्यको, मन एकाग्र कराय । सो पावे निज निधि लही, भव-सागर तर जाय ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

फिर आचार्यभक्ति या चारित्रभक्ति पढ़के नीचे का श्लोक पढ़कर चहुँओर पुष्प क्षेपे ।

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां, जायतां दीर्घमायु-

र्भूयाद्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिज्जनैस्तात्सदा रोग्यमश्रयम् ।

कीर्तिवर्षास्खिलाभा, प्रभवतु भवतान्निप्रतीपः प्रतापः,

क्षिप्रं स्वमोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां, धर्मसूरिप्रसादात् ।

फिर शांतिपाठ विपर्जन करके आचार्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा पूर्ण की जाय ।

(२) उपाध्याय विवप्रतिष्ठाविधि—उपाध्यायका विम्ब भी मुनिके समान पीछी कमण्डल सहित हो तथा हाथमें या अप्रभागमें शास्त्र चिह्न सहित भी हो सकता है । इसकी भी वन विधि आचार्यविम्बकी प्रतिष्ठा विधिके समान है । अन्तर नीचे प्रमाण है—
(१) मण्डलमें १७ कोठेका पड़ला वलय फिर २५ कोठोंका फिर ४८ कोठोंका हों ।
(२) उपाध्यायके विम्बको पांच कदशोंके स्थानमें प्रथमानुयोग आदि ४ अनुयोगके रूपमें चार कदशोंसे अभिषेक करे ।
(३) पंच आचारके स्थानमें चार अनुयोग प्रतिमामें नीचेके मंत्रोंसे स्थापित करे—ॐ हौं प्रथमानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं करणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं चरणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं चरणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः । ॐ हौं चरणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः ।

(४) तिलकदानमें आह्वानन मंत्र नीचे प्रमाण पढ़े—ॐ हौं णमो उवञ्जायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र एहि २ बंबौषट् । ॐ हौं णमो० अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ॐ हौं णमो० ममन्निति भव २ वषट् । तथा जाप १०८ दफे नीचे लिखे मंत्रकी देवे—ॐ हौं णमो उवञ्जायाण पाठकाय नमः । तथा नाभिमैं हौं लिखे ।

(५) अधिवापनाविधिमें नीचेके मन्त्रसे आठ द्रव्य चढ़ावे । ॐ हौं णमो उवञ्जायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिन् जल गुहाण २ नमः इत्यादि ।

(६) मुखको दकनैका नीचेका मन्त्र पढ़े—ॐ हौं मुखवलं दवामि स्वाहा ।

(७) मुखके उद्घाटनमें यह मन्त्र पढ़े—ॐ हौं उपाध्यायमुखवलं अपनयामि स्वाहा ।

(८) नयनोन्मीलन मन्त्र यह पढ़े—ॐ हौं उपाध्यायप्रबुद्धस्व ध्यातुजनमनांसि पुनीहि २ स्वाहा ।

(९) पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

मुनिराज पाठक तत्त्वज्ञानी, तत्त्व शिक्षा देते हैं। बहु शिष्य पढ़ते जिनगमं, अज्ञान तिनहर लेते हैं ॥
अनुयोग चारों जानते, अध्यात्म विद्या नाथ हैं। चारित्र साधु सुपालते बहु, साधु रहते साथ हैं ॥

ॐ ह्रीं उपाध्यायपरमेश्वरिन् अथ अवतर २ अर्घं निर्वपामोति स्वाहा ।

छन्द मालिनी—सम रम सम चोखा लाय पानी सुमारं । सुवरण झारी ले भव गदं सर्व दारं ॥

कर शुचि मन पूजं, पाठकं तत्त्व धारी । नमत सम कुबोधं, होय आनंद भारी ॥ जलं ॥
बहु सुरभि धराई, चन्दनं लाय नीके । भव ताप बुझाई, अमृतं शांत पीके ।

कर शुचि मन पूजं, पाठकं तत्त्वधारी । नशत सम कुबोधं, होय आनन्द भारी ॥ चन्दनं ॥
करमें अक्षत ले, दीर्घ अति श्वेतवर्णं । अखय गुण प्रचारी, सर्व अन्देह हर्षं ॥ कर शुचि मन ॥ अक्षतं ॥
सुमन सुगन्धित ले, पंचधा वर्णधारी । दुख काम मिटावे, शील धर्म प्रचारी ॥ कर शुचि ॥ पुष्पं ॥
चरु करके ताजे, शुद्ध मुनि अग्र धारं । शुद्ध रोग नशाऊँ, तृप्तता गुण सम्हारूँ । कर शुचि ॥ चरुं ॥
कर दीप संजोऊँ, अन्धकारं नशाई । सम सौहार्दनिमि रस, एक क्षणमें पलाई ॥ कर शुचि ॥ दीपं ॥
बहु सुरभि धराई, धूप अग्नि जलाई । मम आठ करम सब, असम हों साधु ध्याई ॥ कर शुचि ॥ धूपं ॥
ले शुचि फल नीके, दाख बादास पिरता । लासे शिष्यफल हो, नाश संसार रसना ॥ कर शुचि ॥ फलं ॥
ले ले अठ द्रव्यं, शुद्ध अर्घं बनाऊँ । अठ कर्म नशाऊँ, अष्ट गुण सार पाऊँ ॥ कर शुचि ॥ अर्घं ॥

जयमाल ।

मुजंगप्रयात छन्द—गुणानन्दधारी उपाध्याय प्यारे, सु साधु चरित्रं धरे निर्विकारे ।
परम साम्य धारी सभी दोष टारी, रत्नत्रय सम्यगारी निजातम विचारी ॥१॥

इकादश सु अगं पढ़े तत्त्व जाने, चतुर्दश सु पूरव लखें सत् पिछाने ।

सकल श्रुत विचारें परम ज्ञान धारी, लखे आत्मको निश्चयं निर्विकारी ॥२॥
चतुर्विंश तीर्थकरोंके चरित्रं, सुवक्ती सु पलदेव जीषन पवित्रं ।

हरी प्रतिहरी वृत्तको जानते हैं, सु अनुयोग प्रथमं तु पहचानते हैं ॥३॥

त्रिलोकं लखें सर्व रचना पिछाने, गुणस्थान मार्गण करम भेद जाने ।

कारण सूत्रसे सर्व गिनती लखाने, सु अनुयोग करणं भलीभांति माने ॥४॥

यतीका सु आचार सब भेद पाया, गृही भेद चारित् इकादश बताया ।

किया—कांड व्यवहारको जानते हैं, सु चरणानुयोगं सकल मानते हैं ॥५॥

पदारथ नवम तत्व शुभ सात ज्ञानी, छहों द्रव्य पंचास्तिकाया पिछानी ।

भलीभांति आत्म परम तत्व माने, सु द्रव्यानुयोगं सकल भेद जाने ॥६॥

अनेकांत वस्तु सु स्याद्वाद ठाने, तिसे जान समता हृदय साहिं आने ।

नहीं है विरोध नहीं कोई खेदं, परम तत्व जाने लखें सर्व भेदं ॥ ७ ॥

दयासागरं पाठकं भक्ति करनी, पढ़ावै यती सीख संसार तरणी ।

नहीं खेद माने परम हर्ष ठाने, सकल ज्ञान दे आप सब साधु आने ॥ ८ ॥

नमूं पाद सुखदायक उचझायजीके, लहूं ज्ञान सुन्दर करूं कर्म फीके ।

सु छाया गुरूकी परम रक्षिका है, जजूं मन लगाई परम दक्षिका है । ९॥ महार्ध ॥

सोगठा—पाठक पूजूं पाय, पाठ पठन पठुना कवै । गुण गाऊं नित गाय, मगल हो अघ सब भंगै ॥

(१०) फिर चारित्रभक्ति पढ़के नीचेका श्लोक पढ़े ।

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुनरां जायतां दीर्घमायु-

भूयाद्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदारोग्यमग्रयम् ॥

कीर्तिव्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवताग्निःपतीपः प्रतापः ।

क्षिप्रं स्वमोक्षलक्ष्मीर्भवतुनुभृतां पाठकेन्द्रप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विषर्जन करके उपाध्याय विम्बकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

(३) साधुविम्बप्रतिष्ठाविधि—पीछी व मंडल बहित ध्यानमय बाधुकी विम्ब बनावे । इषकी प्रतिष्ठाविधि भी पहलेके समान है । विशेष यह है—

(१) मण्डलमें १७ कोठिका पहला फिर २८ कोठिका फिर ४८ कोठिका हो । (२) बाधुके विम्बको रत्नत्रयमई तीन कुम्भोंसे अभिषेक किया जावे । (३) तीन रत्न नीचेके मन्त्रोंसे प्रतिमामें स्थापित करे । ॐ हः बभ्यर्दर्शनभूषिताय बाधवे नमः । ॐ हः बभ्यर्ज्ञानभूषिताय बाधवे नमः । ॐ हः बभ्यर्चारित्रभूषिताय बाधवे नमः । (४) तिलकदानमें आह्वानन मन्त्र नीचे प्रमाण पढ़े ।

जयमाल ।

त्रोटकलन्द-जय साधु सदा गुण-वास नमो, अनगर सु सत्य सुवास नमो ।

भवसागर तारण पोत नमो, निजमें धारत निज जोत नमो ॥ १ ॥

जय सप्त तत्त्व रुचिकार नमो, आपा पर भेद विचार नमो ।

निज आत्म सु श्रद्धाकार नमो, सम्यग्दर्शन अधिकार नमो ॥ २ ॥

जय जिन आगम बुध धार नमो, ज्ञायक निश्चय व्यवहार नमो ।

निज आत्म पदारथ ज्ञान नमो, धारें नित सम्यग्ज्ञान नमो ॥ ३ ॥

जय पंच महाव्रत धार नमो, समिती गुप्तो प्रतिपाल नमो ।

निज सास्यभाष झलकाय नमो, सम्यक्चारित उर ध्याय नमो ॥ ४ ॥

जय आत्म समाधि प्रकाश नमो, सष इंद्रिय आश निराश नमो ।

चहुं दुष्ट कषाय विनाश नमो, निज शांत भाव हुल्लास नमो ॥ ५ ॥

जय साधु सु साधल आत्म बली, जय साधु सु अनुभव सार रली ।

जय साधु परम उपकारी हैं, संयम सामायिक धारी हैं ॥ ६ ॥ महार्घ ॥

दोहा—बन्दत साधु महन्तको, पूजल गुण अविकार ।

निजानन्द पावे सुधी, खुलजावे शिवद्वार ॥ इत्याशीर्वादः ॥

(१०) फिर चारित्रभक्ति पढ़के नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां, जायतां दीर्घमायु-

भूयान्दूषांश्च भोगैः स्वजनपरिजनैस्तात्सदा रोग्यमद्यम् ।

कीर्तिर्व्याप्तस्त्रिधा प्रभवतु भवतात्रिःप्रतीपः प्रतापः,

क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां सर्वसाधुप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विपर्जन करके पाधुविष्वकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

(४) श्रुतस्कंध प्रतिष्ठाविधि—द्वादशांगवाणीका एक पट घातुका बनवाया जाता है जैसा बहुषा-दक्षिणमें मिलता है व-विदांत-भवन-आरामें विद्यमान है । उसकी प्रतिष्ठाकी विधि नीचे प्रकार है—

- (१) इष्टमें भी यागमंडलकी पूजा की जाय। बीचमें ॐ बनाकर पहला वलय १७ कोठोंका बनावे फिर ११ अंग-१४ पूर्व अर्थात् २५ कोठोंका बनावे और पहलेकी भांति पूजा करे। जो विधि नाचार्यके विम्बकी प्रतिष्ठामें है वो करे।
 (२) इष्ट जिनवाणीकी मूर्तिको चार अनुयोगरूप चार कलशोंमें स्नान करावे तब कहे—

“ॐ ह्रीं शुनदेव्याः कलशस्नानं करोमि इति स्वाहा।”

(३) फिर नीचेकी स्तुति पढ़े और-मूर्तिपर पुष्प क्षेपे—

निर्मूलमोहतिमिरक्षपणैकदक्षं, न्यक्षेण सर्वजगदुज्ज्वलनैकतानम् ।
 सोषेख चिन्मयमहो जिनवाणि नूनं, प्राचीमतो जयसि देवि तदल्पसूतिम् ॥

आभवादिपि दुरासदमेव श्रायसं, सुखमननन्मन्वित्यम् ।

जयतेथ सुलभं खलु पुंसां, त्वत्प्रसादात् इहांव नमस्ते ॥

चेतश्चमत्कारकरा जनानां, महोदयाश्चाभ्युदयाः समस्ता ।

हस्ते कृताः शस्तजनैः प्रसादात्, तथैव लोकांश्च नमोरस्तु तुभ्यम् ॥
 सकलयुवतिस्छेरंबचूडामणिस्त्वं, त्वमसि गुणसुष्टेर्धर्मसुष्टेश्च मूलम् ।

त्वमसि च जिनवाणि श्वेष्टमुख्यंगमुख्या, तदिह तव पदाब्जं भूरिभक्त्या नमामः ॥

(४) फिर नीचे लिखी स्तुति पढ़े—

वारह अंगंगिजा दंसर्गातलया चरित्तत्थहरा । चोदसपुव्वाहरणा ठावे दव्वाय सुयदेवी ॥ १ ॥
 आचारशिरसं सूत्रकृतवक्त्रं सुकण्ठिकाम् । स्थानेन समवायांगव्याख्याप्रज्ञसिदोलिताम् ॥ २ ॥
 वाग्देवतां ज्ञातृकथोपासकाध्ययनस्तनीम् । अन्तकृद्दशसन्नाभिमनुत्तरदशांगतः ॥ ३ ॥
 सुनितंथां सुजघनां प्रभव्याकरणश्रुतात् । विपाकसूत्रदृग्वाचरणं चरणांबराम् ॥ ४ ॥
 सम्यक्तत्थतिलकां पूर्ववर्तुर्दशविभूषणाम् । तावत्प्रकीर्णकोदीर्णा—चारुपञ्चान्कुरश्रियम् ॥ ५ ॥
 आसहृष्टप्रवाहौघद्रव्यभाषाधिदेवताम् । परब्रह्मपथाहसां स्यादुक्तिं मुक्तिमुक्तिकाम् ॥ ६ ॥
 सर्वदर्शनपालणहृद्वैद्यस्वगाचिताम् । जगन्मातरमुद्धतुं जगदश्रावणारयेत् ॥ ७ ॥

(५) फिर नीचे लिखे मंत्रको १०८ बार पढ़कर प्रतिमाको स्पर्श करे।

ॐ अईन्मुखकमलवासिनी पापांशकारक्षयकारिणी श्रुतव्याख्यावहृत्पत्रव्यलिते परस्वति मम पाप हन क्षां क्षां क्षां क्षां क्षीर-

वपले अमृतभंभवे वं वं मं मं इ स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलवाशिनी पापाघकारक्षयकारिणी श्रुतशालावहस्रप्रवळिते सरस्वति अत्र एहि २ ववौषट् । ॐ ह्रीं अर्हन्मुख •
अत्र तिष्ठ २ ठः । ॐ ह्रीं अर्हन्मुख० मम सन्निहिता भव भव वषट् ।

(७) फिर १०८ दफे नीचे का मंत्र पढ़े—ॐ ह्रीं सरस्वतीदेव्यै नमः । तथा उष विम्बके मध्यमें ह्रीं लिखे । यह तिलकदान विधि हुई ।
(८) फिर अधिवाचना विधिमें नीचेके मन्त्रोंसे आठ द्रव्य चढ़ावे—

ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्वादिनि भगवति सरस्वति जल गृहाण २ स्वाहा । इत्यादि ।

(९) फिर नीचेका मन्त्र पढ़ वक्रसे ठके व परदा करे । ॐ ह्रीं मुखद्वय दधामि स्वाहा । (१०) फिर आचार्य नम्र हो श्रुतमक्ति पढ़े व नीचे लिखा मन्त्र १०८ दफे पढ़ मुखसे कपड़ा अलग करे । ॐ ह्रीं भगवति सरस्वति मुखवक्रं अपनयामि स्वाहा, फिर नीचे लिखा मंत्र १०८ बार पढ़कर सोनेकी बलाई उष विम्बपर फेरे यह नयनोन्मूलन क्रिया है । ॐ ह्रीं श्रुतदेवि प्रबुद्धस्य ध्यात् जन मर्नाधि पुनीहि २ स्वाहा । तब परदा हटे व जयत्रयकार शब्द हो । (११) फिर पूजा नाचे प्रकार की जावे—

स्थापना ।

गीता—श्री जिन विनिर्गत वाणी, अनुपम परम प्रकाशनी ।

मिथयात मल धोकर सु अधिजन चिस उजबल कारिणी ॥

संसार ताप प्रशान्त कारण, बन्दर कर सुखदायनी ।

आगन्ध असृन दाय वाणी, पूजहुं अघ नाशनी ॥

ॐ ही वाग्वादिनी भगवती सरस्वती अत्र अवतर २ इत्यादि ।

अष्टक ।

छन्द नाराच—महान गन्ध धार नीर लाइये सु प्रेमसों । अनादि जन्म व्याधि भेट दीजिये सु नेमसों ॥

सरस्वती महान देधि पूजिये सु भावसे । हटे कुबोध तम अपार ज्ञान होय चावसे ॥ जळ ॥

परम सुगन्ध बन्दनं मिलाय शुद्ध केशर । मिटाय ताप संसृती सुपाय शांतता वरं ॥ सरस्वती० ॥ बन्दनं ॥

लहे अखण्ड अक्षतं सफेद शुद्ध थालमें । करे प्रकाश अक्षतं गुणं निजातम हालमें ॥ सरस्वती० ॥ अक्षतं ॥

गुलाब कुंज चम्पकं सुवर्ण फूल लाइये । महा कठोर काम बाण टाल शील पाइये ॥ सरस्वती० ॥ पुष्पं ॥

बनाय शुद्ध अक्ष तुतं मिष्टता मिलायके । क्षुधा कुरोग नाश होय भावना सु भायके ॥ सरस्वती० ॥ बरं ॥

कपूरको जलाय स्वर्ण दीपदान मैं धरूं । मिटाय मोह अन्धकार ज्ञान दीप प्रज्वलूं ॥ सरस्वती० ॥ दीपं ॥
मंगाय धूप गंधकार धूपदान मैं दिया । निजाठ कम काठ जाल धूमको उड़ा दिया ॥ सरस्वती० ॥ धूपं ॥
सुगंध मिष्ट आम्र आदि फल महान धारके । महान मोक्ष लाभ काज भावको समहारके ॥ सर० ॥ फलं ॥
सुधार गंध अक्षतं सुपुष्प चारु चरु लिये सु दीप धूप फल मंगाय अर्घ शुद्ध यों किये ॥ सरस्वती० ॥ अर्घं ॥

जयमाल ।

छन्द मुक्तादाम—नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु हमेश, श्री जिनवाणी स्वत् पवारैश ।

श्री सर्वज्ञ विगत सब दोष, कहें परकाश भविक जन तोष ॥ १ ॥

तिसे धारें गणधर मुनिराज, सु पारह अन्न रचें भवि काज ।

पढ़े आचारज शिष्य समाज, रचें बहु ग्रन्थ सु आतम काज ॥ २ ॥

यही श्रुतज्ञान हरे अज्ञान, दिखावे तत्त्व स्वपर पहवान ।

लखावे वस्तु स्वरूप अपार, मिटे संशय संमोह असार ॥ ३ ॥

जुड़े स्याद्वाक परम हिनकार, विरोध मिटाय जु ऐक्य प्रचार ।

यही दर्पण सम तत्त्व प्रसार, यही समता प्रगटावन हार ॥ ४ ॥

सही जिनधर्म सु आतम रूप, यही रतनत्रय ध्यान स्वरूप ।

यही भवसागर तारण सेतु, यही सुखसागर वर्द्धन हेतु ॥ ५ ॥

इसे समझावे यह जिनवाणी, मिटावे दोष परम गुण दानी ।

सरस्वती मात नमूं मैं तोहि, करहु किरपा जो आनन्द होहि ॥ ६ ॥ मशार्थ ॥

दोहा—श्री जिन मात प्रसावसे, सुधरे हम सब कार्य । वनूं पुन पुन मातको, दीजे हमें स्वराज ॥

॥ इत्याशीवदिः ॥

फिर श्रुनभक्ति पढे और नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायु-

भूयात्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिजनेस्तात्सदारोग्यमग्रयम् ॥

क्षिप्रं स्वर्गोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां पाठकेन्द्रप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विघर्जन किया जावे ।

(१) श्री चरणपादुका प्रतिष्ठाविधि—जहार तीर्थकरोके कल्याणक होते हैं वहार चरणचिह्न स्थापित किये जाते हैं, इनकी प्रतिष्ठा विधिमें इन्द्र अगशुद्धि आदि करके पूर्ववत् १७ कोठोंकी पूजा प्रथम बलय अनुष्ठार व निलय पूजा तथा एक या तीन कुण्डमें होम करे, मण्डल बनावे या योही करे । फिर जिब तीर्थस्त्रकी चरणपादुका हो तनका पूजन किया जावे । पूजनके पहले चरण-पादुकाका अभिषेक करे । फिर नीचे लिखे मंत्रको १०८ बार जपे—ॐ ह्रीं अस्मिन् क्षेत्रे जन्मस्थानस्थापना करोमि स्वाहा या तपस्थानम् या ज्ञानस्थान या निर्वाणस्थान स्थापना करोमि स्वाहा । फिर चरणचिह्नमें ॐ हूं लिखे । यह तिलकदान विधि है । पश्चात् बिद्धभक्ति, प्रिर्विर्वाणभक्ति, आचार्य भक्ति आदि भक्ति यथायोग्य पढ़े, स्तुति पाठ पढ़े, शांति विघर्जन करे । यदि आचार्य उपाध्याय या बाधुकी पादुका हो तो उसको प्रतिष्ठा तनहीके अनुष्ठार करे, जैसा पहले कह चुके है ।

अध्याय ग्यारहवाँ ।

मंदिर या वेदीप्रतिष्ठा विधि ।

मंदिर व वेदी निर्माण होनेपर उसकी प्रतिष्ठा या शुद्धि नीचे प्रकार करनी योग्य है—शुभ मुहूर्तमें अलग मण्डप बनाकर ढाई द्वीप व २४ तीर्थकर व समवशरणका कोई पाठ किया जावे । मण्डप बना लिया जावे । यदि बहुरूप बक्षेय करना हो तो विना मण्डप बनाएं २४ तीर्थकरकी या परमेष्ठीकी पूजा की जावे । मंदिर या वेदीप्रतिष्ठानके दिन जलयात्रा की जावे तथा शुद्धिविधान करके प्रतिमा बिराजमान वी जावे । कमसेकम ८००० जप उसी मंत्रसे व उसी विधिसे जैसा बिम्बप्रतिष्ठानके सम्बंधमें पहले अध्यायमें कह चुके हैं, की जावे । जलयात्राके पहले आचार्य इन्द्रकी स्थापना करे जैसा बिम्बप्रतिष्ठानमें किया था । वह इन्द्र प्रतिष्ठाविधिमें सेवा करनेको आज्ञा करे उसी प्रमाण जैसा पहले अध्याय (नं० ९) में मण्डपप्राक्षाविधिमें कहा गया है ।

चतुर्णिकायामरसंघ एष, आगत्य यज्ञे विधिना नियोगं ।

स्वीकृत्य भक्त्या हि यथाहदेशे, सुस्था भवंत्वाह्निककल्पनायां ॥ ३२२ ॥

आयात मारुतसुराः पवनोद्गताशाः, संघहसंलसितनिर्मलनांतरीक्षाः ।

वात्प्रादिदोषपरिभूतवसुन्धरायां, प्रत्यृहकर्मनिखिल परिमार्जयन्तु ॥ ३२३ ॥

आयात वास्तुविधिषूद्रसंनिवेशा, योग्यांशभागपरिपुष्टवपुः प्रदेशाः ।
अस्मिन् मन्त्रे रुचिरसुस्थितभूषणांके, सुस्था यथार्हविधिना जिनभक्तिभाजः ॥ ३२४ ॥
आयात निर्मलनभः कृतसंनिवेशा, मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।
अस्मिन्मन्त्रे कृतविक्रयया नितान्ते, सुस्था भवन्तु जिनभक्तिमुदाहरन्तु ॥ ३२५ ॥
आयात पावकसुराः सुरराजपूज्य, संस्थापनाविधिषु संस्कृतविक्रियाहोः ।
स्थाने यथोचितकृते परिवद्धकक्षाः, मन्तु श्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥ ३२६ ॥
नागाः समाविशतभूतलसन्निवेशाः, स्वां भक्तिमुल्लसिगात्रगया प्रकाश्य ।
आशीविषादिकृतविघ्नविनाशहेतोः, स्वस्था भवन्तु निजयोग्यमहासनेषु ॥ ३२७ ॥

पुरुकृतदिशिस्थितिमेहि करोद्ध्युनकांचनदंडगखण्डरुचे ।

विधिना कुमुदेश्वरसठ्यशये धुनर्पंकजशंकितकरुणके ॥ ३२८ ॥

वामनाशुभदिग्निभागतः स्थानमेहि जिनयज्ञकर्मणि ।

भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रहः पूनशासनकुनामबंध्यकः ॥ ३२९ ॥

पश्चिमासु चिततासु हरितसु सूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः ।

अंजनस्यहितकाम्ययाऽध्वरे तिष्ठ विद्यतविलयं प्रणिण्वेहि ॥ ३३० ॥

पृष्ठपदन्तभवनासुरमध्ये लत्कृतोऽसि यत् इत्थमथोचम् ।

उत्तान्न मणिदण्डकराग्रस्तिष्ठ विद्यनविनिवृत्तिच्छिन्ने ॥ ३३१ ॥

करकृतकुसुमानामंजलिं सवितीर्थं घनदमणिसुररत्नानीशपूजार्थसार्थे ।

विकिर विकिर शीघ्रं भक्तिमुद्भावयित्वा निगदतु परमांके मंडपोधर्षाबकाशे ॥ ३३२ ॥

जळयात्रामें गाजेबाजेके साथ इन्द्र य जाचायें किंबी नदी या सरोवर या कुंपर जळ भाने जावे । बायमें कळश १०८ या ५४ या २७ या २१ या ९ या ५ जितने भंभव हों उतने, जो नारियलसे ढके हो, ऊपर केपरसे रंगा लुवा हो, कळशोंके कंठमें फळमाळाएं सुशोभित हों, उनको शुद्ध केशरिया वल्ल पहने हुए कुलीन स्त्रियां मस्तकपर रखके लेजावें, वामप्री बाप जावे । मार्गमें इन्द्र जब चले उष षमयसे लेकर पहुंचने तक मार्गमें जाते आते नीचे लिखे मंत्रसे मंत्रितकर जो और वर्षों बखेरता जाय जिनमें कोई विघ्न न हो व शांति रहे ।

मंत्र-ॐ हूं क्षू फट् किरिटि घातय २ परविघ्नान्स्फोटय २ बहसखंडान्कुरु २ परमुद्रा छिदर २ परमंत्रान् भिदर २ क्षः क्षः हूं फट्स्वाहा । जलस्थान पर जाकर किसी ऐसे तीर्थकी पूजा करे जो नदी व शरोवर तटपर हो । जैसे बिद्वरकूट, पात्रापुरी, अथवा निर्वाणक्षेत्र पूजा या सिद्धपूजा करे फिर छानकर कलशोंसे जल भरे । लवंग चूरा या चन्दन मिखावे । वे ही स्त्रिया मफतकपर रखे हुए मंडपमें लवि, यदि कहीं स्त्रिया न जासकें तो इन्द्र ही अधिक बने और वे ही कलश लवें, उनको विराजमान किया जावे । फिर इसी जलसे मंदिर या वेदीको धोकर शुद्ध किया जावे तब यह मंत्र पढा जावे । ॐ नीरजसे नमः । फिर जिघ्र वेदीमें श्रीजीको विराजमान करना हो उसीके आगे एक लघु पीठपर जिघ्र मूर्तिको वेदीपर विराजमान करना हो लकड़ा स्थापित करे । उसीके आगे १७ कोठोंका बलययुत याग मंडल बनाया जावे । यदि न बने तो भी पूजा हो सकती है । आगे एक चौखुटा कुण्ड या तीनो होमकुण्ड बनाए जायें । प्रतिमाजीको लानेके पङ्कले जहाँपर खड़े हो पूजन करे वहा डामका ब्राह्मन दर्पमथनाय नमः पढ़कर लिखावे, “ सीलगंधाय नमः ” यह मंत्र पढ़कर प्राशुक-जलसे छंटे । विमलाय नमः यह मंत्र पढ़कर पुष्प चढ़ावे, “ अक्षताय नमः ” यह पढ़कर अक्षत चढ़ावे, “ श्रुतधूपाय नमः ” यह पढ़कर धूप देवे, “ ज्ञानोद्याताय नमः ” यह पढ़कर दीप चढ़ावे, “ परमसिद्धाय नमः ” यह पढ़कर नैवेद्य चढ़ावे, प्रतिमाको विराजमान करे, अभिषेक उसी जलसे करे जो लाया गया है । अभिषेककी विधि पहले कही जा चुकी है । जो विधि अभिषेककी व होमकी दूसरे अध्यायमें यागमण्डलकी पूजामें कही है उसी तरह करे । नित्यनियम व सिद्धपूजा करके षष्ठजाताय नमः आदि पीठिकामन्त्रोंसे हाम करे । पश्चात् १०८ आहुति उसी मंत्रसे देवे जो दूसरे अध्यायमें लिखी है । फिर स्तुति आदि पढ़े ।

ध्वजा व कलश भी चढ़ाना होता है वे भी इसी समय प्रतिमाजीके पाष स्थापित रहे । वेदीके ऊपर व मंदिरके शिखाके ऊपर कलश व ध्वजा चढती है । पूजाके समय विनायक यंत्रको भी स्थापित करे । यदि न हो तैयार करा ले या थालपर खींचले । मध्यमें ॐ लिखके पांच कोठेका बलय करना, उसमें अ सि आ ल वा लिखे । फिर १२ कोठेका बलय करके अरहन्त मंगल आदि लिखना । उसको ही क्रों से वैष्टित करे । फिर इन्द्र सिद्धभक्ति पढ़े । फिर कायोर्ध्वर्ग कर ९ दफे मंत्र पढ़े । फिर पढ़े—

ॐ जय जय जय, निरसही, निरसही, निरसही, बर्धस्व, बर्धस्व, बर्धस्व, स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति, गमोलोए बद्धतां, जिनशासनं । गमो अरहंताणं, गमो सिद्धाणं, गमो आहरीयाणं, गमो उषज्झायाणं, गमो लोगुत्तमा, अरहंत मंगलं, अरहंतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहुमंगलं, केवलपणत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलपणत्तो धम्मो लोगुत्तमा चत्तारि सरणं पवब्जामि, अरहन्तसरणं पवब्जामि, सिद्धसरणं पवब्जामि, साहुसरणं पवब्जामि, केवलपणत्तो धम्मो सरणं पवब्जामि ।

फिर आचार्यभक्ति तथा श्रुतभक्ति पढ़े और कहें—

ॐ अद्य वेदीमण्डपप्रतिष्ठायां, तत्शुद्धयर्थं भावशुद्धयर्थं भावशुद्धयर्थं आचार्यभक्तिपूर्व कायोत्सर्गं करोम्यहं ।

फिर यत्रकी पूजा करे ।

अथ यंत्रपूजा

परमेष्ठिन ! मंगलादित्रय चिह्नविनाशने । समागच्छ तिष्ठ तिमम सन्निहितो भव ॥ २६३ ॥

ॐ अहंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपरमेष्ठिन ! मंगल लोकोत्तम ॥ शरणभूत ॥ अत्रावतर अबतर संबौषट् (आह्वाननं), अत्र तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं), अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (सन्निधिकरणं)

स्वच्छैर्जलैस्तीर्थमवैर्जरापमृत्युग्रोगापनुदे पुरस्तात् ।

अहंन्मुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥२६४॥

ॐ ह्रीं अद्य विष्वप्रतिष्ठोरपथे वेदिकाशुद्धिविधाने अहंदिपद्माचार्योपाध्यायसर्वसाधुमंगललोकोत्तमशरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

संबंदनैर्गंधहृताल्लिष्ट्वन्वचितैर्हिंसांशुपसरावदातैः ।

अहंन्मुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥चंदनं॥

सदक्षतैर्मौक्तिककांतिपाटच्चरैः सितैर्मौनसनेत्रमित्रैः ।

अहंन्मुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥अक्षतं॥

पुष्पैरनेकैरक्षवर्णगन्धप्रभासुरैर्धोसितदिग्बितानैः ।

अहंन्मुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ पुष्पं ॥

नैवेद्यपिंडैर्घृतशर्कराक्तहविष्यभागैः सुरसाभिरासैः ।

अहंन्मुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ नैवेद्यं ॥

आरातिकैरत्नसुवर्णैस्वमपात्रांपितैस्त्रीभक्तिकाशहेतौः ।

अहंन्मुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ दीपं ॥

आशासु यद्भूमवितानमृद्धं तैर्धूपधृन्दैर्दहनोपसप्तैः ।

अहंन्मुखान् पञ्चपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ धूपं ॥

फलैरसालैर्वरदाडिमार्थैर्दूघ्राणहार्यैर्मलैरुदारैः ।

अहंन्मुखान् पंचपदान् शरणयान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ फलं ॥ २७१ ॥

द्रव्याणि सर्वाणि विधाय पात्रे, ह्यनर्घसर्घवितरामि अकत्या ।

भवे भवे भक्तिरुदारभावाद्येषां सुखायास्तु निरन्तराया ॥ अर्घं ॥ २७२ ॥
अनादिसन्तानभवान् जिनेन्द्रानर्हत्पदेष्टानुपदिष्टधर्मान् ।

द्वेषा श्रिया लिंगितपादपद्मान्, यजामि वेदीप्रकृतिप्रसन्नै ॥ २७३ ॥
ॐ ह्रीं उद्दिनानंतज्ञानगमस्तिषट्छलोकोलोकानुभावान् मोक्षमार्गप्रकाशनान्तचिद्रूपविलाषान् अर्हत्परमेष्ठिनः संपूजयामि स्वाहा अर्घं ।
कर्माष्टनाशाच्च्युतभावकर्मोद्भूतीन् निजात्मस्वविलासभूपान् ।

सिद्धाननंतंशंखिककालमध्ये, गीतान् यजामीष्टविधिप्रशक्त्यै ॥ २७४ ॥
ॐ ह्रीं द्विविषकर्मताडवापनोदविलम्बस्वाकारचिद्रविलाध्वृत्तीन् निजाष्टगुणगणोद्घूर्णान् प्रगुणीभूतानंतमाहात्म्यान् लोकप्रशिखराव-
स्थायिनः सिद्धपरमेष्ठिनोऽर्चयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥

ये पंचधाचारपरायणानामग्रेसरा दीक्षणाशिक्षिकासु ।

प्रमाणनिर्णीतपदार्थस्वार्थानाचार्यवर्यान् परिपूजयामि ॥ २७५ ॥

ॐ ह्रीं व्यवहाराघाराचारवत्त्वाद्यनेकगुणमणिभूषितोरस्कात् संघप्रतिषर्षवाहनाचार्यवर्यान् परिपूजयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥
अर्थश्रुतं सत्यविवोधनेन, द्रव्यश्रुतं ग्रन्थविदर्भनेन ।

येऽध्यापयन्ति प्रवरानुभावास्तेऽध्यापका मेऽर्हणथा दुहन्तु ॥ २७६ ॥
ॐ ह्रीं द्वादशांगश्रुताबुधिपरंगतान् परिप्राप्तपदार्थस्वरूपान् तपाध्यायपरमेष्ठिनः पूजयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥

द्विधा तपोभावनया प्रवीणान्, स्वकर्मभूमिभ्रविखण्डनेषु ।

विविक्तशय्यासनहर्म्यपीठस्थितान् तपस्विप्रवरान् यजामि ॥ २७७ ॥
ॐ ह्रीं घोरतपश्चरणोद्युक्तप्रयासभगमानान् स्वकारुण्यपुण्यपुण्यागप्यपरत्नालकृतपादान् पाधुरमेष्ठिनः पूजयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥
अर्हन्मङ्गलमर्चे सुरनरविद्याधरैकपूज्यपदे । तोयप्रभृतिभिरर्थैर्विनीतसूधर्नां शिवाप्तये नित्यं ॥ २७८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय अर्घम् ।

ध्रौव्योत्पादविनाशरूपाखिलवस्तुजाननार्थकरं । सिद्धंमंगलमितिवा मत्वाच्चं चाष्टविधवस्तुभिः ॥ २७९ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धमंगलायार्घं ।

यदर्शनकृतविभवाद् रोगोपद्रवगणा मृगा इव मृगेंद्रात् । दूरं भजन्ति देशं साधुश्रेयोऽर्चयन्ते विधिना ॥ २८० ॥
ॐ ह्रीं साधुमंगलायार्घं ।

केवलिसुखाद्यगतया वाणया निर्दिष्टभेदधर्मगुणं । सूत्रा भवसिधुतरीं प्रयजे तन्मंगलं शुद्धय ॥ २८१ ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसिधुमङ्गलायार्घ्यं ।

लोकोत्तममय जिनराड् पदाब्जसेवनमितदोषविलयाय । शक्तं मत्वा धृतये जलगंधैरीडितुं प्रभवे ॥

ॐ ह्रीं अरहंतलोकोत्तमायार्घ्यं ।

सिद्धाश्च्युत दोषमला लोकाग्र्यं प्राप्य शिवसुखं व्रजिताः । उत्तमपथगा लोके तानर्धं वसुविधार्चनया ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्घ्यं ।

इंद्रनरेंद्रसुरेंद्ररैथिततपसां व्रतैषिणां सुधिषां । उत्तमपंथानमस विचेऽहं सलिलगंधसुखैः ॥२८४॥

ॐ ह्रीं वायुलोकोत्तमेभ्यः अर्घ्यं ।

रागपिशाचविमर्दनमत्र भवे धर्मधारिणामममलुम् । उत्तममवातिकामो वृषमर्धे शुचितरं कुसुमैः ॥२८५॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसिधुमार्ग्यं लोकोत्तमायार्घ्यं ।

अर्हत्वरणमथार्चेऽनंतजनुष्यपि न जातु संप्राप्त । नर्तनगानादिविधिसुद्दिश्याष्टकर्मणां शांत्यै ॥२८६॥

ॐ ह्रीं अरहंतशरणायार्घ्यं ।

निर्न्याबाधशुणादिक प्राग्र्यं शरणं समेतचिदन्तं । सिद्धानाममृतानां भूत्यै पूजेयमशुभहान्यर्थम् ॥२८७॥

ॐ ह्रीं सिद्धशरणायार्घ्यं ।

षिदचिद्भेदं शरणं लौकिकमाप्यं प्रयोजनातीतं । त्पक्त्वा साधुजनानां शरणं भूत्यै यजामि परमार्थम् ॥

ॐ ह्रीं वायुशरणायार्घ्यं ।

केवलिनाथसुखोद्गतधर्मः प्राणिसुखहितार्थसुद्दिष्टः । तत्प्राप्त्यै तद्यजनं कुर्वे मखविघ्ननाशाय ॥ २८९ ॥

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञसधर्मशरणायार्घ्यं ।

औषधीरसपलद्धिं तपःस्या क्षेत्रबुद्धिकलिताः क्रिययाढ्याः ।

विक्रयधिमहिताः प्रणिधानप्राप्तसंस्तितटा मुनिपूज्याः ॥ २९० ॥

केवलावधिमनः प्रसरांगाः बीजकोष्ठमतिभाजनशुद्धाः ।

वीतरागमदमत्सरभावा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९१ ॥

यदुत्रचोऽमृतमहानंदमग्नौ जन्मदाहपरितापमपास्य ।

निर्धनुः सुखसमाजगतेषु बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९२ ॥

श्रीश्रमिन्नमतयः पदपंथाः हृष्टसंस्तुतपदार्थविभावाः ।

तत्तत्रसंकलितधर्म्यसुशुक्लाः बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९३ ॥

स्पर्शनश्रवणलोकनबुद्धाः घ्राणस्थरसनोपक्रमा ये ।

दूरतोऽप्यनुभवं समासा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९४ ॥

छिन्नस्वर्णविधिना चतुर्दश दिग्सुधूर्ध्वमतिना निमित्तगाः ।

वादिबुद्धकृतिनो मतिश्रद्धाः बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९५ ॥

अष्टधौक्तदशवाग्बिदया ये बुद्धिबृद्धिसहिताः शिष्यतनाः ।

षिणमलादिगदहापनदेशा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९६ ॥

हृष्टिवक्त्रमनसां त्रिषमक्ति प्रीणिनाः श्रुतस्मरित्पतिपुष्टाः ।

लोकमंगलिषु सन्यसिता ये बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९७ ॥

वाक्यमानसबलेन समग्राः उग्रदीप्तपत्रसस्त्रिकगुप्ताः ।

घोरवीर्यगुणभावितचित्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९८ ॥

दुग्धमध्वसृतभोजनकृत्याः ऋषिषाश्रववचोऽभिनियुक्ताः ।

अणवलाघवशित्वविदर्भा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९९ ॥

कामरूपगुरुताप्रतिसर्पातर्द्धेहीनवसतिगृहयुक्ताः ।

चारणा जलफलाशिसूत्रा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ ३०० ॥

आत्मशक्तिविभवागतसर्वपौद्गलीय समताश्च्युतबन्धाः ।

सत्परीषहमटार्दनदास्ते बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ ३०१ ॥

ॐ ह्रीं अष्टप्रकारभक्तलक्ष्मिप्रतिभ्यो मुनिभ्योऽर्घम् ।

योसितुष्टुषभसेनपुरस्सरा ये, सिंहादिसेनपुरतोऽजिततीर्थभर्तुः ।

श्रीसम्भवस्य किल चारुविसेनमुख्यास्तुर्यस्य ब्रह्मरमुख्यगणाधिराजाः ॥ ३०२ ॥

कोकध्वजस्य चमराधिपपूर्वगाः स्युः, पद्मप्रभस्य कुलिशाविपुरःस्थिताश्च ।

श्रीसप्तमस्य बलमुख्यकृताः पुराणे, चन्द्रप्रभस्य शमिनः खलु दत्तमुख्याः ॥ ३०३ ॥

मकरांकितो गणभृत्तश्च विदमसुहृदाः, श्रीसीतलस्य गणया अनगारगणयाः ।
 श्रेयो जिनस्य निकटे ध्वनि कुन्धपूर्वा, धर्मोदयो गणधरा वसुपूज्यसूनोः ॥ ३०४ ॥
 मेर्वादयश्च विमलेशितुरुद्धबुद्धया, जय्यार्थनामभरणाश्चतुर्दशस्य ।
 धर्मस्य भांति शमिनः सदरिष्टमूलाश्चक्रायुधप्रभृतयः खलु शांतिभर्तुः ॥ ३०५ ॥
 कुन्धुप्रभोर्यमभृतः कथिताः स्वयंभूर्वर्याः पुनन्त्वरविभोः स्मृतकुम्भमसान्याः ।
 मल्लेर्विशाखमुनयो मुनिसुव्रतस्य, मल्लिप्रवेकगणता नमिभर्तुरिष्टाः ॥ ३०६ ॥
 सप्तद्विपूजितपदा सुप्रभाससुहृदा, नेमिश्वरस्य बरदत्तसुखा गणेशाः ।
 यार्ध्वप्रभो स्वयमितः सुभवोतनाज्ञा, धीरस्य गौतमसुनीन्द्रसुखाः पुनन्तु ॥ ३०७ ॥
 एभ्योऽर्घ्यपाद्यमिह यज्ञधरावनाथं, दत्तं मया विलसतां शुचिवेदिकायां ।
 पुष्पांजलिप्रकारतुदिलमाज्यपात्र, सुत्तारयामि मुनिमान्यचरित्रभवस्या ॥ ३०८ ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थकरणधरेभ्यस्त्रिपञ्चाशत्बद्धित चतुर्दशशतसंख्येभ्यश्चरुपात्रमप्रे कृत्वाऽर्घ्यमुत्तारयामि स्वाहा ।

इन्द्रभूतिरशिमूर्ति, वीर्यभूतिः सुधर्मकः । सौर्यमौड्यौ पुत्रमिश्रावकम्पनसुनामधृक् ॥ ३०९ ॥
 ॐ ह्रीं गौतमादि एकादशमुनिभ्योऽर्घ्यं ।

अन्धवेलः प्रभासश्च, रुद्रसंख्यानं सुनीन् यजे । गौतमं च सुधर्मं च, जम्बूश्यामिनसूर्ध्वगम् ॥ ३१० ॥
 ॐ ह्रीं अर्यकेवलित्रयायार्घ्यं ।

श्रुतकेवलिनोऽन्यांश्च, विष्णुनन्द्यपरराजितान् । गोवर्धनं भद्रयाहुं, दशपूर्वधरं यजे ॥ ३११ ॥
 ॐ ह्रीं श्रुतकेवलिनोऽर्घ्यं ।

विशाखप्रोष्ठिलनक्षत्र, जयनागपुरस्सरान् । सिद्धार्थधृतिषेणाहौ, विजय बुद्धिबलं तथा ॥ ३१२ ॥
 गंगदेवं धर्मसेनमेकादश तु सुश्रुतान् । नक्षत्रं जयपालाख्यं, पांडुं च ध्रुवसेनकम् ॥ ३१३ ॥
 ॐ ह्रीं कतिचिरगवाग्निभ्योऽर्घ्यं ।

कंसाचार्यं पुरोगीयजातारं पथजेन्धरं । सुभद्रं च यशोभद्रं, अद्रवाहुं सुनीश्वरम् ॥ ३१४ ॥
 लोहाचार्यं पुरा पूर्वज्ञानचक्रधरं नमः । अर्हद्वलिं भूतबलिं, माघनन्दिनसुतमम् ॥ ३१५ ॥
 धरसेनं सुनोद्रे च, पुष्पदन्तसमाद्भवयं । जिनचन्द्रं कुन्दकुन्दसुमास्थाभिनसर्थये ॥ ३१६ ॥

ॐ ह्रीं ऐंद्र्युगीनदीक्षाधराणधुरंधरनिर्घाचार्यवर्यान् वेदीप्रतिष्ठाने संस्थाप्याष्टविधार्चनं करोमि स्वाहा ।
निर्घ्रायान् बहुशान् पुलककुशलान्, किंशालनिर्घ्रायान् ।

सूत्रश्वोत्तरमद्गुणावधृतसाः, किंचित्प्रकारं गतान् ॥
चन्द्रित्वा जिनकल्पसूत्रितपदान्, प्रध्वसनपापोद्धयान् ।

वेदीशुद्धिविधिं ददन्तु सुनयो, ह्यर्घेण संपूजिताः ॥ ३१७ ॥

ॐ ह्रीं पुलाकवकुशकुशीलनिर्घ्रायानातकपदधरात्रिकयूनेनककोटिसंख्यमुनिवरेभ्योऽर्घं ।

फिर ९ दफे गमोकार मन्त्र पढ़कर कलश व ध्वजाके ऊपर पुष्प डालना । फिर १०८ दफे गमोकार मन्त्र जपकर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ वेदी तथा मंदिरके शिखरपर कलश व ध्वजा चढ़ावे ।

ॐ गमो अरहंताण स्वस्ति मद्रं भवतु सर्वलोकाय शातिर्भवतु स्वाहा ।

मंदिरके ऊपरकी ध्वजा—१२ अंगुल लम्बी व ८ अंगुल चौड़ी हो, कपड़ा काल व पीला हो । उसमें चन्द्रमा, माला, नक्षत्र, आदिका चिह्न हो । तथा कलश, चातिया, दीपदण्ड, छत्र, चमर, घर्मचक्र लिखकर ध्वजाके ऊपर जिनविम्ब हो । ऊपर छत्र हो । ध्वजामें अशोक आदि वृक्षका चिह्न भी हो । जो ध्वजा मंदिरकी शिखरपर चढ़ाई जावे उसका दंड मंदिरकी ऊँचाईसे चौपाई हो तो ठीक हो अथवा शोभाके अनुषार हो । ध्वजा चढ़ाते समय बाने व जयजयकार शब्द हो । फिर वेदीपर मातृकायन्त्रको केशरसे लिखे । यह मन्त्र छठे अध्यायमें नं० (२) में दिया हुआ है तथा मन्त्र भी वहीं लिखा है उसको १०८ बार जपे । वेदी उस समय चमर छत्रादिसे सुशोभित की जावे, बाने बजते रहे । तथा जयजयकार शब्दके बीचमें प्रतिमाजोको वेदीपर बिराजमान करे । वेदीकी भीतपर केशरके बाथिये पहलेसे किये जावे । यदि मातृकायन्त्र नहीं लिख सके तो श्री लिखले व १०८ दफे गमोकार मन्त्र जपले । फिर मूलनायक तीर्थकारकी पूजा बड़ी भक्तिसे की जावे । पूजाके पीछे आचार्य यह प्रबन्ध करा दे कि मन्दिर या वेदीका जीर्णोद्धार किन्न तरह होगा व नित्य पूजापाठमें अन्तर न पड़े । मुख्य प्रतिष्ठा करानेवालेको पूजा आदिका यथासंभव नियम दिवावे तथा चार दान करनेके लिए कहे व अन्य भाइयोंको भी दानके लिए कहे । इस समय भजनादि हों व याचकोंको दान दिया जावे । गरीबोंको भोजन कराया जावे तथा यदि सामर्थ्य हो तो संघका भोजनकार किया जावे ।

(२) किन्नी भी नए कार्यमें जैसे गृह प्रवेश या विवाहादि-उपमें यथायोग्य विधिके साथ यन्त्र या प्रतिमाका अभिषेक करके षय्यजाताय नमः आदिसे होम करके वही १७ बलयवाली पूजा जो वेदीप्रतिष्ठामें लिखी है की जावे । यह मंगलीक पूजा है, हर मंगल कार्यमें करने योग्य है ।

(३) जब कोई नया ग्रन्थ तैयार हो व लिखा जावे तो उसकी विशेष पूजा जेठ सुदी ५ या श्रुतपंचमीके दिन कीजावे। श्रुतभक्ति पढ़कर श्रुतपूजा हो । फिर शास्त्र पढ़कर सुनाया जावे ।

अध्याय बारहवाँ । भक्तियां आदि ।

अथ सिद्धभक्तिः ।

अंसरीरा जीवघना उबजुता, दंसणेय णाणेय । साधारमणायारा, लखखणमेधंतु सिद्धाणं ॥ १ ॥
मूलोत्तरपयडीणं बन्धोदयसत्तकम्मउम्मुक्का । मंगलभूदा सिद्धा, अट्टगुणा तीदसंसारा ॥ २ ॥
अट्टवियकर्मविघडा सीदीभूता गिरंजणा णिच्चा । अट्टगुणा क्विक्किच्चा, लोयगणिवासिणो सिद्धा ॥ ३ ॥
सिद्धा णट्टमला विसुद्धबुद्धो य लद्धिसब्भावा । तिहुअणसिरिसेहरया, पसियन्तु मडारया सव्वे ॥ ४ ॥
गमणागमणविमुक्के, विहडियकम्मपयडिसंधारा । सामहसुहसंपत्ते ते, सिद्धा बंदियो णिच्चं ॥ ५ ॥
जयमगलभूदाणं विमलाणं, णाणदसणमयाणं । तहलोइसेहराणं, णमो सदा सव्वसिद्धाणं ॥ ६ ॥
सम्मत्तणाणदंसणवीरियसुहुमं, तहेव अघगहणं । अगुरुलघु अब्बावाहं, अट्टगुणा होंति सिद्धाणं ॥ ७ ॥
तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे, चरित्तसिद्धे य । णाणम्मिदं दंसणम्मिदं य सिद्धे, सिरसा णमस्सामि ॥ ८ ॥

इच्छामि भंते सिद्धभक्ति काओसणो फओ तस्सालोचेओ, सम्मणाणसमंदंसणसमचरित्तजुताणं,
अट्टविहकम्ममुक्काणं अट्टगुणसम्पणाणं, उड्डल्लोयमच्छम्मिदं, पयड्ढियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं, सज्जम-
सिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं, सम्मणाणसमंदंसणसमचरित्तसिद्धाणं, तीदाणागदवहमाणकालत्तयसिद्धाणं
सव्वसिद्धाणं यन्दामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगहमणं समाह्मिणं जिण
गुणसम्पत्तिहोउमज्झं ।

इति पूर्वानार्यानुक्रमेण भावपूजास्तवसमेतं कायोत्सर्गं करोमि ।

अथ श्रुतभक्तिः ।

अहंदुक्खप्रसूतं गणधरचित्तं, द्वादशांगं विशालं, चित्र बहर्थयुक्तं सुनिगणवृषभैर्धोरितं बुद्धिमद्भिः ।
मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतवरणफलं, ज्ञेयभावपदीपं, भक्त्या नित्यं प्रवन्दे, श्रुतमहमखिलं सर्वलोकिकसारम् ॥१॥
जिनेन्द्रवक्त्रप्रविनिर्गतं वचो, यतीन्द्रभूतिप्रमुखैर्गणाधिपैः ।

श्रुतं घृतं तथै पुनः प्रकाशितं, द्विषट्प्रकारं प्रणमाम्यहं श्रुतं ॥ २ ॥

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षणयशोतिरुधधिकानि चैव ।

पंचाशदष्टौ च, सहस्रसंख्यमेतच्छ्रुतं पंच पदं नमामि ॥ ३ ॥

अंगवाहाश्रुतोद्भूतान्यक्षराण्यक्षराद्भ्ये । पंचसंश्लेषश्रौ च दक्षाशोतिं समर्चये ॥ ४ ॥

अरहतभासियत्थं गणहरदेधेहिं गंधियं सम्मं । पणमामि अत्तिजुत्तो सुद्वणाणमहोवहिं सिरसा ॥ ५ ॥

इच्छामि भन्ते सुद भन्ति काओसगो फओ तस्सालोचेओ अंगोबंगपण्णयपाहुडपरियम्मसुत्तपह-
मासिओय पुव्वगयचूलिया चैव सुत्तत्थयथुहम्मकहाइयं सुद णिच्चकालं अंचेनि पूजेमि वन्दामि णमस्सामि
दुक्खवओ कम्मखओ बोहिलाओ सुगइगमणं सम्मं समाहिअरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ चारित्रभक्तिः ।

ससारव्यसनाहतिप्रचलिता, नित्योदयप्रार्थिनः । प्रत्यासन्नविमुक्तयः सुमतयः शांतनैसः प्राणिनः ।

मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानसुचैस्तरा-मारोहंतु चरित्रसुत्तममिदं, जनेन्द्रमोजस्विनः ॥ १ ॥

तिलोए भव्वजीवाणं हियं, धम्मोवदेसणं । वड्डमाणं महाबीर, वन्दित्ता भव्ववेदिनं ॥ २ ॥

वाइकम्मविघातत्थं, वाइकम्मविणामिणा । भासियं भव्वजीवाणं, चारित्तं पंचभेददो ॥ ३ ॥

सामायिय तु चारित्तं, छेदोवड्डावणं तथा । तं परिहारविसुद्धिं च, संयमं सुहमं पुणो ॥ ४ ॥

जहाखायं तु चारित्तं तथाखायं तु तं पुणे । किच्चाहं पंचहाचारं, मङ्गलं मलसोहणं ॥ ५ ॥

अहिंसादीणि वुत्तानि, महव्वयाणि पञ्च य । समिदीओ तदो पञ्च, पञ्चेन्द्रियणिगहो ॥ ६ ॥

छब्भेयावासभूसिज्जा, अण्हाणत्तमचेलदा । लोयत्तं ठिदिसुत्तिं च, अदन्तवणमेव च ॥ ७ ॥

एयभत्तेण संजुत्ता, रिसिसूलगुणा तहो । दसधम्ममा तिगुत्तीओ, सीलाणि सयलाणि य ॥ ८ ॥

सब्बे वि य परीसहा, वुत्तत्तरगुणा तथा । अण्णे वि भासिया सन्ता, तेसिंहाणीमयेकया ॥ ९ ॥

जइ रागेण दोसेण, मोहेण णदरेण वा । वन्दित्ता भव्वसिद्धाणं, सजुहा सामुसुक्खुण ॥ १० ॥ (१)

संजदेण भए सम्मं, भव्वसंजमभाविणा । भव्वसंजमसिद्धीओ, लब्भदे सुत्तिजं सुहं ॥ ११ ॥

धम्मो मंगलसुक्किह अहिंसासंजमो तओ । देवा वि तस्स पणमंति, जस्स धम्मो सया मणो ॥ १२ ॥

इच्छामि भन्ते चारित्तमत्ति काओसगो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिद्वियस्य

सर्वपहाणस णिव्वाणमगस संजमस कम्मणिज्जरफलस खमाहरस पञ्चमव्वयसंपणस त्तिगुत्ति-
गुत्तस पञ्चसमिदिजूत्तस गाणञ्जाणसाहणस समयापवेसयस सरमचरित्तस सदाणिच्चकालं अंचेमि
पूजेमि बन्दामि णमंसामि दुक्खलओ कम्मलओ बोहिलाओ सुगहमणं समाहिसरणं जिणगुण सम्पत्ति
होउ मज्झं ।

अथ आचार्यभक्तिः ।

देसकुलजासुद्धा विसुद्धमणवयणकायसंजुत्ता । तुम्हं पायपयोक्कहमिह मङ्गलत्थि मे णिव्वम् ॥ १ ॥
सगपरसमयविदूएहु आगमहेदूहिं चावि जाणित्ता । सुसमच्छा जिणवयणे विणएसुत्ताणुरुवेण ॥ २ ॥
बालगुरुड्ढसेहे गिलाणथेरेयलमणसंजुत्ता । अट्टावयगअण्णे दुस्सीले चावि जाणित्ता ॥ ३ ॥
वयसमिदिगुत्तिजुत्ता सुत्तिभे ठावया पुणो अण्णे । अञ्जावयगुणालया साहुगुणेणावि संजुत्ता ॥ ४ ॥
उत्तमलमासुहवा पसणभावेण अच्छलसरिसा । कम्मिमधणदहणादो अगणो वाऊ असगादो ॥ ५ ॥
गयणमिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायस्व सुनिवसहा । एसिगुणालयाणं पाय पणमामि सुद्धमणो ॥ ६ ॥
संसारकाणणे पुण वमभमसाणेहिं भव्वजीवेहिं । णिव्वाणसस दु मगो लद्धो तुम्हं पसाएण ॥ ७ ॥
अविसुद्धलेसरहिंया विसुद्धलेसेहिं परिणदा सुद्धा । रुद्धेहे पुणवत्ता धम्ममे सुक्के य संजुत्ता ॥ ८ ॥
ओगगर्हहावाधाधारणगुणसम्पएहिं संजुत्ता । सुत्तयभाषणाए भावियमाणेहिं वन्दामि ॥ ९ ॥
तुम्हे गुणगणसंशुदि अयाणमाणेण जं मए वुत्ता । दितु मम बोहिलाह गुरुभत्तिजुदत्थओ णिव्वं ॥ १० ॥

इच्छामि भन्ते आयरियभत्ति काओसगो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्त-
जुत्ताणं पंचविहाराणं आयरियाणं आयारादिसुद्धाणोवदेसयाणं उवञ्जायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं
सर्वसाहूणं णिव्वकालं अंचेमि पूजेमि बन्दामि णमसामि दुक्खलओ कम्मलओ बोहिलाओ सुगहमणं
समाहिसरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ योगभक्तिः ।

थोसामि गणवराणं अणयाराणं गुणेहिं तच्चेहिं । अंजुलिमउलियहत्थो अहिवन्दन्तो सविभवेण ॥ १ ॥
सम्मं चैव य भावे मिच्छाभावे तहे व बोद्धव्वा । चहऊण मिच्छभावे सम्मामि उवट्ठिदे वन्दे ॥ २ ॥
दोदोसविप्पसुक्के तिवण्डविरदे तिसल्लपरिसुद्धे । तिणियगारवरहिंए तियरणसुद्धे णमसामि ॥ ३ ॥

चउविहकसायमहणे चउगइसंसारगमणअयभीए । पञ्चासवपडिविरे पंचेन्द्रियणिज्जदे वन्दे ॥ ३ ॥
 छल्लीवदयावणे छहायदणविबल्लिये समिदभावे । सत्तअयविपमुक्के सत्ताणअयंकरे वन्दे ॥ ५ ॥
 णददमघट्टाणे पणट्टकम्मदण्डसंसारे । परमदुणिट्टिमट्टे अट्टगुणट्टीसरे वन्दे ॥ ६ ॥
 णववंभचेरगुत्त णवणयसवभावजाणगे वन्दे । दसविहधम्मदुई दससंजमसंजुदे वन्दे ॥ ७ ॥
 एयारसंगसुदसायरपारगे वारसंगसुदणि उणे । वारसविहत्तवणिरदे तेरसकिरयापडे वन्दे ॥ ८ ॥
 भूदेसु दयावणणे चउदस चउदस सुगन्थपरिसुद्धे । चउदसपुव्वपगवभे चउदसमलवज्जिदे वन्दे ॥ ९ ॥
 वन्दे चउत्थअत्तादिजावठ्ठममासववणिपडिपुण्णे । वंदे आदावन्ते सुरम्म य अहिसुहट्टिदे सुरे ॥ १० ॥
 बहुविहपडिमट्टाई णसेज्जधीरासणोज्झवासीयं । अणिट्ठु अकुट्टुम्मदीये चत्तदेहे य णमरसांमि ॥ ११ ॥
 ठाणियमौणवदीए अबभोवासी य रुक्खत्तुलीय । धुदकेसमंसु लोमे णिपडियम्ममे य वन्दांमि ॥ १२ ॥
 जल्लवल्लितगत्ते वन्दे कम्ममलकल्लुमपरिसुद्धे । दोहणहणमंसु लोये तवसिरिअरिए णमरसांमि ॥ १३ ॥
 णाणोदयाहिसित्ते सील्लगुणविहूसिये तवसुणन्धे । ववगयरायसुदट्टे सिवगइहणायगे वन्दे ॥ १४ ॥
 उरगतवे दित्ततवे तत्ततवे सहातवे य घोरतवे । वन्दांमि तवमहंते तवसंजमइहिसम्पत्ते ॥ १५ ॥
 आमोसहिएखेलोसहिएजल्लोसहिइय तवसिद्धे । विप्पोसहिए सुववंतहिए वन्दांमि तिविहेण ॥ १६ ॥
 अभयसुहवीरसथी सवधी अक्खीण सहाणसै वन्दे । मणवत्तिवंचंवल्लिक्कायवणिणी य वंदांमि तिविहेण ॥
 वरकुट्टवीयबुद्धी पयाणुसारीयसमिणसोयारे । उगगइहसमन्थे सुत्तत्थविसारादे वन्दे ॥ १८ ॥
 आभिणिबोहियसुदई ओहिणाणमणणाणि सव्वणाणाय । वन्दे जगप्पदीवे पव्वक्खपरोक्खणाणीय ॥ १९ ॥
 आयासततुजलसेट्ठिवारणे जंघचारणे वन्दे । विउव्वणइट्टिहाणे विज्जाहरपणसमणे थ ॥ २० ॥
 गइत्थउरंगुत्तगमणे तहेव फलफुल्लचारणे वन्दे । अल्लुत्तमतथमहंते देवासुरवन्दे वन्दे ॥ २१ ॥
 जियअयजियउवसणगे जियइंदियपरिसहे जियकसाथे । जियरायदोसमोहे जियसुहदुक्खे णमस्सांमि ॥
 एवमए अभित्थुआ अणयारा रायदोसपरिसुद्धा । संघरस वरसमाहिं मज्झवि दुक्खवक्खंधं दित्तु ॥ २२ ॥

इच्छामि भन्ते जोगभत्ति काओवगगे कओ तस्सालोचेओ अट्टाइजजीवदोपुद्धेसु पणगरपक्कम्मभूमिसु आदावणरुक्खमूल ववभो-
 वापठणमोणवीरापचेक्कशक्कुक्कापणवउत्थपरकक्खणादिजोगजुताणं पव्ववाहूणं णिव्वहाल अचेमि पूजेमि वन्दांमि णमंसांमि दुक्खक्खय
 कम्मक्खय वोहिल्लोई सुगइगमण पम्म समाहिरणं जिणगुणवपत्ति होउ मज्झ ॥ २५ ॥

अथ निर्वाणभक्ति पाठः ।

अष्टावयमि उसहो चमशाए वासुपुज जिणणाहो । उज्जन्ते नेमिजिणो पावाए णिव्बुदो महाधीरो ॥ १ ॥
 वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरबन्दिता बुदकिलेसा । सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ २ ॥
 वरदत्तो य वरङ्गो सायरदत्तो य तारवरणयरे । आहुट्टयकोडोओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ३ ॥
 नेमिसामि पलणो संबुकुमारो तहेव अणिकुद्धो । बाहत्तरकोडोओ उज्जन्ते सत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥
 रामसुया वेणिण जणा लाङ्गणरिंदाण पंचकोडोओ । पावागिरिखरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ५ ॥
 पंडुसुआ तिणिणजणा दविडणरिंदाण अट्टकोडोओ । सेत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ६ ॥
 सन्ते जे बलभदा जटुषणरिंदाण अट्टकोडोओ । गजपन्थे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ७ ॥
 रामहनू सुगोओ गवयगवाक्खो य णोलमहाणीलो । णवणवद्धीकोडोओ तुङ्गो गिरिणिबुदे वन्दे ॥ ८ ॥
 णंगाणगकुमारा कोडोपंचदसुणिधरा सहिया । सुवणागिरिखरिंदाणे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ९ ॥
 दहसुहरायस्स सुवा कोडोपंचदसुणिधरा सहिया । रेवाउहयतद्दग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १० ॥
 रेवाणहए तीरे पच्छिमभायमिंम सिद्धवरकूडे । दो चक्की दह कप्पे जाहुट्टयकोडिणिबुदे वन्दे ॥ ११ ॥
 बड्ढवाणीवरणयरे वक्खिणभायमिंम चूलगिरिसिहरे । इंदजीदकुम्भथणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १२ ॥
 पावागिरिखरसिहरे सुवणणभदहसुणिधरा चउरो । चलणाणईतद्दग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १३ ॥
 फलहोडीवरगामे पश्चिमभायमिंम दोणगिरिसिहरे । गुरुत्ताहसुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १४ ॥
 णायकुमारसुणिदो वालि महाबाली चेव अज्जेया । अट्टावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १५ ॥
 अच्चलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेहगिरिसिहरे । आहुट्टयकोडोओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १६ ॥
 वंसत्थलवरणियरे पच्छिमभायमिंम कुन्थुगिरिसिहरे । कुलदेसभूखणमुणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १७ ॥
 जसरहरायस्स सुआ पंचासयाहं कलिं गदेसमिंम । कोडिसिलाकोडिसुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १८ ॥
 पासस्स समवसरणे सहिया थरदत्तसुणिधरा पंच । रिंसिंसेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १९ ॥

इच्छामि भंते परिणिव्वाणभक्ति काओसगो कओ तस्सालोचेओ इममि अववप्पणीए चउरयपमयस्स पच्छिमे भागे आहुट्टयमाचहीणे
 वापचउक्कमिंम सेपकालमिंम पावाए णयरोए कत्तिपमापस्स किण्हचउद्विपिं रत्तीए वादीए णखत्ते पच्चूसे भयवदोमहदि महावीरो वड्ढमाणो
 भिद्दिगदो तीसुवि लोएसु भयणवाधियवाणधितरजोइपिंइ कप्पवाधिय ति चउत्थियहा देवा पपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुंप्फेण दिव्वेण

ध्रुवेण दिव्येण चुण्णेण दिव्येण वारेण दिव्येण पहाणेण निच्चकालं अञ्चति पुञ्जति वंदति गमंभति परिणिव्वाणमहाकक्षाणपुञ्जं करंति अहमवि इहंभंतो तस्य चत्ताइ निच्चकालं अचेमि पूजेमि वदामि गमंभामि परिणिव्वाण महाकक्षाणपुञ्जं करेमि दुक्खकखओ कम्मखओ बोहिलाओ सुगइगमण बभं भमाहिमरणं णिणगुणभंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ तीर्थकरभक्तिः ।

चउवीसं तीरथयरे उल्लहाईवीरपच्छिमे वन्दे । सव्वेसिं सुणिगणहरसिद्धे सिरसा णमंसामि ॥ १ ॥
 ये लोकेप्रसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवांतर्गता । ये समयमवज्जालहेतुमथनाञ्चन्द्रार्कतेजोधिकाः ॥
 ये साधिवद्रसुरापत्तारोगशतैर्गीतप्रणुत्याचिंताः । तान्देवान्धृषभादिवीरचरमानभक्त्या नमस्याम्यहम् ॥ २ ॥
 नाभेयं देवपूज्यं जिनवरभजितं सर्वलोकप्रदीपं । सर्वज्ञं सम्भवाख्यं सुनिगणवृषभ नन्दनं देवदेवम् ॥
 कर्मरिधं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्धं । क्षांतं द्रांतं सुपार्श्वं सकलशशिनभं चंद्रनामानमीडे ॥ ३ ॥
 विख्यातं पुष्पदन्तं भवभयमथन शीतलं लोकनाथं । श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ॥
 मुक्तं द्रान्तेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं सुनींद्रं ।

धर्मं सद्धर्मकेतुं कामदमनिलयं स्तौमि शान्तिं शरण्यम् ॥ ४ ॥
 कुन्धु सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषुचक्रम् ।

मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सोख्याशिसम् ॥
 देवेन्द्राच्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवांतम् ।

पार्श्वं नागेन्द्रवन्द्यं शरणमहमितो षड्भानं च भक्त्या ॥ ५ ॥

इच्छामि भंते चउवीरतित्थयभक्तिकालस्सगो कओ तस्सालचेउं । पंचगहाकक्षाणस्सण्णाणं, अट्टमहापाडिहेरपहियाणं, चउतीर-
 अतिपयविसेपस्सजुत्ताणं, बत्तीरदेविदमणिमउडमथयमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्रहरिचिमुणिजइ अणगारोषगूढाणं, शुइसयपहरस्सणिल्याणं,
 उल्लहाईवीरपच्छिमंगकमहापुरिषाण निच्चकालं अचेमि, पुजेमि, वंदामि, णमंभामि, दुक्खकखओ, कम्मखओ, बोहिलाओ, सुगइममणं,
 भमाहिमरणं, णिणगुणभंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ शान्तिभक्तिपाठः ।

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्पादद्वयं ते प्रजाः । हेतुस्तत्र विचित्रतुःखनिश्चयः संसारघोरारणवः ॥
 अत्यन्तस्फुरदुग्रदिमनिकरव्याकीर्णभूमण्डलो । श्रेष्ठमः कारयतीन्दुपादसल्लिस्च्छायानुरागं रविः ॥ १ ॥

ऋद्धाशीविषदष्टदुर्जयविषड्बालावलीविक्रमो । विद्याभेषजमन्त्रतोयहृद्वनैर्योति प्रशान्तिं यथा ॥
 तद्वत्से चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम् । विधनाः कायविनायकाश्च सहसा शाश्वंत्यहो विस्मयः ॥२॥
 संतप्तोत्तमकांचनक्षितिचरश्रीस्पद्धिगौरद्युते । पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयान्ति क्षयं ॥
 उद्यद्भारकरविस्फुरत्करशतव्याघानिष्कासिता । नानादेहिविलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥ ३ ॥
 त्रैलोक्येश्वरमंगलब्धविजयादृत्यतरौद्रात्मकान् । नानाजन्मशान्तांतरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ॥
 को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोद्गदावानला । स स्याच्चैतव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ॥ ४ ॥
 लोकालोकनिरन्तरप्रविततज्ञानैकसूर्ते विभो ! नानारत्नपिनद्धदण्डरुचिरश्वेतातपन्नय ॥
 त्वत्पादद्वयपूतगीतरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः । दर्पाष्मातमृगेन्द्रभीमनीनदाद्वन्या यथा कुंजराः ॥ ५ ॥
 दिव्यपत्नीनयनाभिरामविपुलश्रीमेरुचूडामणे । भास्वदालदिवाकरद्युतिहर प्राणीष्टभाममंडलम् ॥
 अद्यायाधमचित्यसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम् । सौख्यं त्वच्चरणारविंदयुगलस्तुत्येव संपाप्यते ॥ ६ ॥
 यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयं-स्तावद्धारयतीह पंकजवनं निद्रातिभाश्रमम् ॥
 यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रसादोदय-स्तावज्जीवनिकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ॥ ७ ॥
 शान्ति शान्तिजिनेन्द्र शान्तमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात् ।

संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहव शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ॥

कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो हृष्टिं प्रसन्नां कुरु ।

त्वत्पादद्वय दैवतस्य गदतः शाल्यष्टकं भक्तितः ॥ ८ ॥

शान्तिजिनं शशिनर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रं ।

अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममबुजनेत्रम् ॥

पं वममोप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणेश्च ।

शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ ९ ॥

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुष्टुष्टिर्दुःसुभिरासनयोजनवोषी ।

आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥

ते जगदचिंतशांतिजिनेन्द्र, शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।

सर्वगणाय तु यच्छतु शांति, बल्यमरं पठते परमां च ॥ १० ॥

येभ्यश्चिंता सुकुटकुण्डलहाररत्नैः । शक्नादिभिः सुरगणः स्तुतपदपद्माः ॥

ते मे जिनाः प्रथरवंशजगत्प्रदीपाः । तीर्थकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥ ११ ॥

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानां ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शांति भगवान् जिनेन्द्रः ॥

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धामिर्मिको भूमिपालः ।

काले काले च सम्यग्दर्षतु मयवा, व्याधयो यांतु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां, मासभूजीबलोके ।

जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥ १२ ॥

तदद्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः । सन्तन्यता प्रतपतां सततं स कालः ॥

भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण । रत्नत्रय प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे ॥ १३ ॥

इच्छामि भन्ते शांतिभक्तिकारुण्यगो कओ तस्सालोचेठ । पचमहाकल्याणसम्पणाणं, अठुमहापाडिहेरसहियाणं, चरतीपातिपय-
विसेबसंशुत्ताणं, बतीबदेवेदमणिमठमथयमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्रहरिसिमुणिजदियणगारोवगूढाण, शुहस्यमहस्वघणिलयाणं, लबहाइ-
वीरपण्डिममङ्गलमहापुरिषाणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंभामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, सुगहगणं, समाहिसरणं,
जिणगुणसम्पत्ति होठ मज्झं ।

अथ समाधिभक्तिः ।

स्वात्माभिमुख संवित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुषा । पश्यन्पश्यामि देवत्वां केवलज्ञानचक्षुषा ॥ १ ॥

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः । सद्बृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ॥

सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावनाचात्मतत्त्वे । संपद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ २ ॥

जैनमार्गैरुचिरन्यमार्गनिर्वेगता जिनगुणस्तुतौ मतिः ।

निष्कलंकाधिमलौकिकभाषनाः संभवन्तु मम जन्मजन्मनि ॥ ३ ॥

गुरुसूले यतिनिचिते चैत्यसिद्धांतवाद्धिसद्धोषे । मम भवतु जन्मजन्मनि सन्यसनसमन्वितं मरणम् ॥ ४ ॥

जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिसमाजितम् । जन्ममृत्युजरामूलं हन्यते जिनवन्दनात् ॥ ५ ॥
 आषाढ्याज्जिनदेव भवतः श्रीपादयोः सेवया । सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालोद्ययावद्गतः ॥
 तेषां तस्याः फलमर्थये तदधुना प्राणप्रयाणक्षणे । त्वन्नामप्रतिबद्धवर्णपठने कण्ठोस्त्वकुण्ठो मम ॥ ६ ॥
 तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव परद्वये लोचनम् । तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ ७ ॥
 एकापि समर्थेय जिनभक्तिर्दुर्गतिं निवारयितुम् । पुण्यादि च पूरयितुं दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः ॥ ८ ॥
 पंचसुअ दीवणामे पचम्पिप्रय सायरे जिणे वन्दे । पंच जमोपरणामे पंचम्पिप्रय मन्दरे वन्दे ॥ ९ ॥
 रणत्तयं च वन्दे चञ्चीसजिणे च मञ्जदा वन्दे । पंचगुरूपं वन्दे चारणचरणं सदा वन्दे ॥ १० ॥
 अहमित्यक्षरब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः । सिद्धचक्रस्य सन्दीपं सर्वतः प्रणिदधमहे ॥
 कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादि गुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ११ ॥
 आकृष्टि सुरसम्पदां विदधते मुक्तिश्रियो यद्दयतां । उच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैतनसाम् ॥
 स्तम्भं दुर्गभनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनम् । पाथात्पंचनमस्क्रियाक्षरमयी साराधना देवता ॥ १३ ॥
 अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् । जिनराजपद्माम्भोजस्मरणं शरणं मम ॥ १४ ॥
 अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ १५ ॥
 नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्रये । चीनरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ १६ ॥
 जिने भक्तिजिने भक्तिजिने भक्तिजिने दिने । सदा मेस्तु सदा मेस्तु सदा मेस्तु भवे भवे ॥ १७ ॥
 याचेहं याचेहं जिन तव चरणारविद्योभक्तिम् । याचेहं याचेहं पुनरपि तामेव तामेव ॥ १८ ॥

इच्छामि भंते समग्रहिभक्तिकाउत्सर्गो कञ्चो तस्सालोचेउं । रयणत्तयपरुवपरमप्यञ्जानलक्खणं
 समाहिमत्तीये णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णंसंशामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, वोहिलाहो,
 सुगहगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।



प्रशस्ति ।

दोहा-मंगल श्री अरहंत हैं, मंगल सिद्ध महान । मंगल आचारज सुधी, पाठक मुनि गुण-खान ॥ १ ॥
 अवध सुलक्ष्मणपुर जनम, अग्रवाल शुभ वंश । मंगलसेन सुवर पिता, आतम जानन हंश ॥ २ ॥
 पिता जु मकलनलाल हैं, गृह प्रबन्धमें लीन । तृतीय पुत्र यह दास है, नाम जु "शीतल" दीन ॥ ३ ॥
 विक्रम उन्निस पैतिसे, जन्म सुकान्तिक माल । षट्सि वय घर तज करो, श्रावकव्रत अभ्यास ॥ ४ ॥
 सम्वत् उन्निस असी चउ, वर्षाकाल मंझार । नगर खंडवा वास किया, समताभाव सम्हार ॥ ५ ॥
 पोड़वाड़ पंचास घर, जण्डेलवाल जु बीश । धर्म दिगम्बर साधते, नमें चरण जिन ईश ॥ ६ ॥
 मन्दिर एक सुहावना, विद्याशाला एक । औषधिशाला एक है, शाला धर्म जु एक ॥ ७ ॥
 सेठ पोमडू साह हैं, चम्पालाल धनेश । धन्नालाल सु सेठ हैं, रामा साह सुवेश ॥ ८ ॥
 बुन्नीलाल सु चौधरी, पन्नालाल बखान । दशरथ मन्नालाल सा, श्री घनश्याम सुजान ॥ ९ ॥
 भागचन्द सा बुन्नी सा, और हजारीलाल । मूलचन्दजी सूरजमल, सुधी कन्हैयालाल ॥ १० ॥
 इत्यादिक धर्मीनकी, संगति शुभ सुखदाय । सेठ जु सुन्दरलालकी, बाग सु आश्रय दाय ॥ ११ ॥
 बार बार विनती करी, अजितप्रसाद बकील । करहु प्रतिष्ठा मंग सुगम, धर्म सुजलमय झील ॥ १२ ॥
 जैनी जन दुखिया अती, रीति न जाने भेद । तातें हम उद्यम किया, मदद परम गुरु वेद ॥ १३ ॥
 देख प्रतिष्ठा पाठ त्रय, श्री जयसेन सुनीश । पंडित आशाधर जु कृत, नेमचन्द बुध ईश ॥ १४ ॥
 श्री जिनसेन सुनीश कृत, आदिपुराण विचार । आदि पुरुष जीवन्चरित, पंचकल्याणक सार ॥ १५ ॥
 तदनुसार रचना करी, अल्पबुद्धि परमाण । धर्म प्रभावना हेतु ही सब जनका हित मान ॥ १६ ॥
 ज्ञान बुद्धि अति अल्प है, साहस बहुत कराय । कार्य कठिन पूरा हुआ, श्रीजिन चरण सहाय ॥ १७ ॥
 आश्विन कृष्ण नवमिकी, सोमवार शुभ वार । ग्रन्थ सभापत यह भया, हो सुवि मंगलकार ॥ १८ ॥

नित्यनियम पूजा ।

देवशास्त्रगुरुपूजा ।

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु । गमो अरहंताणं, गमो सिद्धाणं, गमो आथरीयाणं, गमो उद्वज्जायाणं, गमो लोए पव्वपाहूणं । ॐ अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः । (यहाँ पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)
 चत्वारि मंगलं-अरहन्तमंगलं सिद्धमंगलं, साहुमंगलं, केवलपणणतो धम्मो मंगलं । चत्वारि लोगुत्तमा,
 अरहन्तलोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहुलोगुत्तमा, केवलपणणतो धम्मो लोगुत्तमा । चत्वारि-
 सरणं पव्वज्जामि-अरहन्तसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि,
 केवलपणणत्तो धम्मो सरण पव्वज्जामि ।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा । पुष्पांजलि ।

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोपि वा । ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥
 अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥ २ ॥
 अपराजितमन्त्रोऽयं, सर्वचिन्निविनाशनः । मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥
 एसो पंचणमोयारो, सब्वपावपणासणो । मंगलाणं च सब्वेत्ति, पढमं होइ मंगलं ॥ ४ ॥
 अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचक परमेष्ठिनः । सिद्धचक्रस्य सद्बोज सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥
 कमौष्टकविनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादिगुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥

पुष्पांजलि ।

(यदि अवकाश हो, तो यहाँपर बहस्रनाम पढकर दश अर्घ देना चाहिये, अथवा नीचेका श्लोक पढ़ एक अर्घ चढ़ाना चाहिए)
 उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्वरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः । धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृह् जिननाथमहं यजे ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनबहस्रनामेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्प्रयेशं, स्याद्वाक्नायकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।
 श्रीमूलसंघसुहृशां सुकृतैकहेतु-जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यवाधि ॥ ८ ॥
 स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय, स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।
 स्वस्ति प्रकाशसहजोज्जितहृदयाय, स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥ ९ ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाह्लादाय, स्वस्ति स्वभावंपरंभावंविभासकाय ।
 स्वस्ति त्रिलोकवितैतकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिकालसकलायतवितुताय ॥ १० ॥
 द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकायः ।
 आलम्बनानि विविधान्यबलभ्य बलगन्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥ ११ ॥
 अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि, वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
 अस्मिन् उबलद्विमलकेशलबोधवह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥ १२ ॥

(पुष्पाजलि क्षेपण कराना)

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः । श्रीसुमतिः
 स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः । श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचंद्रप्रभः । श्रीपुष्पदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः ।
 श्रीश्रेयांस्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः । श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनंतः । श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशांतिः ।
 श्रीकृन्धुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः । श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुवतः । श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति
 श्रीनेमिनाथः । श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रावर्द्धमानः ।

(पुष्पाजलि क्षेपण कराना)

(आगे प्रत्येक श्लोकके अन्तमें पुष्पाजलि क्षेपण कराना चाहिये ।)

नित्याप्रकम्पाद्भुवनकेवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः ।

दिव्याधधिज्ञानबलप्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १ ॥

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं, संभित्तुंश्रोतुपदानुसारि ।

चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ २ ॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वावनघ्राणविलोकनानि ।

दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्ब्रह्मन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ३ ॥

प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येकबुद्ध्या दशसर्वपूर्वैः ।

प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ४ ॥

जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाहः ।

नमोऽङ्गणस्वैरबिहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ५ ॥
अणिमि दशाः कुशला महिम्नि, लघिमि शक्ताः कृतिनो गरिम्नि ।

मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ६ ॥
सकामरूपित्ववशित्वमैश्वर्यं, प्राकाम्यमन्तद्धिमथासिमासाः ।

तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ७ ॥
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः ।

ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ८ ॥
आमर्षं सर्वौषधयस्तथाशीर्षिषंविषा दृष्टिविषविषाश्च ।

सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ९ ॥

क्षीरं स्रवन्तोऽन्न घृतं स्रवन्तो, मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः ।

अक्षीणं वासुमहानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १० ॥

इति स्वस्तिमंगलविधानं ।

सार्धः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसन्तापहतां, त्रैलोक्याक्रान्तकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्वीतिकर्मप्रणाशाः ।
श्रीमान्निर्षाणसम्पद्भारयुवतिकरालीढकण्ठः सुकण्ठैर्देवेन्द्रैर्बन्धपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकल्याणपूजाः ॥ १ ॥
जय जय जय श्री सत्कान्तिप्रभो जगतां पते ! जय जय भवानेत्र स्वामी भवाम्भवासि मज्जताम् ।
जय जय महामोहध्वान्तप्रभातकृतेऽर्चनम् जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवीष्ट । (इत्याह्वानम्) ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
(इति स्थापनम्) ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र मम बन्निहितो भव भव । वषट् । (इति बन्निधिकरणम्)

देवि श्री श्रुतदेवते भगवति त्वपादपंकेदह-द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्या मया प्रार्थते ।

मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा प्राहि मां, हंशनेन मयि प्रसीद भवतीं सम्पूजयामोऽधुना ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जिनमुख दसूतद्वादशागश्रुतज्ञान ! अत्र अवतर अ-तर संवीष्ट । ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशागश्रुतज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ
ठः ठः । ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशागश्रुतज्ञान ! अत्र मम बन्निहितो भव भव वषट् ।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः । तपःप्राप्तपतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय सर्वज्ञधुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवीषट् । ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वज्ञधुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ
ठः ठः । ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वज्ञधुसमूह ! अत्र मम वनिहितो भव भव वषट् ।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रबन्धान्, शुभ्रभूतपदान् शोभितसारचर्णान् ।

दुग्धाब्धिस्संपर्धिगुणैर्जलोद्यैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽन्तान्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं वम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वज्ञधुस्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताम्यत्त्रिलोकोदरमध्यपतिं सप्तसत्रयाऽहितहारिवाक्यान् ।

श्रीचन्द्रनैर्गन्धविलुब्धभृंगैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽन्तान्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोष हिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने सभारतापविनाशनाय चन्दनं नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय संभारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं वम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वज्ञधुस्यः संभारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपे०

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राड्यतरीन् सुभक्त्या ।

दीर्घाक्षतर्गैर्घबलाक्षतौर्घैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽन्तान्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं वम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वज्ञधुस्यऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

चिनीत भव्याब्जविधोषसूर्यान्वयान् सुचरयो कथनैकधुर्यान् ।

कुन्दारचिन्दप्रसूवैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽन्तान्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं वम्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वज्ञधुस्यः कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

कुदर्पकन्दर्पविसर्पसर्पस्रस्रनिर्णाशनैर्नतेयान् ।

प्राड्याड्यसारैश्चरुभी रसाढ्ये जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन्यजेऽहम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने क्षुबारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सभ्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यः क्षुबारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तोद्यमानधीकृतविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।

दीपैः कनककांचनभाजनस्यैजिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सभ्यदर्शनज्ञानसम्बन्धचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि० ।

दुष्टाष्टकर्मन्धनपुष्टजालसंधूपने आसुरधूमकेतून् ।

धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगन्धैजिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपाम् ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सभ्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान्, कुवादिवादाऽऽखलितप्रभान् ।

फलैरलं मोक्षफलाभिसारैजिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सभ्यदर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्धारिगन्धाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।

फलैर्विचित्रैर्घनपूणययोगान्, जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणबहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि० ।
 ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 ॐ ह्रीं सभ्यदर्शनचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वपाधुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते,
त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनासुधारयन्तो नराः ।

पुण्यधाव्या मुनिराजकीर्तिबहिता भूत्वा तपोभूषणा-

स्ते भव्याः सकलाबबोधरुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥ १० ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्प क्षेपण कराना)

दृषभोऽजितनामा च, सम्भवश्चाभिनन्दनः । सुमतिः पद्मभासश्च, सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥

चन्द्राभः पुबन्तश्च, शीतलो भगवान्मुनिः । श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च, विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥

अनन्तो धर्मनाथा च, शांतिः कुन्थुर्जिनोत्तमः । अरश्च मल्लिनाथश्च, सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥

हरिचंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः । धंशतोपसर्गदैत्यारिः, पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥

कर्मर्मान्तकृन्महावीरः, सिद्धार्थकुलम्भवः । एते सुरासुरौघेण, पूजिता विमलत्विवः ॥ ५ ॥

पूजिता भरताद्येश्च, भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः । चतुर्विधस्य संवस्य शांतिं, कुर्वतु शाश्वतीम् ॥ ६ ॥

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे । सन्धक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारम् ॥ ७ ॥ (पुष्पांजलि)

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे । सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ८ ॥ (पुष्पांजलि)

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे । चारिभ्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ९ ॥ (पुष्पांजलि)

अथ देवजयमाला प्राकृत ।

वत्ताणुदाणे जणघणुदाणे, पद्मपोसिउ तुहू खत्तवरु ।

तुहू चरणविहाणे केवलणाणं, तुहू परमपणउ परमपरु ॥ १ ॥

जय सिरह रिसीसर णमियपाय, जय अजिय जियंगमरोसराय ।

जय सम्भव सम्भवकयविओय, जय अहिणंदण णंदिय पओय ॥ २ ॥

जय सुमइ सुमइ सम्मययास, जय पउमपपह पउमाणिवास ।

जय जयहि सुपास सुपासगत, जय चन्दपपह चन्दाहवत्त ॥ ३ ॥

जय पुफ्फयन्त दन्तंतरंग, जय सीयल सीयलबयणभंग ।

जय सेय सेयकिरणोहसुज, जय वासुपुज पुज्जाणपुज ॥ ४ ॥

जय विमल विगलगुणसेढिठाण, जयं जयहि अणंताणंतणाण ।

जय धम्म धम्मतिथयर सन्त, जय सांति सांति विहियावत्त ॥ ५ ॥

जय कुन्थुं कुन्थुंपहुअंगिसदय, जय अर अर माहर विहियसमय ।

जय नल्लि मल्लिआदामगन्ध, जय सुणिसुव्वय सुव्वयणिवन्ध ॥ ६ ॥

जय णमि णमियामरणियरसामि, जय णे.म धम्मरहक्कणेमि ।

जय पास पाखळिदणकिवाण, जय वड्डमाण जस वड्डमाण ॥ ७ ॥

धत्ता ।

इह जाणिय णामहिं, दुरियचिरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावल्लिहिं ।

अणहणहिं अणाहहिं, समियकुवाहहिं, पणविमि अरहन्तावल्लिहिं ॥ १ ॥

ॐ हीं वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो महार्घं निर्वर्गामीति स्वाहा ।

अथ शास्त्रजयमाला प्राकृत ।

सम्पद् सुहकारण, कम्मविधारण, भवसमुद्गतारणतरणं ।

जिणवाणि णमस्समि, मत्तपयस्समि, सग्गमोक्खलंगमकरणम् ॥ १ ॥

जिणंदसुहाओ विणिग्गयत्तार, गणिंदविगुम्भिकय गन्थपयार ।

तिलोयहिमण्डण धम्मइ खाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ २ ॥

अवगगहईहअणायजुएहि, सुधारणभेयहिं तिणिणसएहि ।

मई छत्तीस बहुणसुहाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ३ ॥

सुदं पुण दोणिण अपेयपयार, सुवारहभेय जगत्तयसार ।

सुरिंदणरिंदसमुच्चिओ जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ४ ॥

जिणिंदगणिंदणरिंदह रिद्धि, पयासइ पुणपुगकिउलद्धि ।

णिउग्गु पहिल्लउ एहु विघाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ५ ॥

जु लोयअलोयह जुत्ति जणेह, जु तिणिणवि कालसरूय भणेह ।

चउग्गइलक्खण दुज्जउ जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ६ ॥

प्रतिष्ठा-

॥२१६॥

जिनिंदचरित्तविचित्त सुणेइ, सुसाधयधम्मह जुत्ति जणेइ ।
 निउगुबित्तिल्लउ इत्थु वियाणि, सया पणमामि जिनिंदह वाणि ॥ ७ ॥
 सुजीवअजीवह तच्चह चक्खु, सुपुण्ण विपाव विबन्ध विसुक्खु ।
 चउत्थुणिउग्गु विआसिय णाणि, सया पणमामि जिनिंदह वाणि ॥ ८ ॥
 तिभेयहि ओहि चिणाण विचित्तु, चउत्थु रिजोधिउल्लं षयउत्तु ।
 सुखाइय केवलणाण वियाणो, सया पणमामि जिनिंदह वाणि ॥ ९ ॥
 जिनिंदह णाणु जगत्तयभाणु, महातमणासिय सुक्खणिहाणु ।
 पयच्चहुअलिआरेण वियाणि, सया पणमामि जिनिंदह वाणि ॥ १० ॥
 पयाणि सुधारहकोडिसयेण, सुक्खतिरासिय जुत्ति भरेण ।
 महसअट्टावण पंचवियाणि, सया पणमामि जिनिंदह वाणि ॥ ११ ॥
 इक्कावण कोडउ लक्ख अठेय, सहस चुलसीदिसया छक्केय ।
 सटाइगचीसह गंथपयाणि, सया पणमामि जिनिंदह वाणि ॥ १२ ॥

वत्ता ।

इह जिणवरवाणि विसुद्धमई, जो भवियण णियमण धरई ।
 सो सुरणरिंदसंपय लहई, केवलणाण वि उत्तरई ॥ १३ ॥

ॐ हीं जिनमुखे द्भूतस्याद्वादनयगभितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ गुरुजयमाला प्राकृत ।

भवियह भवतारण, सोलह कारण, अल्लवि तिरथयरत्तणहं ।
 तथ कम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महडवयहं ॥ १ ॥
 वन्दामि महारिसि सीलवन्त, पंचेदियसंजम जोगजुत्त ।
 जे ग्यारह अंगह अणुसरंति, जे चउदहपुडवह सुणि युणंति ॥ २ ॥
 पादाणुसारवर कुट्टबुद्धि, उट्ठण्णजाइ आयासरिद्धि ।
 जे प्राणहारी तोरणीय, जेरुक्खमूल आतावणीय ॥ ३ ॥

जे मोगिधाय बन्दाहणीय, जे जरथत्यथणि णिवासणीय ।

जे पंचमहव्यय धरणधीर, जे समिद्विगुत्तिपालणहि वीर ॥ ४ ॥

जे बडूढहि देह विरत्तचित्त, जे रायरोसभयमोहवत्त ।

जे कुगइहि संबरु विगयलोह, जे दुरियविणासणकामकोह ॥ ५ ॥

जे जल्ल मल्लण लित्त गत्त, आरंभ परिग्गह जे विरत्त ।

जे तिण्णकाल बाहर गमंति, छट्ठम दसमउ तउचरंति ॥ ६ ॥

जे इक्क गास दुर गास लिति, जे गीरसभोयण रइ करंति ।

ते सुणिवर बंदुं ठियमसाण, जे कम्म इहइवरसुक्कसाण ॥ ७ ॥

बारह विह संजम जे धरंति, जे चारिउ विकहा परिहरंति ।

बावीस परीसह जे सहंति, संसारमहणउ ते तरंति ॥ ८ ॥

जे धम्मबुद्ध महियलि थुणंति, जे काउस्सग्गो णिस गमंति ।

जे सिद्धबिलासणि अहिलसंति, जे पक्खमास आहार लिति ॥ ९ ॥

गोदूहण जे वीरासणीय, जे धणुह सेज बज्जासणीय ।

जे तववलेण आयास जंति, जे गिरिगुहकन्दर विवर थंति ॥ १० ॥

जे सत्तुमित्त समभावचित्त, ते सुणिवर बंदुं दिढवरित्त ।

चउवीसह गंथह जे विरत्त, ते सुणिवर बंदु जगपचित्त ॥ ११ ॥

जे सुञ्झाणिञ्जा एकचित्त, थन्दामि महारिसि मोक्खपत्त ।

रयणत्तरंजिय सुद्ध भाव, ते सुणिवर बंदुं ठिदिसहाव ॥ १२ ॥

वत्ता ।

जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धबधूअणुराईया ।

रयणत्तरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिवर मह झाईया ॥ १३ ॥

ॐ ही बम्परदर्शनघारिन्नादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायवर्षाधुभ्यो महाईर्ष निर्बपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ सिद्धपूजा ।

ऊर्ध्वाधोरयुतं सचिन्दुसपरं, ब्रह्मशरावेष्टितं, वर्णाश्रितदिग्गताम्बुजदलं, तत्संधितत्वान्वितं ।

अंतःपत्रतटेऽवनाहनयुतं, हींकारसंवेष्टितं, देव ध्यायति यः स सुक्तिसुभगो वैरीभक्कण्ठीरवः ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अन्न अवतर अवतर । संबौषट् । ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अन्न तिष्ठ २
ठः ठः । ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अन्न मम वनिद्धितो भव भव वषट् ।

निरस्तकर्मसम्बन्धं, सुक्ष्मं नित्यं निरामयम् । बंदेऽहं परब्राह्मणसमूर्तमनुपद्रवम् ॥१॥ सिद्धयन्त्रकी स्थापना ।

सिद्धोनिवासमनुगं परब्राह्मणस्यं, हीनादिभावरहितं भववीतकायम् ।

रेषापगावरक्षरो-यशुनोद्भवानां, नीरैर्यजे कलशगैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आनन्दकन्दजनकं घनकर्मसुक्तं, सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतम् ।

सौरभ्यवासितासुबं हरिचन्दनानां, गन्धैर्यजे परिमलैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने सभारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वाधगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं, सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् ।

सौगन्ध्यशालिषनशालिषराक्षतानां, पुंजैर्यजे शशानिभैर्धरसिद्धचक्रं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपद्रप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

नित्यं स्वदेहपरिष्ठाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।

मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभतभैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।

ऊर्ध्वस्रवभाषगमनं सुमनोव्यपेतं, ब्रह्मादिधीजसहितं गगनावभासम् ।

क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै-नित्यं यजे चक्रवैर्धरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

आतंकशोकभंयरोगमदप्रशांतं, निर्द्वन्द्वभाषघरणं महिमानिवेशम् ।

कर्पूरवर्तिषट्पिः कनकावदातै-र्दीपैर्यजे रुचिर्धरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपारमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पद्मनसमस्तसुवनं युगपन्नितानं, त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम् ।

सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां, धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टक्रमदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धासुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रैर्-धैर्यं शिवं सकलभव्यजनैः सुवन्द्यम् ।

नारिङ्गपुङ्गवकदलीफलनारिकेलैः, सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपारमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः, संगं वरं चन्दनं, पुष्पौषं विमलं स्रद्धक्षतचयं, रम्यं वरुं दीपकं ।

धूपं गन्धयुतं कदांमि विविधं, श्रेष्ठं फलं लब्धये, सिद्धानां गुणपत्कमाय विमलं, सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्सरूपं, सुक्ष्मस्वभावपरमं यद्नन्तवीर्यम् ।

कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं, वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयश्रणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं, यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थकराः ।

सत्सम्पत्त्वविबोधवीर्यविशदाऽव्याधाद्यैर्गुणैर्-युक्तांस्तानिह तोष्टृभीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ११ ॥

पुष्पाञ्जलि ।

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस ।

सुधाम विबोधनिधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥

विदूरितसंस्तभानिरंग, सलामृतपूरित देव विसङ्ग ।

अपन्ध कषायविहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ २ ॥

निवारिततुष्कृतकर्मविपाश, सदाफलकेवलक्रेलनिवास ।

भवोदधिपारग शांत विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ३ ॥

अनन्तसुखामृतसागर धीर, कलङ्करजोमलभूरिसमीर ।

विखण्डितकाम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥
विकारावर्जित तर्जितशोक, विबोधसुनेत्रविलोकितलोक ।

विहार विराव विरङ्ग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥
रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ।

सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥
नराभरवन्दित निर्मलभाव, अनन्तसुनीश्वरपूज्य विहाव ।

सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ७ ॥
विदम्भ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परापरशङ्कर सार वितन्द्र ।

विक्रोप विरूप विशङ्क विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ८ ॥
जरामरणोद्धत वातविहार, विचितित निर्भल निरहंकार ।

अचित्यचरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ९ ॥
विषर्ण विगन्धविमान बिलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ ।

अनाकुल केषल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १० ॥
वसा-असमसमयसारं वारुचैतन्यचिह्नं, परपरणतिमुक्तं पद्मनन्दीन्द्रबन्धम् ।

निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन्यो मदार्षं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्लुब्ध-अविनाशी अविकार परमरसवाम हो, समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ।

शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो, जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥ १ ॥

ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबै दहे, नित्य निरञ्जनदेव सरूपी है रहे ।

ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिकें, सो परमात्म सिद्ध नमूं सिर नायकें ॥ २ ॥

दोहा-अविचलज्ञानप्रकाशते, गुण अनन्तकी खान । ध्यान धरे सौं पाइए, परमसिद्ध भगवान् ॥ ३ ॥

श्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलि)

अथ शान्तिपाठः ।

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहना चाहिये ।)
दोषकवृत्तम् ।

शान्तिजिनं शशिनिसर्मलवक्षत्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।

अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥
पंचमसौप्तिसतचक्रवराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।

शान्तिकर गणशान्तिमभीष्टुः, षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषी ।

आतापवारणवामरयुग्मे, यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥
तं जगदचित्तशान्तिजिनेन्द्रं, शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।

सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं, मलयकरं पठते परमां च ॥ ४ ॥
वसन्ततिलका-येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः, शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ।

ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्पदीपास्तीर्थकराः सततशान्तिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥
इन्द्रवज्रा-संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥
स्रग्वरावृत्तप्र-क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्, धार्मिको भूमिपालः ।

काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा, व्याघयो यांतु नाशम् ॥

कुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां, मासमभ्यूजीवलोके । जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥७॥
अनुष्टुप्-प्रध्वस्तघातिकर्माणः, केषलज्ञानभास्कराः । कुर्वन्तु जगतः शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वरा ॥ ८ ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्टप्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिभुक्तिः संगतिः सर्वदाथैः, सद्दृष्टानां गुणगणकथा दोषवाधे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे, सम्पद्यतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ९ ॥

आर्थावृत्तम् ।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् । तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ १० ॥
 अक्खरपयत्थहीणं सत्ताहीणं च ज मए भणियं । नं खमउ णाणदेय य मउझवि दुःखल्लवखयं दितु ॥ ११ ॥
 दुःखल्लखओ कम्मसखओ समाहिअरणं च बोहिला होय । मम होउ जगतत्थन्धव तव जिणवर चरणसरणेण ॥ १२ ॥
 अत्रिअवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानन्दककारण कुरुच्च । सधि किंकरेअ करुणां यथा तथा जायते सुक्तिः ॥ १३ ॥
 निर्बिणोहं नितरामहंन ! षडुदुक्खया भवस्थित्या । अपुन भवाय भवहर ! कुरु करुणामन्न मयि दीने ॥ १४ ॥
 उद्धर मां पतितमतो धिषमादु भवकूपतः कृपां कृत्वा । अहंल्लसुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्बन्धि ॥ १५ ॥
 त्थं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं । मोहरिपुदलितमानं फूत्कारं तव पुरः कुर्वे ॥ १६ ॥
 ग्रामपतेरपि करुणा, वरेण केनाप्युपयते पुंसि । जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! सधि खलु कर्मभिः प्रहते ॥ १७ ॥
 अपहर मम जन्म दयां कृत्वेत्येकवचसि वक्तव्ये । तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वं ॥ १८ ॥
 तव जिनवर ! चरणाब्जयुगं, करुणाभृत्तशीतलं यावत् । संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥ १९ ॥
 जगदेकशरण ! भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघा । किं बहूना ? कुरु करुणामन्न जने शरणमापन्ने ॥ २० ॥

पुष्पांजलि ।

अथ विसर्जनम् ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि, शास्त्रोक्तं न कृतं मया । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु, त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
 आह्वानं नैव जानामि, नैव जानामि पूजनं । विसर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
 मन्त्रश्रीनं क्रियाहीनं, द्रव्यश्रीनं तथैव च । तत्सर्वं क्षम्यतां देव, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
 आहूता ये पुरा देवा, लब्धभागा यथाक्रमं । ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या, सर्वे यान्तु यथास्थितिं ॥ ४ ॥

इति शान्तिपाठः ।

भाषास्तुतिपाठः ।

तुम तरणतारण भव निवारण, भविकमन आनन्दनो ।

श्रीनाभिनन्दन जगत वन्दन, आदिनाथ निरंजनो ॥ १ ॥

तुम आदिनाथ अनादि सेऊँ, सेय पदपूजा करूँ ।

कैलाहगिरिपर रिषभजिनवर, पद कमल हिरदे धरूँ ॥ २ ॥
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली ।

यह विषद सुनकर सरन आयो, कृपा कीजे नायजी ॥ ३ ॥
तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलच्छन, चन्द्रपुरि परमेश्वरो ।

महासैननन्दन, जगतवन्दन, वन्दनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥
तुम शांति पाँच कल्याण पूजो, शुद्धमनवचकायजू ।

दुभिक्ष चोरो पापनाशन, विघन जाय पलायजू ॥ ५ ॥
तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमलविक्राशनो ।

श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥
जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसैन्या वश करी ।

चारित्र्य चढि भये दूल्ह, जाय शिबरमणी धरी ॥ ७ ॥
कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कण्ठ शठ निर्भद कियो ।

अश्वसैननन्दन जगतवन्दन, सकलसंघ मंगल कियो ॥ ८ ॥
जिन घरी बालकपणे दीक्षा, कमठमानविदारकै ।

श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमो शिर धारकै ॥ ९ ॥
तुम कर्मघाता मोखदाता, दीन जानि दया करो ।

सिद्धार्थनन्दन जगतवन्दन महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥
छत्र तीन सोहैं सुर नृ मोहैं, वीनती अवधारिये ।

कर जोडि सेवक वीनवै प्रसु, आवागमन निवारिये ॥ ११ ॥
अब होउ भव भव स्वामी मेरे, मैं सदा सेवक रह्यो ।

कर जोडु यो वरदान मांगों, मोक्षफल जावत लह्यो ॥ १२ ॥

जो एकमाहीं एक राजै, एकमाहीं अनेकनो ।

इक अनेककी नहीं संख्या, नमों सिद्ध निरंजनो ॥ १३ ॥

चोपाई—मैं तुम चरणकमलगुणगाथ, बहुविध भक्ति करी मन लाय ।

जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ॥ १४ ॥

कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय ।

बारबार मैं विनती करूं, तुम सेयें भवसागर तरूं ॥ १५ ॥

नाम लेत सब दुख भिटजाय, तुम दर्शन देखा प्रभु आय ।

तुम हो प्रभु देवनके देव, मैं तो करूं चरण तब सेव ॥ १६ ॥

मैं आयो पूजनके काज, मेरो जन्म सफल थयो आज ।

पूजा करके नवाऊं शीश. सुझ अथराध क्षमहु जगदीश ॥ १७ ॥

दोहा—सुख देना दुख सेटना, यही तुम्हारी वान ।

मो गरीबकी वीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥ १८ ॥

दर्शन करते देवका, आदि मध्य अवसान ।

स्वर्गनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥ १९ ॥

जैसी महिमा तुमविषै, और धरै नहिं कोय ।

जो सूरजमें ज्योति है, तारनमें नहिं सोय ॥ २० ॥

नाथ तिहारे नामतै, अघ छिनमाहिं पलाय ।

ज्यों दिनकर परकाशतै, अन्धकार विनशाय ॥ २१ ॥

बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान ।

पूजाविधि जानूं नहीं, शरण राखि भगवान ॥ २२ ॥



